

मैथिली नाट्य-समीक्षा / साहित्यिक अध्ययन



नित नवल

कुणाल

नाटक • लोकनाट्य • रंगमञ्च • समीक्षा

गजेन्द्र ठाकुर

सम्पादन : विदेह • २०२६

नित नवल कुणाल

कुणालक साहित्य, लोकनाट्य आ रंगचेतनाक समेकित आलोचनात्मक अध्ययन



गजेन्द्र ठाकुर

सम्पादक : विदेह — प्रथम मैथिली पाक्षिक ई-पत्रिका

२०२६

प्रकाशन-विवरण

नित नवल कुणाल

लेखक : गजेन्द्र ठाकुर

सम्पादक : विदेह — प्रथम मैथिली पाक्षिक ई-पत्रिका

© गजेन्द्र ठाकुर / प्रीति ठाकुर, २०२६

सर्वाधिकार सुरक्षित। लेखकक लिखित अनुमतिक बिना एहि पुस्तकक कोनो अंशक पुनर्मुद्रण वा व्यावसायिक पुनर्प्रकाशन नहि कएल जाए। उद्धरण आ शैक्षिक उपयोग प्रचलित सन्दर्भ-परम्पराक अनुसार कएल जा सकैत अछि।

समीक्षाधीन प्रमुख कृति : “कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोटा नाटक”, “विद्यापतिक १०० पद : जुवती भए जनमए जनु कोइ”, आ “रंगायन”।

मुद्रण-विन्यास : ६ × ९ इञ्च

अनुक्रमणिका

अध्याय

१ कुणालक नाट्य-संसार : लोकनाट्य, शास्त्र आ समीक्षा.....	4
२ चालिस चोर आ गोनू झा उर्फ ज्ञान झाक खिस्सा.....	22
३ बिदापत : लोक आ शास्त्रक रंगसंवाद.....	31
४ कुसमा-सलहेस : लोकगाथा आ जनचेतना.....	40
५ प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!.....	49
६ विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह.....	58
७ प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार.....	66
८ प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र.....	75
९ विद्यापतिक १०० पद : जुवती भए जनमए जनु कोइ.....	83
१० रंगायन : मैथिली रंगचेतनाक आलोचनात्मक अध्ययन.....	114

विस्तृत ग्रन्थसूची.....	127
-------------------------	-----

नवम अध्यायमे विद्यापतिक सभ १०० पदक स्वतन्त्र विवेचन आ पदवार पृष्ठ-सूची; दशम अध्यायमे “रंगायन”क सभ ४५ प्रविष्टिक समीक्षा आ आलेख-सूची संकलित अछि।

अध्याय १

कुणालक नाट्य-संसार : लोकनाट्य, शास्त्र आ समीक्षा

“कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोट नाटक”क समग्र अध्ययन

१. प्रास्ताविक : संग्रहक परिचय आ प्रकाशन-वृत्त

कुणालक “कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोट नाटक” समकालीन मैथिली नाट्य-साहित्यक एक एहन संग्रह थिक जे अपना मूल अंतर्वस्तु आ रूप-विधान, दुनू दृष्टिसँ, मंच-केन्द्रित अछि- अर्थात ई कोनो ‘पाठ-नाटक’ (पढ़बाक लेल लिखल नाटक) नहि, अपितु बेर-बेर मंचित, परीक्षित आ परिमार्जित प्रयोग-सिद्ध नाटकक संकलन थिक। संग्रहक प्रकाशकीय सूचना एहि बातक साक्ष्य दैत अछि- सातो नाटक पहिने पटनाक विद्यापति भवनमे मंचित भेल आ तकर बाद ‘भंगिमा’ तथा ‘अंतिका’ सन पत्रिकामे प्रकाशित भेल। यह कारण थिक जे एहि संग्रहक समीक्षा करैत काल मात्र ‘पाठ’क विवेचन पर्याप्त नहि; एकर रंगमंचीय सम्भावना (theatricality / मंचनीयता) सेहो आलोचनाक केन्द्रमे आबि जाइत अछि।

संग्रहक समर्पण-पृष्ठ अपनेमे एक नाट्य-घोषणापत्र थिक- “गाम-गाम मे नाटक (‘नाच’) कर’वला ज्ञात-अज्ञात लोक आ कलाकार लोकनि आ ‘भंगिमा’क विश्वकर्मा जे. ब्रह्मानंद केँ”। ई समर्पण कुणालक समस्त नाट्य-दृष्टिक बीज-वाक्य थिक। एक दिस ओ अनाम ग्रामीण ‘नाच’-कलाकार लोकनिकेँ नमन करैत छथि- सएह परम्परा जे शताब्दीसँ मिथिलाक माटिमे जीवित अछि मुदा संस्थागत साहित्येतिहासमे जकर नाम अनुपस्थित अछि; आ दोसर दिस ओ अपन रंगमंडली ‘भंगिमा’क प्रति आभार व्यक्त करैत छथि, जकर अनेक कलाकार- जेना जे. ब्रह्मानंद- स्वयं एहि नाटक सभक मूल मंचनमे सहयोगी रहलाह। आवरण-चित्र विनय अंबरक थिक, जाहिमे मिथिला-शैलीक लोकचित्रण-परम्पराक अनुगूँज स्पष्ट अछि।

२. संग्रहक स्थापत्य : दू वृत्तक रचना-योजना

सातो नाटककेँ एकठाम राखि देखला पर ओ दू स्पष्ट वृत्तमे विभाजित भ’ जाइत अछि- यद्यपि लेखक एहि विभाजनकेँ कतहु अभिधामे नहि कहैत छथि, तथापि रूप, स्रोत आ कालक्रमक आधार पर ई विभाजन स्वयं उद्घाटित भ’ जाइत अछि।

(क) लोकनाट्य-मूलक त्रयी- ‘चालिस चोर आ गोनू झा’, ‘बिदापत’ आ शीर्षक-नाटक ‘कुसमा-सलहेस’। ई तीनू मिथिलाक अपन लोक-आख्यान आ लोक-रंगमंच (‘नाच’, ‘सलहेस नाच’, ‘बिदापत नाच’) पर आधारित विस्तृत, बहु-पात्रीय, गीत-नृत्य-बहुल नाटक थिक। ई तीनू १९९०सँ २००६ धरिक रचना-काल देखबैत अछि।

(ख) प्रेम-चतुष्टय- ‘प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!’, ‘विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह’, ‘प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार’ आ ‘प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र’। ई चारू अपेक्षाकृत लघु, मितव्ययी पात्र-विधानवला, पौराणिक/आख्यानमूलक नाटिका थिक, जे २०१३-२०१४ मे ‘अंतिका’मे प्रकाशित भेल। एकरा सभक शीर्षक-विधान एक्के साँचमे ढलल अछि-एक अमूर्त भाव-मूल्य (प्रेम/विश्वास)। चारू नाटकक केन्द्रमे एक आत्मनिर्णयकारी नारी-चरित्र अछि।

एहि दू वृत्तकें जोड़’वला सूत्र थिक-‘प्रेम’क जीवन-तत्त्वक रूपमे प्रतिष्ठा। ‘कुसमा-सलहेस’क समापन-गीतक टेक-“बिनु मकरंदक कुसुम हो तहिना, प्रेम बिना की जीवन”- लगभग शब्दशः ‘श्वेताक आविष्कार’मे पुनः प्रतिध्वनित होइत अछि। तात्पर्य ई जे लोकनाट्य-त्रयीसँ प्रेम-चतुष्टय धरि एक वैचारिक तार लगातार ताणल अछि।

३. नाटकक सभक मोटा-मोटी सर्वेक्षण

३.१ चालिस चोर आ गोनू झा उर्फ ज्ञान झाक खिस्सा

संग्रहक प्रथम आ सर्वाधिक प्रयोगधर्मी नाटक यएह थिक। एकर आरम्भे आत्म-संदर्भ (self-referential) रंगमंचक एक श्रेष्ठ उदाहरण थिक। तीन गोट ‘भाँट’ मंच पर अबैत छथि आ अपन मरैत कलाक विलाप करैत छथि-“हमरा लोकनिक विद्या आब बेकार भ’ गेलए”। जखन हुनकर पारम्परिक ‘कवित’ आ यशोगानक कोनो असरि श्रोता पर नहि पड़ैत छनि, तखन ओ निर्णय करैत छथि जे आब ‘नाटक’ करबाक चाही। एहि एक्के दृश्यमे कुणाल मैथिली बारदिक-परम्पराक (भाँट-संस्कृति) ह्रास, राज्याश्रित कलाक संकट आ रंगमंच दिस लोक-कलाकारक संक्रमण-तीनू ऐतिहासिक यथार्थकें एक्के संग नाटकीय बना दैत छथि।

एहि बाह्य-वृत्तक भीतर मिथिलाक चिर-परिचित ‘गोनू झा’-चक्रक कथा अबैत अछि। नरेश गोनूकें ‘धूर्त-शिरोमणि’क उपाधिसँ विभूषित कएने छथि; अपमानित कविराज लोकनि गोनू लग न्यायक गोहारि लगबैत छथि; आ अंततः चालिस चोरक एक टोली गोनूक घर लूटबाक उपक्रम करैत अछि। गोनू बल-प्रयोग नहि, अपितु ‘बुद्धि’-प्रयोगसँ चोर सभकें परास्त करैत छथि-ओ चोर सभक आपसी प्रतिद्वंद्विताकें ‘सरदारीक मुरैठा’क प्रतीकात्मक लोभ द’ क’ भड़काबैत छथि आ एक कूट अभिषेक-विधिक प्रहसन

रचि क' हुनका सभकेँ ठकि लैत छथि। एतय हास्य-रस आ वीर-रसक एक विरल मिश्रण अछि, जतय 'वीरता' शस्त्रक नहि, युक्तिक धर्म बनि जाइत अछि।

नाटकक वैचारिक उत्कर्ष ओकर समापनमे अछि, जतय भाँट लोकनि पुनः अपन भूमिकासँ बाहर आबि क' कथाक अंत पर परस्पर वाद-विवाद करैत छथि—“एहि तरहें तँ नाटकक अंत बदलि ने गेल भाइजी?”। एहि एक संवादमे कुणाल रंगमंचीय यथार्थक तरलता, वैकल्पिक अंत (alternative endings) आ दर्शकक सोझाँ रचना-प्रक्रियाक पारदर्शिताकेँ उजागर करैत छथि। आर तखन एक प्रखर सामाजिक टिप्पणी अबैत अछि- चोरीकेँ “अशिक्षा आ गरीबी सँ उत्पन्न” सामाजिक व्याधि कहल जाइत अछि, जकर समाधान दण्ड नहि, समुचित व्यवस्था थिक।

अंतमे भाँट लोकनि ‘गमछा’ ओछा क' दर्शकसँ दान माँगैत छथि-ई मात्र लोक-कलाकारक पारिश्रमिक-संग्रहक यथार्थ-चित्रण नहि, अपितु कला आ जीविकाक सम्बन्धक एक मार्मिक स्वीकृति थिक। समापन-गीतक पंक्ति—“बुद्धि सँ नई पैघ कोनो बल होइ छै”—समग्र नाटकक थीसिस-वाक्य थिक, जे शीर्षकक ‘ज्ञान झाक खिस्सा’केँ सार्थक करैत अछि।

नव्य-न्यायक कोणसँ देखी तँ एहि नाटकक केन्द्रीय मूल्य ‘बुद्धि’ वस्तुतः ‘प्रमा’ (यथार्थ-ज्ञान) आ ‘युक्ति’क महिमा थिक- गोनुक प्रत्येक विजय कोनो भौतिक बलक नहि, अपितु अनुमान, ऊह आ तर्कक विजय थिक। हास्यक आवरणमे एतय ज्ञान-मीमांसाक एक देशज प्रतिष्ठापन अछि।

३.२ बिदापत

‘बिदापत’ (अर्थात विद्यापतिक लोकोच्चारित रूप) कुणालक रचना-कौशलक सर्वाधिक परिष्कृत उदाहरण थिक। शीर्षक-पृष्ठ एकरा “लोकनाट्य शिल्प-आधारित नाटिका” कहैत अछि, मुदा एकर शिल्प वास्तवमे शास्त्रीय आ लोक-दुनू नाट्य-परम्पराक संश्लेषण थिक। नाटक ‘पूर्वरंग’सँ आरम्भ होइत अछि, सूत्रधार-नटीक शास्त्रीय संवाद-विधि अपनाओल गेल अछि, आ संग-संग समाजी (कोरस), विदूषक-सदृश ‘विपटा’ आ ‘नटुआ’ सन लोक-रंगमंचक पात्र सेहो उपस्थित छथि।

एहि नाटकक सर्वाधिक उल्लेखनीय शिल्प-विशेषता थिक स्वयं विद्यापतिक पदक सघन, सावधान आ अर्थपूर्ण प्रयोग। शिवस्तुति, भैरवी-वंदना, वसंत-वर्णन (“नव वृन्दावन, नव-नव तरुण... विहरइ नवल किशोर”), विरह-पद (“चाँद सार लए मुख घटना करू, लोचन चकित चकोरे”) आ अवहट्ट-शैलीक समापन-पद-ई सभ कथाक प्रवाहमे एना गूँथल अछि जे नाटक एक प्रकारे विद्यापति-पदक रंगमंचीय भाष्य बनि जाइत अछि।

कथा-वस्तु विद्यापतिक जीवनकेँ तीन सम्बन्ध-तन्तुक माध्यमसँ बुनैत अछि-आश्रयदाता-मित्र शिवसिंह, हुनक रानी लखिमा आ सेवक उगना (जे स्वयं महादेव छलाह)क प्रसिद्ध लोक-कथा। नाटकक

अंतिम अंश अत्यंत मार्मिक अछि-ओइनीक युद्धमे शिवसिंहक अंतर्धान, लखिमाक ओ हठ जे ओ पतिकेँ मृत मानबासँ अस्वीकार करैत प्रतीक्षारत रहैत छथि, आ विद्यापतिक आजीवन शोक। एतय लखिमा सती-छविमे नहि, अपितु एक दृढ़, स्वाभिमानी प्रतीक्षारत स्त्रीक रूपमे प्रस्तुत भेल छथि-ई पारम्परिक आख्यानक एक सूक्ष्म पुनर्पाठ थिक।

नाटकक ध्वनि-व्यंजना (काव्यशास्त्रीय ‘ध्वनि’) एकर समापनमे चरम पर पहुँचैत अछि-विद्यापति कहैत छथि जे ओ अपन ‘पद’मे जीवित रहताह, आ संग-संग शिवसिंह, लखिमा, विपटा, नटुआ-उगना सेहो अमर रहताह। एतय करुण-रसक तल नीचाँ शान्त-रसक एक गहौर धारा बहैत अछि-मृत्यु-शोकक ऊपर काव्यक चिरंजीविताक प्रतिष्ठा। समग्रतः ‘बिदापत’ विद्यापतिकेँ संस्थागत साहित्येतिहासक ‘महाकवि’क प्रतिमासँ उतारि क’ लोक-रंगमंचक जीवित नायकक रूपमे पुनः-प्रतिष्ठित करैत अछि-ई विदेह समानांतर-इतिहास-दृष्टिक एक उत्कृष्ट नाट्य-निर्दर्शन थिक।

३.३ कुसमा-सलहेस

शीर्षक-नाटक होएब एकर केन्द्रीयताक मात्र संयोग नहि-कलात्मक आ वैचारिक, दुनू दृष्टिसँ ई संग्रहक हृदय थिक। शीर्षक-पृष्ठ एकरा “महागाथा (राजा सलहेस) आ लोक-नाट्य (सलहेस नाच) पर आधारित नाटक” कहैत अछि। राजा सलहेस मिथिलाक दुसाध (दलित) समुदायक लोक-देवता-नायक थिकाह आ ‘सलहेस नाच’ ताहिसँ जुड़ल लोक-रंगमंच। एहि स्रोत-चयने स्वयं एक सांस्कृतिक-राजनीतिक वक्तव्य थिक-कुणाल मिथिलाक अभिजन-केन्द्रित साहित्य-परम्पराक बदला एक सबाल्टर्न (अधीनस्थ/वंचित) महागाथाकेँ अपन सर्वाधिक महत्वाकांक्षी नाटकक आधार बनबैत छथि।

नाटकक पात्र-विधान एक पूर्ण महाकाव्यात्मक विस्तार लैत अछि-नायक सलहेस (महिसौथाक राजा), नायिका कुसमा (मालिन), कथा-संवाहक सूग्गा हिरामन, नाचक विदूषक विपटा, सलहेसक पशु-सहचर बाघ ‘ठनका’ आ भालु ‘बनका’, योगिनी मालिन-बहिनी, मोरंग-भोट-बाघगढ़-समदागढ़ सन अनेक राज्य, आ साक्षात देवी दुर्गा। ई विस्तार सलहेस-नाचक मूल लोक-संरचनाकेँ-पूर्वरंग, सुमिरन, समाजी-गायन, दृश्य-दर-दृश्य भौगोलिक यात्रा-यथावत संजोगि क’ राखैत अछि।

नाटकक आरम्भिक ‘सुमिरन’ एक अद्भुत समन्वयवादी (syncretic) घोषणा थिक-एहिमे देवता, बाबा-डीहबार, गुरु-गोसाँइ, उगैत सूर्य, गंगा, गोरा-पार्वतीक संग-संग पछिम दिस ‘मीरा-सुलतान’ (एक मुस्लिम पीर)केँ सेहो सुमिरल जाइत अछि, आ अंतमे “सकल समाज” तथा “जन-गन-मन”केँ। दर्शककेँ कएल अभिवादन सेहो ओतबे समावेशी अछि-“परिनाम, नमस्ते, आदाब, गुड इवनिंग, सलाम”। ई समन्वयवाद दुसाध सलहेस-परम्पराक अपन सांस्कृतिक चरित्र थिक, जकरा कुणाल पूर्ण निष्ठासँ रंगमंच पर अनैत छथि।

नायिका कुसमाक आत्म-परिचय-जे राजकन्या भेलहुँ मुदा महल छोड़ि वन-वासिनी मालिन बनलहुँ-गहीर लोक-काव्यात्मक छटासँ भरल अछि; जनकपुर, कमरू-कामाख्या, विसुनपुरक तीर्थ-यात्राक स्मृति आ बारह बरखक अवस्थामे देखल दुर्गाक स्वप्न-वचन एकर भाव-भूमि बनबैत अछि। मुदा नाटकक केन्द्रीय द्वन्द्व प्रेमक नहि, अपितु प्रेम बनाम सत्ता-लोलुपताक थिक।

एहि द्वन्द्वक चरम तखन अबैत अछि जखन विस्तारवादी सम्राट सूचोंग सलहेसकें रंगीलागढ़क कारागारमे लोहाक बेड़ीमे बान्हि लैत अछि आ समस्त मिथिला पर एकछत्र राजक स्वप्न देखैत अछि। सलहेसक उत्तरमे एहि नाटकक आत्मा बाजैत अछि-“हमर प्राण अहाँक मुट्ठी मे भ’ सकैए सम्राट। मुदा हमर विचार आ भावना केँ बान्हल नई जा सकैए। नहि रहता सलहेस मुदा भयमुक्त जीवनक मंत्र सँ भरल जनता रहतै।” एहि एक संवादे सलहेसक दुसाध लोक-देवताकें कुणाल एक जन-नायक, अभय आ स्वातंत्र्यक प्रतीक बना दैत छथि, आ मालिन-बहिनी लोकनिकें शान्ति-करुणा-स्नेह-आनन्दक तथा ‘लोक-कल्याण’क मूर्ति।

नाटकक समापन एक समवेत गायन-नृत्यमे होइत अछि आ ओ अमर टेक उभरैत अछि-“प्रेम सत्य छै, प्रेम छै सौरभ, प्रेमक भाव चिरंतन, बिनु मकरंदक कुसुम हो तहिना, प्रेम बिना की जीवन।” एतय शृंगार-रस अपन लौकिक तलसँ ऊपर उठि क’ एक विश्वव्यापी मानवीय-तत्त्व बनि जाइत अछि-प्रेम एतय व्यक्ति-राग नहि, सृष्टिक शक्ति थिक। ई नाटक संग्रहक सर्वाधिक सबल कृति थिक-लोक-स्रोतक प्रामाणिकता, राजनीतिक चेतना आ काव्यात्मक उत्कर्ष-तीनू एकठाम।

३.४ प्रेम-चतुष्टय : चारि पौराणिक नायिका

अंतिम चारि नाटक एक सुसंगठित विचार-शृंखला थिक। चारू एक्के नाट्य-व्याकरण साझा करैत अछि-मितव्ययी पात्र, बहु-भूमिका-अभिनय (एके अभिनेता द्वारा अनेक पात्रक अभिनय), स्तरित वा रिक्त मंच, सूत्रधार/उद्घोषकक कथन-शैली आ बीच-बीचमे विद्यापति-पदक प्रयोग। चारू पौराणिक/आख्यानमूलक नायिकाक माध्यमसँ आधुनिक मूल्य-स्त्री-कर्तृत्व, आत्मनिर्णय आ प्रेमक गरिमा-प्रस्थापित करैत अछि।

प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय! महर्षि भारद्वाजक पुत्री श्रुवावती विवाहक पारम्परिक मानदण्ड-सुन्दर, सम्पन्न, शौर्यवान वर-केँ अस्वीकार क’ कहैत छथि जे ओ विवाह तखने करतीह जखन कियो हुनका लेल साँचमे ‘अर्थवान’ भ’ जैताह। ओ अपनाकेँ “स्वतंत्र आ स्वावलंबी” व्यक्ति घोषित क’ परम्पराक ‘अपवाद’ बन’ चाहैत छथि। इन्द्र (वशिष्ठ-वेशमे) हुनका एक फलकेँ सूर्यास्तसँ पूर्व सिद्ध करबाक परीक्षा दैत छथि; फल पाथर बनि जाइत अछि, मुदा प्रेम-स्मृति-विहीन जीवनकेँ निरर्थक मानि श्रुवावती स्वयं चितामे प्रवेश करबाक संकल्प लैत छथि-आ ओकर एहि आत्मबले इन्द्रकेँ झुकाबैत

अछि। नाटकक थीसिस-“आत्मबल, मनुष्यक सब सँ पैघ संपत्ति अछि”। यद्यपि अग्नि-प्रवेशक रूढ़ि एहि नारीवादी पाठक संग किछु तनाव उत्पन्न करैत अछि (, तथापि एतय बलि नहि, संकल्पक शक्ति केन्द्रमे अछि।

विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह। महाभारतक सुकन्या-च्यवन-आख्यानक एहि रंगमंचीय रूपमे चपल, क्रीडामग्न राजकुमारी सुकन्या आ बामी-भीड़मे (वल्मीक) समाधिस्थ वृद्ध ऋषि च्यवनक प्रसंग अछि। आरम्भ विद्यापतिक वसंत-पद ‘आयल रितुपति राज बसंत’सँ होइत अछि। रानीक चिन्ता आ राजा शर्यातिक मुग्ध-वात्सल्यक बीच एक सूक्ष्म दार्शनिक संवाद अबैत अछि-“जँ आहाँ आँखि मुनि ली तँ ओ वृक्ष आहाँ केँ नई देखायत... परंतु सब किछु उपस्थित अछि।” ई संवाद ज्ञान आ ज्ञेयक भेदकेँ रंगमंच पर अनैत अछि-अनुपलब्धि सत्ताक अभाव नहि थिक। नाटकक मर्म ‘विश्वास’ थिक-सुकन्याक निष्ठे च्यवनकेँ नव यौवन दिआबैत अछि।

प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार। ई चतुष्टयक सर्वाधिक मौलिक कल्पनावला नाटक थिक। राजनर्तकी श्वेता सात बरखक कठोर साधनाक बाद राजा अतिरथक प्रति अनुरक्त भ’ जाइत छथि। मुदा अतिरथ कलाक प्रति ‘निरपेक्ष’ (विरक्त) रहैत छथि-ओ कलाकेँ देहसँ फराक क’ देखबाक ‘नीर-क्षीर विवेक’क पक्षधर छथि आ घोषणा करैत छथि जे “प्रेम करब तँ नितान्त मूर्खता थिक”। श्वेता प्रत्युत्तरमे कवि-वचन उद्धृत करैत छथि-“कुसुम बिना मकरंद तहिना प्रेम बिना की जीवन” (ध्यातव्य: यैह सूत्र ‘कुसुमा-सलहेस’क समापन-टेक छल), आ संकल्प लैत छथि जे ओ ‘निरपेक्ष’ राजाकेँ स्वयं प्रेमक प्रस्ताव करबाक लेल बाध्य करतीह। ‘आविष्कार’ शब्दक द्यूथता एतय सटीक अछि-श्वेता प्रेमक आविष्कार करतीह आ अपन कर्तृत्वक सेहो। नर्तकी सन परम्परासँ ‘वस्तु’ बनाओल चरित्रकेँ कुणाल एतय ‘कर्ता’ बना दैत छथि-ई एकर प्रमुख उपलब्धि थिक।

प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र। अष्टावक्र (अष्ट-वक्र-आठ ठाम वक्र शरीरवला) ऋषि आ महर्षि वदन्यक पुत्री सुप्रभाक गाढ़ अनुरागक एहि कथामे ‘परीक्षा’ केन्द्रमे अछि। वदन्य अष्टावक्रकेँ स्वर्गमे उर्वशीक सान्निध्यमे पठा क’ सुप्रभाक निष्ठाक परीक्षा लैत छथि-सुप्रभा अन्य राजासँ स्वयंवरक प्रस्ताव अस्वीकार करैत मात्र “अष्टावक्रक प्रतीक्षा” करबाक हठ रखैत छथि। अष्टावक्र उर्वशीकेँ अस्वीकार क’ लौटैत छथि आ दुनूक विवाह होइत अछि। समापन-दोहा एकर मर्म कहैत अछि-“जहिना स्वर्ण मे आगि सँ आबए आर निखार / प्रेम, परीक्षा दैत अछि, तँ होइछ आर प्रगाढ़।”

४. कुणालक नाट्य-शिल्प : लोकनाट्य, शास्त्र आ आधुनिकता

कुणालक रंगमंचीय भाषाक सब सँ बड़का विशेषता थिक तीन परम्पराक सायास संश्लेषण। एक दिस ओ शास्त्रीय संस्कृत-नाट्यक उपकरण-पूर्वरंग, सूत्रधार-नदी, नांदी-सदृश वंदना-अपनबैत छथि; दोसर दिस मिथिलाक लोक-रंगमंचक (‘नाच’) तत्त्व-समाजी (कोरस), विदूषक ‘विपटा’, सूग्गा-कथावाचक, समवेत गायन-नृत्य, दर्शककें सोझ सम्बोधन आ रिक्त/स्तरित मंच-कें केन्द्रमे रखैत छथि; आ तेसर दिस आधुनिक रंगमंचक आत्म-संदर्भिता आ ‘अलगाव’क प्रविधि उपस्थित अछि।

एहि अंतिम बिन्दु पर पश्चिमी नाट्य-चिन्तनक संदर्भ प्रासंगिक अछि। ब्रेख्तक ‘महाकाव्यात्मक रंगमंच’ (एपिक थिएटर) आ ओकर ‘विरचन/अलगाव-प्रभाव’-जाहिमे दर्शककें बेर-बेर स्मरण कराओल जाइत अछि जे ओ नाटक देखि रहल छथि- कुणालक रंगमंचमे लोक-रूपक स्वाभाविक अंग बनि क’ अबैत अछि। ‘चालिस चोर’क भाँट-वृत्त, भूमिका-त्याग आ वैकल्पिक-अंतक वाद-विवाद; ‘बिदापत’मे विपटाक बेर-बेरक टोकाटोकी “गड़ी आगाँ बढ़ाउ!”; आ ‘कुसमा-सलहेस’मे हिरामन-विपटाक मेटा-कथन-ई सभ ‘चतुर्थ भित्ति’कें निरन्तर तोड़ैत अछि। उल्लेखनीय ई जे ब्रेख्त एहि प्रविधिकें पश्चिममे जतय अवांगार्द-प्रयोगक रूपमे प्रस्तुत कएलनि, ओतय मिथिलाक ‘नाच’मे ओ सदासँ अंतर्निहित छल- कुणाल यएह देशज-आधुनिकताकें उद्घाटित करैत छथि।

मंचनीयताक प्रति कुणालक सजगता असाधारण अछि। ‘चालिस चोर’क अंतमे ओ लिखैत छथि जे एहि नाटकक ४५-मिनट, ६०-मिनट आ एक-घंटा-तीन रूप अछि, आ एकर एक चारिम ‘ध्वनि-नाट्य’ (रेडियो-नाटक) शृंखलाक तेरह प्रकरण सेहो प्रसारित भेल। ओ ईहो सुझबैत छथि जे एक अभिनेता एकाधिक पात्रक अभिनय करथि। एहि सूचना सभसँ स्पष्ट अछि जे ई आलेख रंगमंचक व्यावहारिक आवश्यकताकें ध्यानमे राखि लिखल गेल-ई ‘अभिनय-योग्य’ पाठ थिक, ‘अभिनेय’क मात्र कल्पना नहि।

५. भाषा, छंद आ काव्य-सौंदर्य : रस-ध्वनि-वक्रोक्तिक कोण

कुणालक भाषा एकल नहि, अपितु बहुस्तरीय अछि। लोकनाट्य-त्रयीमे ओ ठेठ ग्रामीण मैथिली लोक-मुहावरा, अनुप्रास-बहुल तुकबन्दी आ गीत-शैलीक प्रयोग करैत छथि-जतय ‘हास्य’ आ ‘शृंगार’क लोक-रूप प्रधान अछि। प्रेम-चतुष्टयमे ओ अपेक्षाकृत तत्सम-प्रधान, संस्कृत-निष्ठ, परिनिष्ठित मैथिली अपनबैत छथि-जे आश्रम-वातावरण आ पौराणिक गरिमाक अनुकूल अछि। एहि भाषिक-कौशलमे कुणालक पात्र आ परिवेश-बोध स्पष्ट झलकैत अछि।

वक्रोक्ति-दृष्टिसँ लोकनाट्य-नाटक सभमे शब्द-वक्रता (कुन्तकोक्त ‘वक्रोक्ति’) चरम पर अछि-‘सरदारीक मुरेठा’ आ कुसमाक ‘लहठी’ (बेड़ी बनाम चूड़ी), ‘चुमाओन बनाम श्राद्ध’, ‘धूर्त-शिरोमणि’क उपाधि-एतय अर्थक दोहरापन आ श्लेष नाटकीय ऊर्जाक स्रोत थिक। ध्वनि-दृष्टिसँ ‘बिदापत’क समापन (‘पद’मे जीवन) आ ‘कुसमा-सलहेस’क प्रेम-टेक-दुनू अभिधासँ ऊपर उठि व्यंग्यार्थ (सूचित अर्थ)मे प्रतिष्ठित होइत अछि, जतय करुणक नीचाँ शान्त आ शृंगारक ऊपर अध्यात्म ध्वनित होइत अछि।

विद्यापति-पदक प्रयोग कुणालक एक सायास काव्य-नीति थिक-ई मात्र अलंकरण नहि, अपितु मिथिलाक काव्य-स्मृतिकेँ रंगमंचक जीवित अंग बना देबाक उपक्रम थिक। ‘बिदापत’मे ओ विद्यापति-पदक नाट्य-भाष्य रचैत छथि, तँ ‘सुकन्या’मे वसंत-पद वातावरण-निर्मितिक उपकरण बनैत अछि- एहि प्रकारे पद-परम्परा आ नाट्य-परम्परा एक-दोसरमे विलीन भ’ जाइत अछि।

६. नव्य-न्यायक दृष्टि : प्रमा, अभाव आ प्रामाण्य

एहि संग्रहमे ज्ञान-मीमांसाक अनेक सूत्र नाटकीय रूपमे विद्यमान अछि, जकर पाठ नव्य-न्यायक उपकरणसँ कएल जा सकैत अछि। ‘चालिस चोर’मे गोनूक प्रत्येक विजय अनुमान आ युक्तिक-अर्थात ‘प्रमा’क-विजय थिक; बल बनाम बुद्धिक द्वन्द्वमे नाटक प्रमाण-व्यापारकेँ सर्वोपरि घोषित करैत अछि।

‘सुकन्या’क ओ संवाद-“आँखि मुनि लेला पर वृक्ष नई देखायत, मुदा सब किछु उपस्थित अछि”- नव्य-न्यायक एक केन्द्रीय अन्तर्दृष्टिकेँ रंगमंच पर अनैत अछि-ज्ञानक अभाव विषयक सत्ताक अभाव नहि थिक (अनुपलब्धि ≠ अभाव)। इन्द्रिय-सन्निकर्षक अभावमे प्रत्यक्ष नहि होइत, मुदा वस्तु तँ रहिते अछि-ज्ञान आ ज्ञेयक ई भेद नाटकमे यथार्थ-स्वीकृतिक नैतिक तर्क बनि जाइत अछि।

‘श्रुवावती’क ‘अर्थवत्ता’-तर्क आ ‘अतिरथ’क ‘नीर-क्षीर विवेक’-दुनू वस्तुतः सम्बन्ध आ विशेषण-ज्ञानक प्रश्न उठबैत अछि- कोन गुण-धर्म कोन सम्बन्धमे ‘अर्थवान’ वा ‘ग्राह्य’ होइत अछि, ताहि पर। एहि अर्थमे कुणालक नाटक मनोरंजनक आवरणमे एक देशज ज्ञान-मीमांसाक संवाहक सेहो थिक।

एक वृहत्तर स्तर पर समग्र संग्रह ‘प्रामाण्य’क प्रश्न उठबैत अछि- लोक-ज्ञान आ लोक-स्मृतिक प्रामाणिकता। सलहेस-गाथा, गोनू-चक्र आ बिदापत-नाच-ई सभ ‘अप्रामाणिक’ लोक-वृत्तांत नहि, अपितु एक समानांतर ज्ञान-परम्पराक प्रमाण थिक- यएह एहि संग्रहक मौन प्रतिज्ञा थिक।

७. वैचारिक धरातल : विदेह समानांतर-इतिहासक परिप्रेक्ष्य

विदेह समानांतर-साहित्य-दृष्टिक परिप्रेक्ष्यमे एहि संग्रहक महत्त्व विशेष रूपसँ उद्घाटित होइत अछि। संस्थागत साहित्येतिहास जतय अभिजन-केन्द्रित, मुद्रित आ 'शिष्ट' परम्पराकेँ केन्द्रमे रखैत आएल अछि, ओतय कुणाल अपन सम्पूर्ण नाट्य-कर्मकेँ लोक-रंगमंच आ लोक-आख्यानक भूमि पर ठाढ़ करैत छथि-आ ओहि अनाम 'नाच'-कलाकार लोकनिकेँ अपन समर्पणमे साहित्येतिहासक केन्द्रमे अनैत छथि जिनकर नाम कतहु अंकित नहि।

'कुसमा-सलहेस'क दुसाध (दलित) लोक-देवता-नायककेँ एक जन-नायक, अभय आ स्वातंत्र्यक प्रतीक बना क' प्रस्तुत करब एहि दृष्टिक सर्वाधिक प्रखर अभिव्यक्ति थिक- ई सबाल्टर्न-स्वरक रंगमंचीय प्रतिष्ठापन थिक। 'बिदापत'मे महाकवि विद्यापतिकेँ संस्थागत प्रतिमासँ उतारि लोक-रंगमंचक जीवित नायक बनाएब; आ प्रेम-चतुष्टयमे पौराणिक नायिका सभकेँ-श्रुवावती, सुकन्या, श्वेता, सुप्रभा-आत्मनिर्णयकारी, कर्ता-स्त्रीक रूपमे पुनर्पाठ करब- ई सभ एक्के समानांतर-इतिहास-दृष्टिक विभिन्न आयाम थिक।

एहिमे जातीय (दलित-सबाल्टर्न), लैंगिक (स्त्री-कर्तृत्व) आ सांस्कृतिक (हिन्दू-मुस्लिम समन्वय) तीनू स्तरक प्रतिरोध एक्के संग सक्रिय अछि-मुदा कतहु नारेबाजीक रूपमे नहि, अपितु लोक-रूपक स्वाभाविक प्रवाहमे विलीन भ' क'। यएह कुणालक वैचारिक परिपक्वताक प्रमाण थिक।

८. सीमा आ जिज्ञासा

सातो नाटकक सीमा, कमी आ वैचारिक तनाव

प्रास्ताविक : आलोचनाक आवश्यकता

एक सन्तुलित साहित्यिक विवेचना केवल गुणगानसँ पूर्ण नहि होइत। कुणालक 'कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोटा नाटक' मैथिली नाट्य-साहित्यक एक उल्लेखनीय संग्रह थिक- यएह सिद्ध होइत अछि एहि तथ्यसँ जे सातो नाटक बेर-बेर मंचित भेल, 'भंगिमा' आ 'अंतिका'मे प्रकाशित भेल, आ अंततः एक पुस्तक-संग्रहमे आएल। मुदा यएह प्रतिबद्धता पाठक-समीक्षककेँ उत्तरदायी सेहो बनाबैत अछि- नाटकक उपलब्धि जतेक तीव्र, ओकर सीमाक स्वीकृति ओतबे ईमानदार होएबाक चाही।

सातो नाटकक कमजोरी, वैचारिक तनाव, शिल्प-सीमा आ पुनरावृत्ति-दोषकेँ नाटकक आलोचनाक उद्देश्य खण्डन नहि, भावी नाट्य-लेखनक लेल रचनात्मक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत केनाइ थिक।

संरचनागत सीमा- संग्रहक असमान स्केल आ लय-भंग

संग्रहक सर्वाधिक स्पष्ट संरचनागत समस्या थिक- सातो नाटकक आकार-वैषम्य। ‘कुसमा-सलहेस’ लगभग ७० पृष्ठक विराट नाटक थिक; ‘प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!’ मात्र १४ पृष्ठमे समाप्त भ’ जाइत अछि। पाठक/ भावी निर्देशक जखन ‘कुसमा-सलहेस’क बाद ‘श्रुवावती’ उठाबैत अछि, तखन ओकरा एक ‘महाकाव्यात्मक संसार’सँ एकाएक एक ‘लघु-चेम्बर पीस’मे जाए पड़ैत अछि। ई संक्रमण सुखकर नहि।

तुलना कएल जाए-

‘चालिस चोर आ गोनू झा’ = ७४ पृष्ठ • ‘बिदापत’ = ४८ पृष्ठ • ‘कुसमा-सलहेस’ = ७० पृष्ठ • ‘श्रुवावती’ = १४ पृष्ठ • ‘सुकन्या’ = २६ पृष्ठ • ‘श्वेता’ = १८ पृष्ठ • ‘सुप्रभा-अष्टावक्र’ = २८ पृष्ठ।

संग्रहक आरम्भिक तीन नाटकक औसत ६४ पृष्ठ आ अंतिम चारिक औसत २१ पृष्ठ थिक। ई एक पुस्तक-रचना (book-architecture)क समस्या थिक-ई दुनू समूह किछु भिन्न पुस्तकक विषय-वस्तु लगैत अछि, एकहि लाटमे भेलासँ पाठ-अनुभवमे अटपट लगैत अछि।

‘उर्फ’ शीर्षक-साँचाक एकरसता

प्रेम-चतुष्टयक चारू नाटकक शीर्षक एक्के साँचमे ढलल अछि-‘[अमूर्त-भाव] उर्फ [नायिकाक नाम]क [क्रिया-शब्द]’। ई साँच पहिले तीन नाटकमे नवीन लगैत अछि (शास्त्रीय भाव + लोक-उद्घोष), मुदा चारिम बेर दुहराएब एक यांत्रिकता उत्पन्न करैत अछि। पाठक शीर्षक पढ़िबैते ‘फॉर्मूला’ बुझि लैत अछि; विस्मय नहि होइत अछि।

तुलना करू-‘बिदापत’ (एक शब्द, अनेक अर्थक सघनता) - ‘कुसमा-सलहेस’ (दू पात्रक नाम, महाकाव्यात्मक)- ई दुनू शीर्षक अपन नाटकक जीवन्तता धारण करैत अछि। ‘प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार’ एक अपेक्षाकृत नाम आ सूत्र-बद्ध शीर्षक थिक। ई शीर्षक-क्रमिकता प्रेम-चतुष्टयमे एक सीमा थिक।

नाटक-वार कमी आ वैचारिक तनाव

चालिस चोर आ गोनू झा

क. मेटाथिएटरक अतिरेक

एहि नाटकक मेटाथिएटरीय उपकरण-भाँटक वाद-विवाद, वैकल्पिक-अंत, दर्शकसँ सम्बोधन-नाट्य-शिल्पक दृष्टिसँ प्रशंसनीय थिक। मुदा नाटकक अंतिम दृश्यमे भाँट लोकनि जखन ‘चोरी एक सामाजिक व्याधि थिक, अशिक्षा आ गरीबीसँ उत्पन्न’ कहैत छथि, तखन ई सन्देश नाटकीय रूपसँ ‘बताएब’मे

बदलि जाइत अछि। भरतमुनि जे कहलाह-नाटक ‘देखाबैत’ अछि, ‘कहैत’ नहि- एहि मानदण्डपर ई अन्तिम दृश्य कमजोर पड़ैत अछि। सन्देश-निहित पाठ स्वयं रंगमंचीय क्रियासँ स्पष्ट भ’ जएबाक चाही; एहि लेल भाँटक मुखर व्याख्या अनावश्यक थिक।

ख. चोर-पात्रक द्वि-आयामिता

गोनू झाक तुलनामे चालिस चोर (विशेषतः दुरमतिआ आ देबहा) मात्र हास्य-साधन बनि रहि जाइत छथि। हुनकर गरीबी-अशिक्षाक ओ ‘सामाजिक व्याधि’, जकरा नाटकार स्वयं अन्तमे स्वीकार करैत छथि, नाटकक भीतर कोनो नाट्यात्मक गहराई नहि पाबैत अछि। ई एक विरोधाभास थिक- अंतमे एक प्रगतिशील सामाजिक व्याख्या दैत नाटककार, परंतु पूरा नाटकमे चोर लोकनि केवल ‘हँसाओल जाएवला वस्तु’ बनल रहि जाइत छथि। सामाजिक-यथार्थवादी नाट्य-लेखन एहि विरोधाभासकें दूर करैत, चोरक दारिद्र्यकें कोनो दृश्यमे मानवीय बनाबैत अछि।

ग. गमछा-प्रसंग द्विअर्थीय

गमछा ओछा क’ दान माँगबाक दृश्य एकहि संग दू अर्थमे कार्य करैत अछि- एक ब्रेख्तीय ‘पारदर्शिता’ (कलाकारक आर्थिक भेद्यता उजागर करनाइ) आ दोसर एक ‘राजकीय कला-संरक्षण’क आलोचना। मुदा नाटककार एहि दुनू अर्थमे सँ कोनो एककें पूर्ण रूपेण नहि विकसित करैत छथि- ई प्रसंग लोक-परम्पराक यांत्रिक पुनरावृत्ति जेकाँ लागैत अछि, एक सायास नाट्य-निर्णय जेकाँ नहि।

बिदापत

क. विपटाक ‘गड़ी आगाँ बढाउ’ : हास्यसँ व्याघातक ओर

विपटाक ‘गड़ी आगाँ बढाउ’ उद्धोष-विधि सबसँ पहिले एकटा टटका लोकनाट्य-युक्ति थिक। मुदा ई वाक्य नाटकभरि एते बेर दोहराओल गेल अछि जे ओ एक ब्रेख्तीय ‘विरचन-प्रभाव’ रहबाक बदला एक यांत्रिक व्यवधान बनि जाइत अछि। दर्शक जखन जनैत अछि जे विपटा बेर-बेर एए कहत, तखन ओहि कथनक आश्चर्य-तत्त्व समाप्त भ’ जाइत अछि। ब्रेख्ताक विरचन-प्रभाव तखने काज करैत अछि जखन ओ अनपेक्षित होए- एहि नाटकमे ओ अत्यन्त प्रत्याशित भ’ जाइत अछि।

ख. उगना-महादेव प्रसंगक अपूर्णता

उगना वास्तवमे महादेव छलाह- एहि महत्त्वपूर्ण लोक-कथाकें नाटकमे एक केन्द्रीय भावात्मक क्षण हेबाक चाही। मुदा एहि नाटकमे उगनाक महादेव-पहचान एक अन्य चरित्रक मुखसँ ‘रिपोर्ट’ (अमियकरक कथन) क रूपमे अबैत अछि, प्रत्यक्ष नाट्य-क्रियाक रूपमे नहि। एहि कारणे एहि क्षणक भावात्मक प्रभाव (जे विद्यापति-भक्तिमे एक दिव्य-क्षण थिक) सम्पूर्ण रूपसँ उभरि नहि पाबैत अछि।

ग. ऐतिहासिकता-काव्यता द्वन्द्व

नाटक ई.सं. १४००-१४५० धरिक 'ऐतिहासिक' समय-सीमा घोषित करैत अछि, मुदा नाट्य-संरचना सर्वत्र काव्यात्मक-लोक-शैलीमे अछि। एहि दुनूक मध्य तनाव कखनो-कखनो प्रकट होइत अछि- जेना जौनपुर-दरबारक दृश्य एक ऐतिहासिक यथार्थ थिक मुदा ओकरा अमियकरक 'स्वाँग' (हास्य-अभिनय)मे प्रस्तुत केनाइ एहि यथार्थकेँ हल्लुक कऽ दैत अछि। नाटककारक ऐतिहासिक-काव्यात्मक संतुलन कखनो-कखनो डोलैत अछि।

कुसमा-सलहेस

क. खलनायक-वर्ग (सूचोंग-चूहड़)क एकआयामिता

संग्रहक सर्वाधिक महत्वाकांक्षी नाटकमे खलनायक-वर्गक चित्रण एकआयामी भ' गेल अछि। सूचोंग, चूहड़मल्ल, तरुमल्ल- तीनू मात्र 'दुष्ट-गुण'क संकलन मात्र थिकाह, कोनो अन्तर्द्वन्द्व, कोनो मानवीय जटिलता हुनका सभमे नहि अछि। जखन बुधेसरकेँ ओ लोकनि यातना दैत छथि, तखन समवेत-हँसी (हो... हो...) आ क्रूरताक एक सतही चित्रण अछि। महाकाव्यात्मक नाटकमे उत्कृष्ट खलनायक वएह होइत अछि जे दर्शककेँ अपन नजरिसँ सहमत भ' जाएपर विवश करए; एहि नाटकमे एहन जटिलता अनुपस्थित अछि।

ख. भूगोल-विस्तारसँ नाट्य-केन्द्रीयताक क्षय

नाटकमे स्थान-परिवर्तन अत्यधिक अछि- महिसौथा, मोरंग, भोट, बाघगढ़, समदागढ़, रेवा-दाह, रंगीलागढ़। ई भौगोलिक विस्तार महागाथाक प्रामाणिकता प्रकट करैत अछि, मुदा नाट्य-रचनाक दृष्टिसँ एहिसँ कथाक केन्द्रीयता-कुसमा-सलहेसक प्रेम-कथा-प्रायः पृष्ठभूमिमे चलि जाइत अछि। मोरंग-राजाक युद्ध-प्रसंग आ भोट-आक्रमणक विवरणक कारणे नायिका कुसमा बेसी काल तक मंचसँ अनुपस्थित रहैत छथि। महाकाव्यात्मक विस्तार आ नाट्यात्मक केन्द्रीयताक बीच संतुलन पूर्णतः साधल नहि गेल।

ग. समन्वयवादी सुमिरन आ सांस्कृतिक विसंगति

नाटकक आरम्भमे 'मीरा-सुलतान'केँ सुमिरल जाएब एक सुन्दर समन्वयवादी भाव थिक। मुदा ओहि सुमिरनमे जे दुसाध सलहेस-परम्पराक अपन सांस्कृतिक तत्त्व (वनदेवी, पशु-मित्र, दुसाध लोक-कथाक विशिष्ट शब्दावली) थिक, ओ 'जन-गण-मन'क सन्दर्भसँ किञ्चित असंगत लागैत अछि। समन्वयवाद अत्यन्त सुन्दर उद्देश्य थिक, मुदा एहि नाटकक संदर्भमे ओकर विस्तार सुमिरनके 'सर्व-धर्म-समभाव प्रदर्शन'क रूपमे बनाबैत अछि, एक प्रामाणिक दुसाध-धार्मिक-आह्वानक रूपमे कम।

प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!

क. अग्नि-प्रवेश : नारीवादी पाठक संग संरचनात्मक तनाव

एहि नाटकक सबसँ गम्भीर वैचारिक तनाव अछि- श्रुवावती एक दिस ‘स्वतंत्र-स्वावलम्बी व्यक्ति’ घोषित करैत छथि अपनाकेँ, आ दोसर दिस जखन फल सिद्ध नहि होइत तखन ‘प्रियक स्मरण करैत अग्नि-प्रवेश करब’क संकल्प लैत छथि। नाटक एहि अग्नि-प्रवेशकेँ ‘आत्मबल’क प्रकटीकरण कहैत अछि, मुदा बलिदान-केन्द्रित प्रतीक स्वयं एक पितृसत्तात्मक रूढ़िक अनुसरण थिक। स्वाधीन स्त्री जीवनक माँग करैत अछि, मृत्युक नहि। ई वैचारिक विरोधाभास नाटकमे नहि सोझारल अछि।

तुलना करू : सुकन्या (नाटक-५) अपन पिताक श्राप-परिणामक जिम्मेदारी लैत छथि आ जीवनक मार्ग चुनैत छथि; अष्टावक्र (नाटक-७) उर्वशीकेँ अस्वीकार क’ जीवित प्रेमकेँ चुनैत छथि। एहि दुनूक तुलनामे श्रुवावतीक चिता-संकल्प एक कमजोर नाट्य-समाधान थिक।

ख. इन्द्रक तीन वेश : दोहराव आ विश्वसनीयता-क्षय

इन्द्र पहिले ‘प्रत्यक्ष’ आबैत छथि (परिचय देबैत छथि), तखन ‘वृद्ध’ बनिक’ अबैत छथि, तखन ‘वशिष्ठ’ बनिक’। ई तीनू वेश दोहराओल संरचनामे (श्रुवावती हर बेर अस्वीकार करैत छथि) एक नाट्य-लय उत्पन्न करैत अछि जे अत्यन्त पूर्वानुमेय भ’ जाइत अछि। तेसर वेश-दृश्य (वशिष्ठ) मूलतः दोसर वेश-दृश्यक (वृद्ध) दुहराव थिक। दुनूमे श्रुवावती अस्वीकार करैत छथि, दुनूमे इन्द्र क्रुद्ध होइत छथि। एहि दोहरावसँ नाट्य-तनावमे विस्तार नहि, क्षय होइत अछि।

ग. दुष्यन्त कुमारक उर्दू शेर : बाहरी तत्त्व-सम्मिलनक दिक्कत

नाटकक समापनमे दुष्यन्त कुमारक हिन्दी-उर्दू शेर (‘कौन कहता है कि आसमाँ में सुराख हो नहीं सकता’) सांस्कृतिक-भाषाई समृद्धिक एक अभिव्यक्ति थिक। मुदा एहि मैथिली पौराणिक नाटिकाक संदर्भमे ओ किञ्चित असंगत सेहो लागैत अछि। जँ कोनो काव्य-पंक्ति उद्धृत करबाक आवश्यकता छल, तँ मैथिली काव्य-परम्परामे एहन शेर उपलब्ध अछि। ई एक छोट मुदा विशिष्ट शिल्प-प्रश्न थिक।

विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह

क. वय-भेद आ नैतिक असुविधा

नाटकक भीतरसँ स्वयं एहि तनावकेँ स्वीकार कएल गेल अछि- कोरसक गायन-“सोरह बरिसक अलेकेसरि धीआ, च्यवनक वयस हैजार”। ई गायन वय-भेदक नैतिक असुविधाकेँ मनोरंजक ढंगसँ प्रकट करैत अछि, मुदा एहि असुविधाक कोनो समाधान नाटकमे नहि अछि। च्यवन अपन वयस आ क्षमताक समक्ष आश्वस्त छथि; राजा विवशतासँ सहमत छथि; सुकन्या स्वेच्छासँ स्वीकार करैत छथि। मुदा एहि सहमतिक नैतिक आधारकेँ नाटक पर्याप्त रोपेँ विकसित नहि करैत अछि।

ख. अश्विनी कुमार-दृश्यक अत्यधिक लम्बाई

अश्विनी कुमारक प्रथम प्रवेश, तकर बाद पुनः प्रवेश, क्षमा-याचना, उर्वशी-तुलना, श्रापक धमकी, पुनः भेंट, आ सोमरस-प्रसंग-ई सम्पूर्ण क्रम नाटकक कुल लम्बाईक एक पैघ भाग ल' लैत अछि। मुख्य प्रेम-कथा (सुकन्या-च्यवनक सम्बन्ध-विकास) एहि हास्य-प्रसंगसँ अपेक्षाकृत कम स्थान पाबैत अछि। नाट्यात्मक अर्थव्यवस्थाक दृष्टिसँ अश्विनी-प्रसंगक एक दृश्य हटा क' मुख्य-दम्पती-सम्बन्धकेँ अधिक विस्तार दैत तँ नाटक अधिक सन्तुलित होइत।

ग. 'च्यवनप्राश' टिप्पणी : समय-विभाजनक खतरा

सूत्रधारक 'च्यवनप्राश बला च्यवन' टिप्पणी एक पल हास्यपूर्ण लागैत अछि। मुदा ई आधुनिक-उपभोक्ता-संस्कृतिक सन्दर्भ पौराणिक वातावरणमे एक 'टाइम-रिफ्ट' (समय-विभाजन) उत्पन्न करैत अछि। यदि ई सायास छल-एक ब्रेख्तीय विरचन-प्रभाव-तँ ओहि नाट्य-उद्देश्यकेँ नाटकक भीतर अधिक सुसंगत रूपसँ प्रयोग भेबाक चाहियनि।

प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार

क. अतिरथक परिवर्तन : गतिशास्त्रक समस्या

नाटकक सर्वाधिक गम्भीर शिल्प-सीमा थिक-अतिरथक मनोवैज्ञानिक रूपान्तरण अत्यन्त शीघ्र होइत अछि। एक दिस नाटककार अतिरथकेँ 'सात-आठ बरखसँ' निरपेक्ष, 'सब स्वयंवरसँ एकसरे घुरनिहार' राजा चित्रित करैत छथि; दोसर दिस श्वेताक जल-समाधिक समाचार पाबिते ओ नदी-तट दिस दौड़ि पड़ैत छथि आ अरण्यमे भेंट होइतहि मुकुट उतारि दैत छथि। दशकों-पुरान 'निरपेक्षता' एक्के दृश्यमे विघटित भ' जाइत अछि। एहि रूपान्तरणकेँ तैयार करएवाला पर्याप्त नाट्य-आधार (psychological groundwork) नाटकमे नहि अछि।

'बेमन भ' गेलाह अतिरथ', 'सब कृत्रिम सन', 'सब प्राणहीन कठपुतरी सन'- उद्धोषकक ई भाष्य अतिरथक परिवर्तनक 'कारण' बताबैत अछि, मुदा ई 'बताएब' थिक, 'देखाएब' नहि।

इब्सेनक 'हेड्डा गेब्लर' वा चेखवक 'श्री सिस्टर्स'मे पात्रक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन आस्ते-आस्ते, दृश्य-दर-दृश्य सिद्ध होइत अछि। 'श्वेताक आविष्कार'मे अतिरथक परिवर्तन-यात्रा उद्धोषकक वर्णनपर अत्यधिक निर्भर अछि, प्रत्यक्ष नाट्य-क्रियापर कम।

ख. मूल-कथाक स्रोत-अभाव

श्वेता-अतिरथक कथाक कोनो पौराणिक वा ऐतिहासिक स्रोत नहि अछि-ई सर्वथा कुणालक स्वतंत्र कल्पना थिक। ई अपनेमे एक गुण थिक (मौलिकता)। मुदा एहिसँ उत्पन्न एक कमजोरी सेहो अछि-

नाट्य-कथाकें जे ‘भार’ आ ‘विश्वसनीयता’ एक पौराणिक स्रोत दैत अछि (जेना अन्य छह नाटकमे), ओ एहिमे अनुपस्थित अछि। ‘राजनर्तकी’ आ ‘निरपेक्ष राजा’क कथा एक लोकप्रिय नाट्य-साँचा (trope) थिक जे अनेक भारतीय भाषाओंमे पहिनहियो लिखाएल अछि।

प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र

क. वदन्यक प्रेरणा : अव्याख्यायित अस्वीकार

महर्षि वदन्यक अष्टावक्र-अस्वीकारक वास्तविक कारण नाटकमे कहियो स्पष्ट नहि होइत अछि। ओ कहैत छथि-“स्पष्टीकरण देब हमर बाध्यता नहि”। एहि ‘रहस्य’कें नाटककार एक उपकरण बनाबैत छथि, मुदा एहिसँ वदन्यक चरित्र मनोवैज्ञानिक रूपसँ ‘खोखला’ रहि जाइत अछि। अस्वीकारक कारण ज्ञात नहि भेलासँ दर्शककें परीक्षाक ‘दाँव’ पूर्ण रूपसँ बुझाइत नहि अछि। वदन्य एक कार्यकारी (functional) पात्र बनि जाइत छथि, एक जीवित चरित्र नहि।

ख. सुप्रभाक नाट्य-उपस्थिति : असमान

शीर्षकमे सुप्रभाक नाम अष्टावक्रसँ पहिने अछि (‘सुप्रभा आ अष्टावक्र’), मुदा नाटकक पहिल अर्धांश अष्टावक्रकें समर्पित अछि। सुप्रभा दशम-एकादश दृश्यमे (बारह दृश्यमेसँ) मात्र मंचपर अबैत छथि। बारह दृश्य (उर्वशी-प्रसंग) मे ओ अनुपस्थित छथि। यदि नाटकक शीर्षक सुप्रभाकें प्राथमिकता दैत अछि, तँ नाट्य-संरचना ओहि प्राथमिकताकें प्रतिबिम्बित नहि करैत अछि।

ग. वंदी-रहस्य : एक महत्त्वपूर्ण नाट्य-अवसरक क्षय

वंदी वास्तवमे वरुण-पुत्र छथि, आ ‘जल-समाधि’ वस्तुतः विद्वान लोकनिकें यज्ञक लेल जल-देवताक आश्रयमे राखनाइ छल-यैह रहस्य एहि नाटकक सर्वाधिक आश्चर्यजनक नाट्य-मोड़ (plot-twist) थिक। मुदा नाटककार एहि रहस्यकें एक हास्य-प्रसंगमे पर्यवसित क’ दैत छथि (“पानिए तँ हमर घर-दुआरि अछि”)। एहि क्षणकें यदि एक ‘नाट्य-उद्घाटन’ (theatrical revelation) बनाओल जइतए, तँ ओ नाटकक सर्वोत्तम दृश्यमे एक होइत।

संग्रह-स्तरीय साझा सीमा

स्त्री-कर्तृत्व आ पितृसत्तात्मक अनुमोदन-क्रम

प्रेम-चतुष्टयक चारू नाटकमे एक साझा संरचनात्मक विशेषता अछि जे एक साझा सीमा सेहो थिक-प्रत्येक नायिकाक स्वाधीन निर्णय अंततः एक ‘पुरुष-प्राधिकारक अनुमोदन’सँ पूर्ण होइत अछि।

श्रुवावतीक जय-इन्द्रक ‘अहाँ विजयी भेलहूँ’ उद्घोषसँ; सुकन्याक विवाह-राजा शर्याति-च्यवनक सहमतिसँ; श्वेताक मुक्ति-अतिरथक पलायन-अनुगमनसँ; सुप्रभाक विवाह-वदन्यक अनुमतिसँ। ई चारू

उदाहरण बतबैत अछि जे नाटककार नायिकाकें ‘कर्ता’ बनाबैत छथि मुदा हुनकर नाट्य-विजयक अंतिम पुष्टि एक पुरुष-चरित्रक मुँहसँ होइत अछि। एहि सूक्ष्म पुनर्उत्पादनसँ (subtle reproduction) नाटककारक नारीवादी विचार किञ्चित सीमित होइत अछि।

उद्घोषक-निर्भरता : ‘बताएब’ बनाम ‘दिखाएब’

प्रेम-चतुष्टयक चारू नाटकमे उद्घोषक (narrator) पात्रकें एक ‘भावना-व्याख्याकर्ता’क भूमिका दैल गेल अछि-

‘श्वेताक अवसाद हेरा गेलै...’, ‘अतिरथ बेमन भ’ गेलाह...’, ‘बीतल रजनी, ज्यों युग बीतए...’

ई वर्णन कखनो-कखनो पात्रकें अपन भावना स्वयं प्रकट करबाक नाट्य-अवसरसँ वंचित क’ दैत अछि। रंगमंचमे सर्वोत्तम भावनात्मक क्षण ओ होइत अछि जखन पात्र ‘जीबैत’ अछि, वर्णनकर्ता ‘बताबैत’ नहि अछि। एहि नाटकमे उद्घोषक-निर्भरता एक व्यापक शिल्प-सीमा थिक।

दैवी हस्तक्षेपक वैचारिक विरोधाभास

संग्रहक कतिपय नाटकमे नायिका-कर्तृत्वक एक उच्च घोषणा होइत अछि, मुदा नाट्य-कथामे एक देवता वा दैवी शक्ति आखिर हस्तक्षेप करैत अछि।

श्रुवावतीक ‘आत्मबल’ इन्द्रक स्वीकृतिसँ ‘सिद्ध’ होइत अछि; सुकन्याक ‘विश्वास’ अश्विनी कुमारक औषधि-ज्ञानसँ च्यवनकें यौवन दैत पुरस्कृत होइत अछि; अष्टावक्रकें पितृ-श्राप नदी-स्नानसँ दूर होइत अछि। एहि दैवी-पुरस्कार-क्रमसँ एक अनायास संदेश उत्पन्न होइत अछि- ‘प्रेम-निष्ठाकें दैवी पुरस्कार भेटिते अछि’। ई मानव-कर्तृत्वकें स्वायत्त नहि, दैव-निर्भर प्रमाणित करैत अछि।

विद्यापति-पद : अत्यधिक प्रयोगक जोखिम

विद्यापतिक पदक प्रयोग ‘बिदापत’ आ ‘सुकन्या’ दुनूमे अछि। ‘बिदापत’मे ई पूर्णतः सार्थक एवं सुसंगत अछि- विद्यापति स्वयं नाटकक नायक छथि। मुदा ‘सुकन्या’मे विद्यापतिक वसन्त-पद (‘आयल रितुपति राज बसंत’) वातावरण-निर्माणक लेल अछि। एहि उपयोगसँ एक प्रश्न उठैत अछि- की संग्रहकें एकटा विद्यापति-पदक संरक्षण-प्रयोजन अछि? यदि ‘सुकन्या’क वसन्त-वर्णन हेतु मैथिली काव्य-परम्पराक कोनो अन्य पदक प्रयोग कएल जाएत, तँ ‘बिदापत’मे विद्यापति-पदक विशिष्टता आरो अधिक निखरैत।

रंगमंचीय निर्देश : असमान विवरण-स्तर

लोकनाट्य-त्रयीमे मंच-निर्देश (stage directions) अत्यन्त विस्तृत आ विशिष्ट अछि-“गबैत, कुसमा सामर, ठनका-बनका...कुनटा, बुधेसरकें दुलार मलार करैए”। मुदा प्रेम-चतुष्टयमे मंच-निर्देश

प्रायः न्यूनतम अछि-“प्रकाश परिवर्तन”, “संगीत”, “फ्रीज”। ई अन्तर नाट्यकारक दू भिन्न कालक रचना-पद्धतिकें दर्शाबैत अछि, मुदा एहिसँ छोट नाटिकासँ अभिनेताकें कम मार्गदर्शन भेटैत अछि।

उपसंहार : सीमाक संग सम्भावना

प्रथमतः, प्रेम-चतुष्टयमे कतहु-कतहु सन्देश-प्रधानता (उपदेशात्मकता) नाट्य-तनावक स्थान ल’ लैत अछि-विशेषतः समापन-दोहा आ उद्घोषकक टिप्पणी कखनो-कखनो ओहि अर्थकें मुखर क’ दैत अछि जे ध्वनित रहितहुँ अधिक प्रभावी रहितैक। नाट्य-कलाक मर्म ‘देखाबए’मे अछि, ‘कहि देब’मे नहि- एहि कसौटी पर लोकनाट्य-त्रयी प्रेम-चतुष्टयसँ पुष्ट होइत अछि। द्वितीयतः, ‘श्रुवावतीक जय’मे स्त्री-स्वातंत्र्यक प्रखर पाठक संग अग्नि-प्रवेशक रूढ़िक प्रयोग एक वैचारिक तनाव उत्पन्न करैत अछि- यद्यपि नाटक एकरा ‘आत्मबल’क संकल्पक रूपमे प्रस्तुत करबाक प्रयास करैत अछि, तथापि बलिदान-केन्द्रित प्रतीक आधुनिक नारीवादी पाठक संग पूर्ण रूपसँ संगति नहि बैसाबैत अछि- ई प्रश्न खुजल रहैत अछि। तृतीयतः, संग्रहमे स्केल (परिमाण)क असमानता अछि- ‘कुसमा-सलहेस’ सन महाकाव्यात्मक विस्तार आ प्रेम-चतुष्टयक चेम्बर-नाटिका एक्के लाटमे राखल गेल अछि; ई वैविध्य एक दृष्टिसँ संग्रहक सम्पन्नता थिक, मुदा एकर पाठ-अनुभवमे लय-भंग सेहो उत्पन्न करैत अछि। एहि सभ सीमाक बादहुँ ई स्वीकार’ पड़त जे ई कमी कुणालक नाट्य-दृष्टिक मूल बल-मंचनीयता आ लोक-संप्रेषणीयता-क सोझाँ गौण अछि।

संग्रहक सीमा मुख्यतः तीन श्रेणीमे आबैत अछि-

(क) शिल्प-सीमा : उद्घोषक-निर्भरता, ‘बताएब’ बनाम ‘देखाएब’, कतिपय पात्रक एकआयामिता।

(ख) वैचारिक तनाव : अग्नि-प्रवेश-रूढ़ि, पितृसत्तात्मक अनुमोदन-क्रम, दैवी-पुरस्कार-निर्भरता।

(ग) संरचनात्मक सीमा : आकार-वैषम्य, शीर्षक-एकरसता, दोहराओल नाट्य-ढाँचा।

महत्त्वपूर्ण ई जे ई सीमा संग्रहक मूल्यकें नष्ट नहि करैत अछि। कोनो सीमा-रहित रचना-संग्रह नहि अछि- महाकवि विद्यापतिक पदमे सेहो परम्परागत नायिका-साँचाक पुनरावृत्ति अछि; भिखारी ठाकुरक नाटकमे सेहो भाषिक असमानता अछि। कुणालक सीमा बहुधा ओहि स्थानमे अछि जाहिठाम हुनकर महत्वाकांक्षा सर्वाधिक उड़ान भरैत अछि-ई एक रचनाकारक सजीव चिह्न थिक।

एहि सीमाकें चिन्हित करबाक एक व्यावहारिक उद्देश्य सेहो अछि-नाटकक भविष्यक निर्देशक लोकनि एहि सीमाकें मंचन-प्रक्रियामे सम्बोधित कऽ सकैत छथि। अतिरिक्त परिवर्तन-यात्राकें एक समक्ष निर्देशक मूक-दृश्यसँ विस्तारित क’ सकैत छथि; श्रुवावतीक चिता-संकल्पकें एक शक्ति-उद्घोषक रूपमे पुनः-अभिनीत कएल जा सकैत अछि; वंदीक रहस्य-उद्घाटनकें एक विराट नाट्य-क्षणमे

पर्यवसित कएल जा सकैत अछि। यएह जीवित रंगमंचक गुण थिक- प्रत्येक मंचन एक नव ‘संस्करण’ थिक।

उपसंहार

‘कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोट नाटक’ समकालीन मैथिली रंगमंचक एक महत्त्वपूर्ण अवदान थिक-ई लोकनाट्य आ आधुनिक रंगमंचक बीच एक सेतु थिक, जे मिथिलाक ‘नाच’-परम्पराकेँ मात्र संरक्षित नहि करैत, अपितु ओकरा समकालीन वैचारिकतासँ अनुप्राणित क’ पुनर्जीवित करैत अछि। बुद्धि (‘चालिस चोर’), काव्य-चिरंजीविता (‘बिदापत’), अभय-स्वातंत्र्य आ प्रेम (‘कुसमा-सलहेस’) आ स्त्री-कर्तृत्व (प्रेम-चतुष्टय)- एहि चारि स्तम्भ पर ठाढ़ ई संग्रह अंततः एक्के थीसिस दिस अभिमुख अछि- ‘प्रेम’ (व्यापक मानवीय करुणा आ जीवनासक्तिक अर्थमे) सृष्टिक मूल-तत्त्व थिक, आ ‘बुद्धि’ ओकर रक्षक।

लोक-स्रोतक प्रति निष्ठा, सबाल्टर्न आ स्त्री-स्वरक प्रति संवेदनशीलता, शास्त्र-लोक-आधुनिकताक संश्लेषण आ रंगमंचीय व्यावहारिकता-एहि गुण सभक कारणे ई संग्रह विदेह समानांतर-साहित्य-दृष्टिक एक उपयुक्त निदर्शन थिक आ मैथिली नाट्य-समीक्षाक एक अनिवार्य संदर्भ-बिन्दु। एकर अध्ययन-अध्यापन आ पुनर्मंचन मैथिली रंगमंचक जीवंतताक लेल समान रूपसँ आवश्यक अछि।

अध्याय २

चालिस चोर आ गोनू झा उर्फ ज्ञान झाक खिस्सा

लोककलाकारक जीविका, ज्ञानक शक्ति आ रंगमंचीय आत्मचेतना

पहिल मंचन : ४-५ अगस्त १९९३, विद्यापति भवन, पटना • प्रकाशन : भंगिमा, अंक-२२, अगस्त १९९५

१. परिचय आ कथा-संरचना

कुणालक प्रथम नाटक ‘चालिस चोर आ गोनू झा उर्फ ज्ञान झाक खिस्सा’ मैथिलीक नाट्य-इतिहासमे एक विलक्षण स्थान रखैत अछि। ई नाटक अपन कथा-वस्तुसँ बेसी अपन ‘कथा कहबाक ढंग’क कारणे महत्त्वपूर्ण अछि। नाटकक आरम्भमे एक मेटाथिएट्रिकल (आत्म-संदर्भी) युक्तिसँ होइत अछि- तीन गोटा ‘भाँट’ (यशोगायक/परम्परागत कवि-गायक) मंच पर अबैत छथि, दर्शकक समक्ष अपन निरर्थकताक विलाप करैत छथि, आ जखन ओ बुझैत छथि जे हुनकर पारम्परिक कवित-पाठसँ कतहु असरि नहि पड़ैत, तखन ओ निर्णय करैत छथि-“जै हमरा लोकनि नाटक करी तँ केहन रहतै!” एहिसँ आरम्भ होइत अछि एक दोसर कथा-भाँटक कथा (बाहरी वृत्त) आ मिथिलाक चिर-परिचित लोक-तर्कशास्त्री गोनू झाक कथा (भीतरी वृत्त)।

भीतरी कथाक प्रमुख अवयव-प्रारम्भमे एक बाल-परीक्षा दृश्य (जाहिमे हरबाह चतुरतासँ सिद्ध करैत अछि जे बच्चा केकर अछि); तकर बाद ‘भुनभुनादेव’ सुबेदारक दरबारमे बुद्धिक अपमान; फेर कविराज लोकनिक गोनू-शरण; गढ़ घुसकियाहीमे न्याय-यात्रा; चोरक टोलीक आपसी सत्ता-संघर्ष (दुरमतिया बनाम देबहा); गोनूक काली-माता स्वप्न; आ अंतमे एक कुटिल अभिषेक-विधिसँ चोर सभकेँ परास्त करबाक दृश्य। नाटककारक एक विशेष टिप्पणी महत्त्वपूर्ण अछि- एहि नाटककेँ एक अभिनेता द्वारा बहु-पात्रीय अभिनयमे खेलल जा सकैत अछि, आ एकर तीन टा काल-संस्करण (४५/६०/९० मिनट) आ एक ध्वनि-नाट्य शृंखला (१३ प्रकरण रेडियो पर प्रसारित) सेहो अछि।

नाटकक मूल प्रश्न-कलाकेँ के पोसत? राज्य, समाज, वा स्वयं कलाकार? आ एहि जीवन-संघर्षमे ‘बुद्धि’ (ज्ञान) की अन्तिम आ सर्वोच्च शक्ति थिक?- यएह प्रश्न चारू नाट्य-परम्पराक समीक्षाक केन्द्रमे रहत।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ नाट्यशास्त्र : रस-निष्पत्ति आ पात्र-प्रकार

भरतमुनिक ‘नाट्यशास्त्र’ (अनुमानित द्वितीय शती ईसापूर्व—द्वितीय शती ईसवी) रसकें नाट्यक आत्मा कहैत अछि—“रसो नाट्यस्य जीवनम्”। एहि नाटकक प्रधान रस ‘हास्य’ थिक, मुदा ओ एकल नहि अछि। भरत हास्यक छह विभेद देखबैत छथि जाहिमे ‘परस्थ हास्य’ (दोसर पर निर्देशित हँसी) एतय केन्द्रीय अछि- बुड़िराज, भुनभुनादेव, दुरमतिया आ चोर-दलक मूर्खताक चित्रण एहि वर्गमे आबैत अछि। संग-संग ‘आत्मस्थ हास्य’ (स्वयं पर हँसब) सेहो अछि- भाँटक आत्म-विडम्बना एकर उदाहरण अछि।

हास्यक आलम्बन विभाव थिक- भुनभुनादेव आ बुड़िराजक विसंगत आचरण (“राजन्, अहाँक नाम ‘बुड़िराज’ रखैत छी किएकि हमरा अधिक नीक लगैए”), दुरमतियाक हठधर्मिता आ रनूभनूक असहाय प्रहसन। ‘वात्स्यायन’क कामसूत्र-परम्पराक ‘शृंगार’ एतय नहि- ई हास्य-प्रधान नाटक अछि। मुदा ‘वीर-रस’क एकटा अद्भुत संस्करण अवश्य अछि- गोनूक वीरता शस्त्र-बलक नहि, युक्ति-बलक थिक। भरत ‘धीर-ललित’ नायकक लक्षण कहैत छथि- शांत, विनोदी, बुद्धिमान-यएह गोनूक प्रकृति थिक।

विदूषक-परम्परा- भरतक नाट्यशास्त्रमे ‘विदूषक’ (vidūṣaka) एक विशिष्ट पात्र-प्रकार थिक- बहुधा ब्राह्मण, हास्यास्पद वेश, परंतु बुद्धिमान आ नायकक मित्र। गोनू झा आंशिकतः एहि परम्पराक उत्तराधिकारी थिकाह- मुदा कुणाल एकरा लोक-वास्तवाद (folk realism) मे पुनर्परिभाषित करैत छथि। गोनू न्यायालयी विदूषक नहि, अपितु माटिसँ जुड़ल जन-तर्कशास्त्री छथि।

२.२ प्रहसन/भाण आ लोकधर्मी शिल्प

संस्कृत-नाट्यक ‘प्रहसन’ विधा (हास्य-प्रधान एकांकी/बहुअंकी नाटक) एहि रचनाक निकटतम शास्त्रीय समकक्ष थिक। भरत प्रहसनकें ‘त्रिविध हास्य’ (मन, वचन, शरीर) क सम्मिश्रणसँ निर्मित बताबैत छथि। कुणालक नाटकमे तीनू उपस्थित अछि- भाँटक वाक्-क्रीड़ा (वचन-हास्य), चोरक असंगत क्रिया (शरीर-हास्य), आ गोनूक काली-माता-प्रसंगक मानस-विनोद।

नाट्यशास्त्रक ‘लोकधर्मी’ (लोक-परम्पराक अनुसरण) बनाम ‘नाट्यधर्मी’ (शास्त्रीय अभिनय-रीति) क भेद एहि नाटककें स्पष्टतः ‘लोकधर्मी’ शिवरमे राखैत अछि। दर्शककें सीधा सम्बोधन, गीत-प्रयोग, सपना-दृश्य, नाम-विडम्बना (भुनभुनादेव, बुड़िराज, दुरमतिया)- ई सब लोकधर्मी प्रविधि थिक जे नाट्यशास्त्रक शास्त्रीय मानदण्डसँ भिन्न मुदा ततबे वैध आ परम्परा-सम्मत अछि।

२.३ ध्वनि आ वक्रोक्ति

आनन्दवर्धनक ‘ध्वन्यालोक’ (नवम शती) क ‘ध्वनि-सिद्धांत’-जाहिमे शब्दक व्यंजनार्थ (ध्वनित/सूचित अर्थ) अभिधा आ लक्षणासँ उत्कृष्ट घोषित होइत अछि- एहि नाटकमे अनेक स्तर पर क्रियाशील अछि।

शीर्षकक ‘ज्ञान झाक खिस्सा’- अभिधातः एक व्यक्तिक कथा, परंतु ध्वनि-अर्थमे ‘ज्ञान/बुद्धि’क कथा। नाटकक समापन-गीत यएह ध्वनिकें मुखर करैत अछि-“बुद्धि सँ नई पैघ कोनो बल होइ छै।” एहि शब्द-ध्वनिमे समग्र नाटकक तात्पर्य संग्रहित अछि।

कुन्तकक ‘वक्रोक्ति-जीवित’ (दशम शती) जे वक्रता-सिद्धांत प्रस्तुत करैत अछि- अभिधेय-वस्तुक चमत्कारपूर्ण, आह्लादक अभिव्यक्ति-ओ एतय बहुल मात्रामे उपस्थित अछि। भुनभुनादेवक पूरा चरित्र एक ‘नाम-वक्रोक्ति’ थिक। गोनूक काली-माताक संग संवाद-

"हे माता! जखन आहाँ केँ सर्दी लगैत हैत तँ... सब हाथ केँ अस्त्र-शस्त्र मे बझौने छी। तखन नाक सँ पोटा कोना पोछैत हैब!"

-एहि वाक्यमे आस्था आ हास्यक, भक्ति आ बुद्धिक, देवत्व आ मानवीयताक जे वक्र मिश्रण अछि, ओ ‘वक्रोक्ति’क उत्कृष्ट उदाहरण थिक। एतय भय कहियो नहि आबैत- अभयक वक्रोक्ति थिक ई।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांत

३.१ अरस्तू : अनुकरण, विप्रतिसार आ परिशोधन

यूनानी दार्शनिक अरस्तू (३८४-३२२ ईसापूर्व) अपन ‘काव्यशास्त्र’ (Poetics)मे नाटकक आत्मा ‘अनुकरण’ (μίμησις / अनुकृति) कहैत छथि, आ उत्कृष्ट त्रासदीक लेल ‘विप्रतिसार’ (περιπέτεια / परिस्थिति-परिवर्तन) आ ‘पहचान’ (ἀναγνώρισις / अभिज्ञान)क महत्त्व बतबैत छथि। कुणालक ई नाटक अरस्तूक मानदण्डसँ एक अर्थमे ‘विरोधी’ थिक-ई एकलरेखीय त्रासदी नहि, बहुरेखीय हास्य-प्रहसन थिक। अरस्तू ‘एपिसोडिक’ कथा-संरचनाकेँ त्रुटिपूर्ण मानैत छलाह; मुदा लोक-परम्परामे यएह एपिसोडिकता ओकर प्राण थिक।

तथापि अरस्तूक परिशोधन/कैथार्सिस- दर्शकक दमित भावनाक मोचन-एतय एक कॉमिक रूपमे उपस्थित अछि। चोरी, दारिद्र्य, राज्यक भ्रष्टाचार-एहि तीनू सामाजिक भयक विरुद्ध जे हास्य-कैथार्सिस एहि नाटकमे होइत अछि, ओ सामाजिक-मनोवैज्ञानिक स्तर पर अरस्तूक सिद्धांतसँ समर्थनीय अछि।

नाटकमे ‘अभिज्ञान’-दृश्य उलटा रूपमे अछि- गोनू (अर्द्धनिद्रा) चोर सभकेँ पहिने काली माताक रूप ‘चिन्हैत’ छथि (“काली माता पुरुषक भेष मे आबि गेलीहए!”), तखन ओ ‘नहि-पहचानैत’ छथि। ई

‘reversed anagnorisis’ थिक- पहचानक हास्यात्मक प्रयोग, जाहिसँ भयक स्थान हँसी लैत अछि।

३.२ ब्रेख्त : महाकाव्यात्मक रंगमंच आ विरचन-प्रभाव

जर्मन नाटककार-विचारक बर्टोल्ट ब्रेख्त (१८९८-१९५६) अपन ‘महाकाव्यात्मक रंगमंच’ (Episches Theater / एपिक थिएटर) सिद्धांतमे ‘विरचन-प्रभाव’ (Verfremdungseffekt / अलगाव-प्रभाव) कहलाह- अभिनेता दर्शककेँ बेर-बेर स्मरण करबाबथि जे ओ एक ‘निर्माण’ देखि रहल छथि, कोनो ‘वास्तविकता’ नहि, जाहिसँ दर्शकक आलोचनात्मक बुद्धि जागृत रहए। कुणालक नाटक ब्रेख्तीय विरचन-प्रभावक एक देशज संस्करण थिक।

तीन भाँट मंच पर निर्णय लैत छथि जे ‘नाटक करब’- ई स्वयं विरचन-प्रभावक आरम्भ थिक। पूरा खेलमे ओ कतहु ‘भावमग्न’ नहि होइत छथि, सदा अपन कलाकार-अस्तित्वसँ सचेत रहैत छथि। अंतमे ओ पुनः मंच पर आबि नाटकक वैकल्पिक अंत पर वाद-विवाद करैत छथि आ दर्शककेँ सामाजिक व्याख्या प्रस्तुत करैत छथि-“अशिक्षा आ गरीबी सँ उत्पन्न एहि सामाजिक व्याधि”। ई ब्रेख्तक ‘Gestus’ (भाव-मुद्रा/प्रदर्शन-क्रिया) क उत्कृष्ट उदाहरण थिक-अभिनेता ‘दिखाबैत’ अछि (zeigen), अनुभव नहि करैत अछि।

ब्रेख्त कलाक आर्थिक आधारकेँ सेहो मुद्दा बनबैत छलाह। ‘गमछा-प्रसंग’-जाहिमे भाँट लोकनि स्पष्ट रूपसँ दर्शकसँ पेट भरबाक लेल दान माँगैत छथि- यएह ब्रेख्तीय पारदर्शिता थिक। ब्रेख्त सदा चाहैत छलाह जे कलाक उत्पादन-शर्त (conditions of production) नुकाओल ने जाए- एहि नाटकमे ओ उजागर अछि।

३.३ लायनल एबल : मेटाथिएटर

अमेरिकी आलोचक लायनल एबल (Lionel Abel) अपन ‘मेटाथिएटर’ (Metatheatre, १९६३) ग्रन्थमे ओहि नाट्य-विधाकेँ परिभाषित कएलनि जाहिमे पात्र अपनाकेँ ‘नाटकमे’ जनैत छथि। एहि परिभाषाक अनुसार ‘चालिस चोर’ एक परिपूर्ण मेटाथिएटर थिक- तीन भाँट मंच पर नाटक करबाक निर्णय लैत छथि, नाटकक कथा छाँटैत छथि, आ अंतमे रचना-प्रक्रियाक पारदर्शिता प्रदर्शित करैत छथि। एबल कहलनि जे मेटाथिएटर जीवनकेँ सपना आ नाटककेँ जागरण मानैत अछि- एतय ठीक उल्टा अछि- भाँटक जीवन-संकट ‘असल’ थिक आ गोनूक कथा ‘सपना’ (नाट्य), मुदा दुनूकेँ एक्के रंगमंच धारण करैत अछि।

३.४ बाख्तिन : कार्निवालेस्क

रूसी चिन्तक मिखाइल बाख्तिन (१८९५-१९७५) अपन ‘कार्निवालेस्क’ सिद्धांतमे ओहि सांस्कृतिक क्षणक विश्लेषण कएलनि जाहिमे स्थापित सामाजिक पदक्रम उनटि जाइत अछि, मर्यादाक बान्ह टूटैत अछि, आ लोक-हास्यमे अधिकारक उपहास होइत अछि।

एहि नाटकमे कार्निवालेस्कक अनेक छटा अछि- बुड़िराज नामक ‘बुद्धिहीन मंत्री’, भुनभुनादेव ‘गुनगुनाबएवला-देव’ सुबेदार-दुनूक नाम स्वयं हुनकर सत्ता-पद पर कार्निवालेस्क टिप्पणी थिक। चोर-दलमे जखन नेतृत्वक लेल लोकतांत्रिक मत-गणना होइत अछि- एहि बर्बर समूहमे सेहो ‘राजनीति’ चलैत अछि- ई एक कार्निवालेस्क समानांतर-राज्य थिक।

गमछा-प्रसंग बाख्तिनक दृष्टिसँ ‘श्रेणी-उत्क्रमण’ (inversion of hierarchy) थिक- राजाधिराज आ हुनकर दरबारक उपहास करैत, भाँट-कलाकार दर्शकसँ सोझै आर्थिक सम्बन्ध स्थापित करैत छथि, बिना कोनो मध्यस्थक। ई ‘राज्याश्रय’ बनाम ‘जनाश्रय’क द्वन्द्वकें कार्निवालेस्क रूपमे सोझराइत अछि।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ ली यू : नाटक-संरचनाक तत्त्व

चीनी नाटककार-विचारक ली यू (१६११-१६८०), जिनकर ‘शियान-चिंग-ओउ-चि’ (‘फुरसतिमे मनक बात’) चीनी नाट्य-समीक्षाक आधार-ग्रन्थ मानल जाइत अछि, एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत देलनि-‘झू-नाओ’ (मुख्य-मस्तिष्क / केन्द्रीय विचार-सूत्र)- प्रत्येक उत्तम नाटकमे एक ऐसी केन्द्रीय धुरी होएबाक चाही जाहिसँ समस्त कथा-धागा बन्हाएल हुआए।

एहि नाटकक ‘झू-नाओ’ थिक- ‘बुद्धि बनाम बाहुबल’, तथा एहिसँ जुड़ल ‘लोक-कला बनाम राज्य-शक्ति’। ली यू कहलनि जे झू-नाओ पहिल अंकेमे स्थापित होएबाक चाही- आ कुणाल यएह करैत छथि (भाँटक पहिल दृश्य)।

ली यूक दोसर सिद्धांत ‘मि-झेन-शियान’ (सूक्ष्म-सीवन / stitching) थिक- नाटकक सब अंग एना सूतल होए जे अंतमे सब ताग अपन स्थान पर हो। गमछा-प्रसंग आ भाँट-वृत्तक अंतमे प्रत्यावर्तन एहि ‘मि-झेन-शियान’क उदाहरण थिक- नाटकक बाहरी वृत्त (भाँटक संकट) ठीक ओही स्थल पर समाप्त होइत अछि जाहिठाम आरम्भ भेल छल।

४.२ चोउ पात्र-प्रकार

चीनी शास्त्रीय रंगमंचमे (जिंग-जू/पेइचिंग ओपेरा तथा अन्य रूप) पाँच मूल पात्र-प्रकार होइत अछि- शेंग (पुरुष-नायक), तान (नारी), चिंग (रंगीन मुख), मो (वृद्ध), आ चोउ (विदूषक)। ‘चोउ’ ओ एकमात्र पात्र-प्रकार थिक जे सोझे दर्शकसँ गप करैत अछि, मंच-परम्पराकें तोड़ैत अछि, आ देशज लोकभाषाक प्रयोग करैत अछि।

एहि नाटकक तीन भाँट ‘चोउ’क एक त्रिमूर्ति संस्करण छथि। हुनकर दर्शक-सम्बोधन, भूमिका-परित्याग, गीत-प्रयोग आ स्व-उपहास-सभ ‘चोउ’क चिरपरिचित गुण थिक। एहि समानांतरसँ प्रकट होइत अछि जे लोक-रंगमंचक एक वैश्विक तर्क अछि- प्रत्येक सभ्यताक लोक-रंगमंच एक विदूषक-पात्र रचैत अछि जे ‘चतुर्थ भित्ति’ कें तोड़ैत अछि आ समाजक आत्म-दर्शन करबैत अछि।

४.३ श्यू-शी: रिक्त-पूर्ण सिद्धांत

चीनी सौन्दर्यशास्त्रमे ‘श्यू-शी’ (खाली-भरल, empty-full) क सिद्धांत मूलभूत अछि। मंच पर जे ‘रिक्त’ (श्यू) होइत अछि- दृश्य-सामग्रीक अभाव-ओ कल्पनाद्वारा ‘पूर्ण’ (शी) बनि जाइत अछि। चीनी अभिनेता एक छड़ीसँ ‘नाव’ आ एक कदमसँ ‘यात्रा’ बनबैत छथि।

कुणालक नाटकमे ‘श्यू-शी’क सर्वाधिक मार्मिक उदाहरण अछि- गोनूक कर्पास-बीज वटी। एक मुट्ठी बेकार कपास-बीजकें गोनू दावा करैत छथि जे ई प्रति भरी दस अशर्फीमे बिकाइत अछि। ‘रिक्त’ वस्तु (worthless seed) एक ‘पूर्ण’ (valued commodity) बनि जाइत अछि- ई गोनूक बुद्धि-शक्तिक श्यू-शी-प्रयोग थिक। एहिसँ प्रकट होइत अछि जे कुणालक सौन्दर्य-बोध चीनी लोक-रंगमंचक ‘रिक्तता-सम्पन्नता’क मर्मसँ संगत अछि।

४.४ यी-चिंग: वांग गुओवेई

चीनी काव्यशास्त्री वांग गुओवेई (१८७७-१९२७) अपन ‘रेन-झियान-ची’ ग्रन्थमे ‘यी-चिंग’ (emotion-situation-fusion / भाव-स्थिति-संलय) क सिद्धांत दैत छथि- उत्कृष्ट कलामे भाव आ परिवेश एना मिज्जर होइत अछि जे एक स्वतंत्र सौन्दर्य-लोक (aesthetic sphere) सृजित होइत अछि।

एहि नाटकक ‘यी-चिंग’ थिक-भाँटक मरैत कलाक नस्टाल्जिया आ गोनूक अपरास्त बुद्धिक उल्लासक संयोग। एहि दुनूक मिलन एक विशिष्ट रंगमंचीय भाव-क्षेत्र रचैत अछि जाहिमे विषाद आ उत्साह एकहि संग उपस्थित छथि। वांग ‘यू-वो-झी-चिंग’ (landscape-with-subject) कहैत छलाह-जाहिमे रचनाकारक भाव स्वयं सृष्टिमे विलीन भ’ जाइत अछि। एहि नाटकमे लेखकक मैथिली-कलाकारत्वक संकटक प्रति प्रेम ओहिना संग्रह-रूपमे व्यक्त होइत अछि।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ एली रोज़िक : प्रतिमा-सिद्धांत (Theatrical Iconicity)

इजरायली नाट्य-विद्वान एली रोज़िक (Eli Rozik, जन्म १९३४) अपन ग्रन्थ ‘थिएट्रिकल इमेज’ (Theatrical Image) आ बाद’क लेखनमे एक महत्वपूर्ण सिद्धांत प्रस्तुत कएलनि- रंगमंचक मूल इकाई ‘प्रतिमा’ (iconic image) थिक, ने पाठ आ ने कथा। अभिनेताक शरीर-स्वर-क्रिया एक काल्पनिक संसारक ‘प्रतिमा’ (icon, Peirce-अर्थमे) सृजित करैत अछि- नाटक ई प्रतिमा-प्रणाली थिक।

एहि नाटकमे रोज़िकक सिद्धांतक एक विशेष आयाम थिक- भाँट-प्रतिमा। तीन भाँट मंच पर जे छवि उत्पन्न करैत छथि, ओ मात्र ‘तीन व्यक्ति’क प्रतिनिधित्व नहि, अपितु ‘मरैत भाँट-परम्परा’क समग्र रूपमे एक प्रतिमा थिक। रोज़िक कहलनि जे प्रतिमा ‘symbolic’ (प्रतीक) नहि, ‘iconic’ (प्रतिरूप) होइत अछि- ओ अपन संकेतित विषय-वस्तुसँ समानता (resemblance) आधारित सम्बन्ध रखैत अछि। भाँट अपना कलाक हासकें ‘देखाबैत’ छथि- ई देखाएब प्रतिमा थिक।

नाटककें अपने विषय बनाएब- जखन भाँट निर्णय लैत छथि जे ‘नाटक करब’-एतय रोज़िकक ‘थिएटर-अबाउट-थिएटर’ (theatre about theatre) सिद्धांत लागू होइत अछि। रंगमंच अपन माध्यमकें विषय बनबैत अछि- ई एक उत्कृष्ट ‘प्रतिमात्मक आत्म-प्रतिफलन’ (iconic self-reflexion) थिक।

५.२ शिमोन लेवी : पुरालेख-रंगमंच

इजरायली नाट्य-विद्वान शिमोन लेवी (Shimon Levy, १९३९–२०१७) अपन अनेक ग्रन्थमे ओहि नाट्य-कार्यकें रेखांकित कएलनि जाहिमे रंगमंच एक ‘सांस्कृतिक पुरालेख’ (cultural archive) बनैत अछि- ओहि परम्परा, स्मृति आ अभ्यासक जीवित संग्रहस्थल जे अन्यथा विस्मृत भ’ जैत। लेवीक परिप्रेक्ष्यमे, रंगमंच मात्र ‘वर्तमानक घटना’ नहि, अपितु ‘अतीतक स्मृतिक प्रदर्शन’ (performance of remembered past) सेहो थिक।

एहि नाटकमे भाँट-परम्परा- जे मिथिलाक यशोगायक कुलक शताब्दी-पुरान जीविका-परम्परा थिक- अपन हास-क्षणकें रंगमंच पर ‘पुरालेखित’ करैत अछि। दर्शक जे देखैत छथि, ओ भाँटक एक ‘जीवित-मृत्यु-क्षण’क प्रतिमा थिक। एहि नाटकक मंचन (पटना, १९९३) भाँट-परम्पराक एक जीवित नमूना संरक्षित करैत अछि- भलें भाँट मंच पर विलाप कर’ रहल होथि।

५.३ हिब्रू रंगमंचक भाषा-पुनरुद्धार-समानांतर

इजरायली रंगमंचक इतिहासक सब सँ महत्त्वपूर्ण आयाममे एक थिक-हिब्रू भाषाकें जीवित रंगमंचक माध्यम बनाएब। ‘हबीमा’ (Habima, मास्को, १९१७; बादमे इजरायलक राष्ट्रीय रंगमंच) हिब्रू भाषामे प्रयोग करैत एक मृत-प्रायः भाषाकें नाट्य-भाषाक रूपमे पुनर्स्थापित कएलक।

कुणालक नाटक आ ‘भंगिमा’ रंगमण्डलीक पटना-मंचन (१९९३) एकर समानांतर थिक। हिन्दी-प्रभुत्ववाला पटनाक सांस्कृतिक वातावरणमे मैथिलीमे नाट्य-प्रस्तुति एक भाषा-राजनीतिक कार्य थिक-मैथिलीकें ‘बोलीमात्र’ नहि, एक ‘रंगमंच-योग्य’, ‘दर्शक-योग्य’, ‘साहित्यिक भाषा’क रूपमे प्रतिष्ठित करबाक सांस्कृतिक-राजनीतिक प्रयास। एहि दृष्टिसँ भंगिमाक भूमिका हबीमाक भूमिकासँ सादृश्य रखैत अछि।

५.४ साक्षी-रंगमंच (Witness Theatre) : गमछाक अर्थनीति

इजरायली नाट्य-परम्परामे ‘साक्षी-रंगमंच’ (Witness Theatre / נאָטן) एक महत्त्वपूर्ण विधा बनल-जाहिमे रंगमंच एक कठोर सामाजिक यथार्थक ‘गवाह’ बनैत अछि आ दर्शककें ओहि यथार्थक प्रति उत्तरदायी बनाबैत अछि।

नाटकक अंतिम गमछा-प्रसंग-जाहिमे भाँट लोकनि स्पष्ट रूपसँ कहैत छथि जे “हमरा लोकनिक पेट तखने भरत जखन दर्शकगण कृपा करताह”-एक ‘साक्षी-क्षण’ थिक। ई रंगमंचक आर्थिक भेद्यताकें (economic vulnerability of performing artists) सार्वजनिक करैत अछि आ दर्शककें ‘गवाह’ बनबैत छथि। ई क्षण मात्र हास्य नहि-एहिमे कला-जीवनक एक कठोर सत्यक स्वीकृति अछि।

एहि दृष्टिसँ देखला पर नाटकक अंत एक ‘राजनीतिक कार्य’ बनि जाइत अछि- दर्शककें ‘साक्षी’ बनेबाक आ उत्तरदायित्वक ‘आमंत्रण’।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण : एक तुलनात्मक मूल्यांकन

चारू परम्पराक आलोककें एक साथ धरि राखि देखी तँ ‘चालिस चोर आ गोनू झा’ एक बहुस्तरीय रचना थिक-ओ समान रूपसँ भारतीय रस-वक्रोक्ति, ब्रेख्तीय विरचन-प्रभाव, चीनी श्यू-शी, आ इजरायली साक्षी-रंगमंचक मानदण्ड पर उत्तीर्ण होइत अछि।

भारतीय दृष्टि-हास्य + वीर रसक असाधारण मिश्रण; विदूषक-परम्पराक लोक-रूपान्तरण; ध्वनि-सिद्धांत द्वारा ‘बुद्धि’ शब्दक अर्थ-विस्तार।

पाश्चात्य दृष्टि-परिपूर्ण ब्रेख्तीय 'एपिक थिएटर'; मेटाथिएटरक क्लासिक उदाहरण; बाख्तिनीय कार्निवालेस्क।

चीनी दृष्टि-चोउ-पात्र-प्रकारसँ भाँटक उत्कृष्ट साम्य; श्यू-शी सौन्दर्य-दर्शन; यी-चिंगक विषाद-उल्लास संयोग।

इजरायली दृष्टि-रोजिकक प्रतिमात्मक आत्म-प्रतिफलन; लेवीक पुरालेख-रंगमंच; हबीमा-सादृश भाषा-राजनीति; गमछाक साक्षी-क्षण।

चारू परम्पराक एक साझा निष्कर्ष अछि- यएह नाटक मात्र 'गोनू झाक खिस्सा' नहि, अपितु 'रंगमंचक खिस्सा' थिक- ओकर संकट, ओकर अर्थनीति, ओकर जीवन-शक्ति, आ ओकर सामाजिक कर्तव्यक कथा। एहि अर्थमे ई नाटक एक नाट्य-घोषणापत्र (theatrical manifesto) सेहो थिक- जे 'बुद्धि'कें, लोक-कलाकारक हास्य-तर्ककें, समस्त बाधाओंक विरुद्ध ठाढ़ होएबाक शक्ति घोषित करैत अछि।

अध्याय ३

बिदापत : लोक आ शास्त्रक रंगसंवाद

विद्यापति, लोकस्मृति आ बहुसांस्कृतिक रंगदृष्टि

पहिल प्रदर्शन : ३० सितंबर २००२, विद्यापति भवन, पटना • प्रकाशन : अंतिका, जनवरी-मार्च २००३

१. परिचय आ कथा-स्थापत्य

कुणालक द्वितीय नाटक 'बिदापत' (= विद्यापतिक लोकोच्चरित रूप) अपन शिल्प-वैविध्यमे संग्रहक सर्वाधिक परिष्कृत कृति थिक। 'बिदापत नाच' -मिथिला-बंगालक प्रसिद्ध लोक-रंगमंच-परम्पराक -शिल्पमे लिखल एहि नाटिकाक समय-सीमा नाटककार स्वयं स्पष्ट करैत छथि -ई.सं. १४००-१४५०। मुदा कुणालक महत्वाकांक्षा ऐ सँ बेसी अछि- ओ एक जीवनीपरक नाटक (biography-play) मात्र नहि लिखैत छथि, अपितु विद्यापतिक काव्यक रंगमंचीय भाष्य रचैत छथि।

नाटकक स्थापत्य (architecture) तीन स्तर पर काज करैत अछि। बाहरी स्तर -सूत्रधार-नटीक संवाद-चौखट, विदूषक-सदृश विपटाक व्याघात (interruption), पूर्वरंगक शास्त्रीय प्रदर्शन। मध्य स्तर -कथा-वस्तुक अभिनय (विद्यापति, शिवसिंह, लखिमा, उगना, मंदाकिनी, कालिंदी, अमियकर आ दरबारी पात्र)। भीतरी स्तर - विद्यापतिक स्वयं पदक अंतर्गमन (embedded performance) जे कथाक भावात्मक धुरी थिक। एहि तीनू स्तरक अन्योन्य-क्रियामे नाटकक रंगमंचीय ऊर्जा उत्पन्न होइत अछि।

कथाक पाँच मुख्य अक्ष - (१) विद्यापति आ शिवसिंहक मित्रता, (२) जौनपुर-सुलतानक न्यायालयमे विद्यापतिक काव्य-बल द्वारा शिवसिंहक मुक्ति, (३) उगना-महादेवक अन्तर्कथा, (४) लखिमाक षड्यंत्र-प्रतिरोध आ शिवसिंहक अन्तर्धान, (५) विद्यापतिक ३२-वर्षीय शोक आ काव्य-अमरत्वक उद्घोषणा। एहि पाँचू अक्षकें सूत्रधार-नटी-विपटाक त्रिभुज नाटकक बाहरी समापन (frame) दैत अछि।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ पूर्वरंग आ दशरूपक-परम्परा

भरतमुनिक नाट्यशास्त्र (अनुमानित द्वितीय शती ई.पू.–द्वितीय शती ई.सं.) नाटकक आरम्भमे ‘पूर्वरंग’ (preliminary entertainment) अनिवार्य मानैत अछि - जाहिमे नांदी (auspicious verse), सूत्रधार-प्रवेश आ प्रस्तावना सम्मिलित होइत अछि। कुणाल एहि शास्त्रीय संरचनाकेँ ने मात्र अपनाबैत छथि, अपितु ओकर लोकनाट्य-रूपांतरण प्रस्तुत करैत छथि। देवी-वंदना, भैरवी-स्तुति, तखन सूत्रधारक प्रस्तावना -ई क्रम नाट्यशास्त्रक अनुगामी अछि।

दशरूपकक दृष्टिसँ धनञ्जयक ‘दशरूपक’ (दशम शती) नाटकक दस विभेद करैत अछि। ‘बिदापत’ क शीर्षक-पृष्ठ एकरा ‘नाटिका’ कहैत अछि- जे दशरूपकक एक प्रकार थिक, हास्य-प्रधान, लघु, वियोगान्त, नायक-नायिका दुनूक व्यथा-भोग। ‘बिदापत’ एहि परिभाषामे आंशिक रूपे बैसैत अछि - वियोग आ दुखान्त मुदा हास्यक स्थानमे करुण। अभिनवगुप्त जखन दशरूपकमे ‘नाटिका’क व्याख्या करैत छथि, कहैत छथि जे एतय नायक ‘विलक्षण’ होएबाक चाही - विद्यापति यएह थिकाह।

२.२ रस-निष्पत्ति : करुण, शृंगार आ शान्तक त्रिवेणी

एहि नाटकक प्रधान रस ‘करुण’ थिक - शिवसिंहक अन्तर्धान, लखिमाक ३२-वर्षीय प्रतीक्षा, विद्यापतिक जीवनक अंतिम एकाकी स्थिति। भरत करुण-रसक ‘स्थायी भाव’ शोक मानैत छथि, आ एकर विभाव (उद्दीपन) अप्रियक स्मरण। किन्तु एहि नाटकमे करुणक तल अभिनवगुप्तक ‘शान्त-रस’ दिस घुर्दैत अछि -समाजीक समापन-गायन जे विद्यापति, शिवसिंह, लखिमा, विपटा सभकेँ ‘काव्य-पदमे अमर’ घोषित करैत अछि, ओ शान्त-रसक आत्मविश्राम थिक।

अभिनवगुप्त (९५०-१०२० ई.सं.) अपन ‘अभिनवभारती’ (नाट्यशास्त्रक टीका) मे रस-सिद्धांतक व्याख्या करैत कहलनि जे रस ‘अभिव्यक्त’ होइत अछि, ‘उत्पन्न’ नहि -ओ दर्शकक चेतनामे पहिनिहियेसँ विद्यमान छल, नाटक ओकरा जागृत करैत अछि। ‘बिदापत’मे विद्यापतिक वास्तविक पदक प्रयोग एहि ‘अभिव्यक्ति’केँ शक्तिशाली बना दैत अछि - दर्शकक सुप्त काव्य-स्मृति नाट्य-प्रदर्शनसँ जागि उठैत अछि।

शृंगार-रस विद्यापतिक पदक माध्यमसँ - विशेषतः “नव वृन्दावन, नव-नव तरुण, विहरइ नवल किशोर” आ “चाँद सार लए मुख घटना करू” - प्रवाहित होइत अछि। मुदा ई शृंगार लौकिक नहि,

भक्ति-शृंगार थिक, जकर लक्ष्य राधा-कृष्ण-लीलाक माध्यमसँ सार्वभौम प्रेम थिक। एहि तरहें शृंगार आ भक्ति एकठाम विलीन भ' जाइत अछि - ई संस्कृत अलंकारशास्त्रक 'शृंगार-भक्ति-योग' थिक।

२.३ ध्वनि-सिद्धांत : 'बिदापत' शब्दमे तीन अर्थक संकुचन

'बिदापत' शब्दक ध्वनि-व्यंजना असाधारण थिक। आनन्दवर्धनक ध्वन्यालोकक परिप्रेक्ष्यमे एहि एक शब्दमे कमसँ-कम तीन अर्थ-स्तर संकुचित अछि -(क) विद्यापति (अभिधा/वाच्यार्थ), (ख) बिदापत नाच -लोकनाट्य-परम्पराक नाम (लक्षणा/लक्ष्यार्थ)- पूर्व ज्योतिरीश्वर बला विद्यापति ई.सं. १४००-१४५० सँ बहुत पाछाँ, (ग) 'बिदा'+ 'पत' अर्थात् 'विदायक प्रभु' वा 'विदा लेएवाला' (व्यंजना) -जे नाटकक करुण अंत (शिवसिंहक अन्तर्धान, काल-विदाइ) क सूचना दैत अछि। ई त्रि-स्तरीय ध्वनि नाटककारक भाषिक-चेतनाक प्रमाण थिक।

नाम-वक्रोक्ति -“विद्यापति, विद्यापति!” बनाम “बिदापत तँ बिदापते छथि!” - एहि दुनूक टकराहटमे कुन्तकोक्त वक्रोक्ति थिक। सूत्रधार शास्त्रीय नाम पर आग्रह करैत रहैत छथि; विपटा लोकोच्चरित नाम पर अड़ल रहैत अछि। ई वाद-विवाद वास्तवमे 'शास्त्र बनाम लोक'क सांस्कृतिक द्वन्द्वक एक हास्यात्मक रूपान्तरण थिक -आ दुनूमे एक्के व्यक्तित्व छथि।

२.४ अन्तर्नाट्य (नाटकक भीतर नाटक)

नाट्यशास्त्रमे 'अन्तर्नाट्य' (play-within-a-play) कोनो अलग विधा नहि, परंतु संस्कृत नाटकमे एकर उदाहरण अछि (जेना भासक नाटकमे स्वप्नदृश्य वा रत्नावलीमे अभिनय)। 'बिदापत'मे दू टा अन्तर्नाट्य उपस्थित अछि। प्रथम -अमियकरक 'स्वाँग' (dramatic imitation), जाहिमे ओ विद्यापति आ सुलतानक भेटकें स्वयं नाट्य-रूप दैत छथि; मिष्ठान खाइत-खाइत ओ पात्र बदलैत जाइत छथि -ई अभिनयक एक देशज रूप थिक। द्वितीय -गौरा-महादेव-नटुआक अन्तर्दृश्य, जाहिमे शिवक निर्धनताक विषयमे गौराक विलाप अभिनीत होइत अछि -ई उगनाक महादेव-पहचान हेतु प्रस्तुति थिक।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांत

३.१ जॉर्ज लुकाच : ऐतिहासिक नाटक आ विश्व-ऐतिहासिक व्यक्तित्व

हंगरीक मार्क्सवादी आलोचक जॉर्ज लुकाच (Georg Lukács, १८८५-१९७१) अपन निबंधमे ऐतिहासिक नाटकक लेल एक मानदण्ड प्रस्तुत कएलनि - नायक एक 'विश्व-ऐतिहासिक व्यक्तित्व'

(welthistorisches Individuum) होएबाक चाही, जे अपन युगक ऐतिहासिक अंतर्विरोधकें अपन शरीरमे जीबैत अछि। विद्यापति ठीक एहन व्यक्तित्व थिकाह - ओ एक दिस निर्भर राज्यमे जीबैत छथि (तिरहुतक जौनपुर-अधीनता), दोसर दिस काव्य-शक्तिमे विश्वास रखैत छथि जे राजनीतिसँ उत्कृष्ट अछि। हुनकर जीवन एहि अंतर्विरोधक मूर्त रूप थिक।

मुदा कुणालक विद्यापति लुकाचक 'विजयी नायक' नहि - ओ एक 'शोकाकुल साक्षी' थिकाह। शिवसिंहक अन्तर्धान ओहि मैत्री-बन्धनक अंत थिक जे कविक जीवनकें अर्थपूर्ण बनेने छल। ३२ वर्षक प्रतीक्षाक बाद जे शान्त-भाव प्राप्त होइत अछि, ओ लुकाचक त्रासदी-नायकसँ भिन्न - ओ एक पूर्वीय, ध्यानमग्न नायकक त्रासदी थिक।

३.२ नारीवादी पाठ : लखिमाक नायिका

पाश्चात्य नारीवादी नाट्य-आलोचना (केट मिलेट, एलेन मॉर्टन, शारोन फ्रेडमैन आदि) ओहि नाट्य-पाठक पुनर्पाठमे रुचि रखैत अछि जाहिमे ऐतिहासिक महापुरुषक छायामे स्त्री-पात्र गौण भ' जाइत अछि। कुणाल एहि प्रवृत्तिकें सचेत रूपसँ उलटैत छथि।

लखिमाक पात्र तीन कारणसँ नारीवादी दृष्टिसँ उल्लेखनीय अछि। प्रथम - ओ मंत्री-संरक्षण अस्वीकार करैत स्वयं षड्यंत्रक 'पाठ' करैत छथि -“..लोकनि महाराज-महारानी-महाकविक त्रिमूर्तिकें खण्डित करबाक सुअवसर बुझि रहल छथि।” द्वितीय - हुनकर प्रतीक्षा परम्परागत पतिव्रताक निष्क्रियता नहि, अपितु एक स्वेच्छापूर्ण दृढ़-संकल्प थिक। तृतीय - परम्परागत आख्यानमे लखिमा बहुधा सती-गाथाक केन्द्रमे छथि; कुणाल एहिसँ बाहर निकलि हुनकर जीवन-प्रतीक्षाकें केन्द्रमे रखैत छथि।

३.३ पियर नोरा : स्मृति-स्थल (Lieux de Mémoire)

फ्रांसीसी इतिहासकार पियर नोरा (Pierre Nora, जन्म १९३१) अपन 'लियो दे मेमोयर' (Lieux de mémoire) ग्रन्थमे 'स्मृति-स्थल' (memory site) क सिद्धांत प्रस्तुत कएलनि - ओ स्थल, वस्तु वा पाठ जाहिमे सामूहिक ऐतिहासिक स्मृति संग्रहित आ क्रियाशील होइत अछि।

विद्यापतिक पद एहि नाटकमे एक प्रमुख 'स्मृति-स्थल' थिक। जखन समाजी “नव वृन्दावन, नव-नव तरुण, विहरइ नवल किशोर” गाबैत अछि, वा जखन लखिमाक स्मृतिमे शिवसिंहक पद “आरे-आरे भमरा, तोहे हित हमरा” उभरैत अछि -ओ क्षण एकहि संग इतिहासक स्मृति आ वर्तमानक जीवन-अनुभव थिक। नाट्य-प्रदर्शन एहि ६०० वर्षक दूरीकें ‘वर्तमान क्षण’ मे परिणत करैत अछि। एहि अर्थमे

‘बिदापत’ केवल विद्यापतिक नाटक नहि, मैथिली भाषा-समाजक सामूहिक स्मृतिक नाट्य-प्रस्तुति थिक।

३.४ ब्रेख्त आ आत्म-दूरी : विपटाक भूमिका

प्रथम नाटकक भाँट-त्रयीक भूमिका ‘बिदापत’मे सूत्रधार-नटी-विपटाक त्रिभुज द्वारा निभाओल जाइत अछि। विपटाक ‘गड़ी आगाँ बढाउ’क अनवरत आग्रह ब्रेख्तीय विरचन-प्रभावक एक सटीक देशज रूपान्तरण थिक - ओ दर्शककेँ कथामे पूर्णतः विलीन हुअएसँ रोकैत अछि, सदा मोन पाड़ैत रहैत अछि जे ई एक ‘निर्माण’ थिक।

मुदा ब्रेख्तसँ एक महत्त्वपूर्ण भेद अछि - ब्रेख्त चाहैत छलाह जे विरचन-प्रभाव दर्शकक ‘आलोचनात्मक बुद्धि’ जगाबए। विपटाक व्याघात एहिसँ भिन्न - ओ बुद्धि नहि, उल्लास जगाबैत अछि। विपटा एक ‘लोक-विरचनकारी’ (folk-alienator) थिकाह जे कलाक अभिजन-गरिमाकेँ ‘गड़ी’ (बैलगाड़ी) आ ‘खिस्सा’ (कथा)क स्तर पर ल’ अनैत अछि। ई एक सौन्दर्यशास्त्रीय भेद थिक जे पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांतसँ एहि नाटकक मौलिकता स्थापित करैत अछि।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ साइजी-चियारेन: कवि-प्रतिभा आ प्रेम-कथाक परम्परा

चीनी शास्त्रीय नाट्य-परम्पराक -विशेषतः मिंग-किंग कालीन कुनछू (Kunqu opera) क -एक प्रमुख नाट्य-ढाँचा ‘साइजी-चियारेन’ (brilliant scholar meets beautiful lady) थिक। एहिमे एक कवि-विद्वान आ एक सौंदर्यवती नायिकाक प्रेम-कथाक माध्यमसँ काव्य-शक्ति आ प्रेम-मूल्यक प्रतिष्ठा होइत अछि।

‘बिदापत’ एहि परम्पराक एक विस्थापित (displaced) संस्करण थिक। विद्यापति ‘साइजी’ छथि -तर्कशास्त्री नहि, काव्यशक्तिसम्पन्न; लखिमा ‘चियारेन’ नहि, अपितु एक स्वाभिमानी राजमहिषी। मुदा दुनूक सम्बन्धमे ओ गहीर विश्वास आ मैत्री-प्रेम अछि जे ‘साइजी-चियारेन’ परम्पराक मूल तत्त्व थिक। शिवसिंहक अन्तर्धान ऐ परम्पराकेँ एक त्रिकोणमे बदलि दैत अछि - दुनूक मिलनक केन्द्रमे एक तेसर उपस्थित छल जे अनुपस्थित भ’ गेलाह।

४.२ झी-यिन: परम-सम्वाद आ तकर अनुपस्थिति

चीनी सांस्कृतिक परम्परामे ‘झी-यिन’ (one who truly hears/understands) एक गहन सम्बन्ध थिक - ओ व्यक्ति जे कलाकारक कलाकें ओकर सम्पूर्ण गहराईमे बुझैत अछि। प्रसिद्ध किंवदन्ती अछि जे वीणावादक ‘बो-या’ अपन एकमात्र ‘झी-यिन’ ‘झोंग-जिछी’ क मृत्युक बाद अपन वीणा तोड़ि देलनि - “जे सुनि सकैत छल से नहि रहल, वाद्य किएक बजाउ।”

विद्यापति-शिवसिंहक सम्बन्ध ठीक एहि ‘झी-यिन’ आदर्शक अवतरण थिक। शिवसिंह विद्यापतिक कविताक परम-श्रोता, परम-रसिक आ परम-संरक्षक छलाह। हुनकर अन्तर्धानसँ विद्यापतिक काव्य-जीवन एक प्रकारे अनाथ भ’ जाइत अछि - “उगना रे मोर कतए गेलाह” - ई एहि ‘झी-यिन-वियोग’क विलाप थिक। बो-याक वीणा तोड़ल जेकाँ विद्यापतिक पदक स्वर शोक-गर्भित भ’ जाइत अछि।

४.३ झेजीशी आ बहु-स्तरीय प्रदर्शन

चीनी लोक-रंगमंचमे ‘झेजीशी’ (excerpt-play) परम्परा प्रसिद्ध थिक - एक विस्तृत महाकाव्यात्मक नाट्य-चक्रसँ एक स्वतंत्र, आत्म-निहित अंश चुनि क’ खेलल जाइत अछि। एहि नाटकमे तीन टा ‘झेजीशी’ स्पष्टतः उपस्थित अछि - (क) अमियकरक स्वाँग (सुलतान-दरबार प्रसंग), (ख) गौरा-महादेव-नटुआक अन्तर्नाट्य (उगना-उद्धाटनक पूर्व-तैयारी), (ग) सूत्रधार-नटीक कृष्ण-राधा-रास (पूर्वरंग)।

ई स्तरित प्रदर्शन (layered performance) एकहि रंगमंच पर अनेक कथा-भूमि एकहि संग सक्रिय रखैत अछि। चीनी नाट्य-सिद्धांत एहि बहुस्तरीयताकें (xìzhōngxì, play within play) कहैत अछि। भारतीय परम्परामे एकर अनुरूप ‘नाट्यमे अभिनय-प्रसंग’ थिक, मुदा चीनी अवधारणा एकर स्तर-विमर्शक अधिक सटीकतासँ परिभाषित करैत अछि।

४.४ बेई-हुआन-ली-हे: चारिटा मौलिक नाट्य-दशा

चीनी नाट्य-परम्परामे मानल जाइत अछि जे प्रत्येक उत्तम नाटकमे चारि मौलिक भावावस्था अवश्य उपस्थित होएबाक चाही - ‘बेई’ (शोक), ‘हुआन’ (आनन्द), ‘ली’ (विछोह), ‘हे’ (पुनर्मिलन)। उत्कृष्ट नाटक एहि चारूकें एकहि आख्यान-प्रवाहमे रखैत अछि।

‘बिदापत’मे यएह चारू उपस्थित अछि - ‘हुआन’ (ओइनीक विजय, उत्सव), ‘ली’ (शिवसिंहक अन्तर्धान), ‘बेई’ (विद्यापति आ लखिमाक ३२-वर्षीय शोक), ‘हे’ (काव्यमे पुनर्मिलन - एक आध्यात्मिक, अदृश्य पुनर्मिलन जाहिमे विद्यापति घोषणा करैत छथि जे शिवसिंह अपन पदमे अमर

रहताह)। ई 'हे' लौकिक नहि, आत्मिक थिक - एहि अर्थमे ई चीनी आदर्शक अतिक्रमण करैत एक नव सम्भावना उद्घाटित करैत अछि।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ एस. आन्स्कीक 'दिब्बूक' : मृत प्रेमक रंगमंचीय उपस्थिति

यहूदी-रूसी नाटककार एस. आन्स्की (S. Ansky, १८६३-१९२०) केर 'दिब्बूक' (The Dybbuk, 'Between Two Worlds' / 'दू संसारक बीचमे', १९२०) इब्रानी आ यिदिश रंगमंचक आधार-ग्रन्थ मानल जाइत अछि। एहिमे एक मृत प्रेमीक आत्मा अपन प्रेमिकाक शरीरमे प्रवेश क' रंगमंचीय उपस्थिति बनाबैत अछि। प्रेम मृत्युसँ बलवान - यएह एकर मर्म थिक।

'बिदापत' मे शिवसिंह रंगमंच पर शारीरिक रूपसँ अन्तर्धान होइत छथि, मुदा लखिमाक स्मृतिमे हुनकर उपस्थिति एक 'दिब्बूकीय' (dybbuk-like) रंगमंचीय सत्ता बनि जाइत अछि - जखन शिवसिंहक पद "आरे-आरे भमरा, तोहे हित हमरा" गाबैत हुनकर छाया-रूप प्रकट होइत अछि, ओ क्षण 'दिब्बूक'क रंगमंचीय तर्कसँ समरूप अछि। दुनू नाटकमे प्रेमक भावात्मक सत्य मृत्युक सीमाकेँ तोड़ैत अछि।

५.२ एली रोजिक : 'काव्य-पद'क प्रतिमात्मक सत्ता

एली रोजिक (Eli Rozik) अपन iconicity सिद्धांतमे कहलनि जे रंगमंचक प्रतिमा केवल अभिनेता-शरीरसँ नहि, ध्वनिसँ सेहो उत्पन्न होइत अछि। जखन विद्यापतिक पद समाजी द्वारा गाओल जाइत अछि, तखन ओ पद एक 'ध्वनि-प्रतिमा' (sound-icon) बनि जाइत अछि -ओ केवल संगीत नहि, विद्यापतिक समग्र जीवन-संसारक रंगमंचीय प्रतिरूप थिक।

रोजिकक एक विशिष्ट बिन्दु एतय प्रासंगिक अछि - ओ 'theatrical image' आ 'dramatic text' क बीच अंतर करैत छथि। नाट्य-पाठ (कुणालक लिखित नाटिका) आ रंगमंचीय छवि (विद्यापतिक पद गाबैत अभिनेताक समग्र देह-स्वर-गति) दुनू स्वतंत्र सत्ता थिकाह। एहि नाटकमे ई दुनू सत्ता एक विशेष तनावमे अछि - कुणालक पाठ विद्यापतिक पदकेँ अपन भीतर समाबैत अछि, परंतु पद सदा पाठक नियंत्रण तोड़ि अपन स्वतंत्र काव्य-जीवन जीबैत रहैत अछि।

५.३ हबीमाक भाषा-राजनीतिसँ आगाँ : ‘काव्य-भाषाक पुनर्जन्म’

पूर्वक नाटकक समीक्षामे हम हबीमा (Habima Theatre) सँ भंगिमाक भाषा-राजनीतिक समानांतर देखलहुँ। ‘बिदापत’मे ई समानांतर एक अतिरिक्त स्तर ग्रहण करैत अछि - केवल भाषाक जीवन नहि, ‘काव्य-भाषा’क (poetic language) जीवन। हबीमाक परम्पराक निरन्तरता इजरायलमे हिब्रू काव्य-परम्पराकें रंगमंच पर जीवित रखबाक प्रयाससँ सेहो जुड़ल अछि।

‘बिदापत’क मंचन २००२ (पटना, विद्यापति भवन) विद्यापतिक पदकें रंगमंचीय माध्यमसँ पुनर्जीवित कएलक - ओहि पदकें जे बहुधा पुस्तकालयक वस्तु बनि रहल छल। एहि अर्थमे भंगिमाक यएह नाट्य-कर्म एक ‘काव्य-भाषाक रंगमंचीय पुनर्जन्म’ थिक, जे हिब्रू काव्यक इजरायली रंगमंचीय पुनर्जन्मक समानांतर चलैत अछि।

५.४ उपनिवेश-परोत्तर दृष्टि : कविताक राजनयिक शक्ति

इजरायली रंगमंच-विद्वान अब्राहाम ओज (Avraham Oz) आ अन्यक उपनिवेश-परोत्तर नाट्य-चिन्तन (postcolonial theatre studies) मे ओहि नाट्य-प्रयोगक विशेष स्थान अछि जाहिमे ‘सांस्कृतिक शक्ति’ (cultural power) राजनीतिक वा सैन्य शक्तिकें परास्त करैत अछि।

‘बिदापत’क सुलतान-दरबार प्रसंग एहि दृष्टिसँ उत्कृष्ट अछि। जौनपुर-सुलतान राजनीतिक सत्ता थिकाह; विद्यापति सांस्कृतिक शक्ति। विद्यापति राजनयिक माध्यमसँ नहि, अपितु काव्य-प्रदर्शनक माध्यमसँ शिवसिंहकें मुक्त करबैत छथि -आन्हर रहैत स्नान-दृश्यक पद रचि क’। सुलतानक ‘जे माँगो’क उत्तरमे विद्यापति मित्रक मुक्ति माँगैत छथि, राजसिंहासन नहि। मंत्री टिप्पणी करैत अछि -“जै तिरहुतक राज माँगि लितथिन!”; विद्यापतिक उत्तर -“हमरा तँ सरिपहुँ राज भेटि गेल!” -यएह काव्यशक्तिक उपनिवेश-परोत्तर विजय-घोषणा थिक।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण

चारू परम्पराक दृष्टि एकठाम आनला पर ‘बिदापत’क केन्द्रीय प्रश्न स्पष्ट होइत अछि - ‘काव्य-शक्ति की थिक, आ ओ कोन-कोन रूपमे अपन अस्तित्व सिद्ध करैत अछि?’ प्रत्येक परम्परा एकर उत्तर भिन्न-भिन्न कोणसँ दैत अछि।

भारतीय दृष्टि -काव्य-शक्ति = रस-निष्पत्ति। पद अभिव्यक्त करैत अछि विद्यमान रस। शान्त-रसक चरम अवस्थामे काव्य मृत्युंजयी बनैत अछि।

पाश्चात्य दृष्टि -काव्य-शक्ति = स्मृति-स्थल (Nora) + विश्व-ऐतिहासिक व्यक्तित्वक (Lukács) अभिव्यक्ति + नारीवादी पुनर्पाठ (लखिमा-केन्द्रित)।

चीनी दृष्टि -काव्य-शक्ति = झी-यिन (परम-सम्वाद)क कला। बेई-हुआन-ली-हेक आध्यात्मिक पुनर्मिलन।

इजरायली दृष्टि -काव्य-शक्ति = ध्वनि-प्रतिमाक स्वतंत्र सत्ता (Rozik)। उपनिवेशी-सत्ताकै काव्यसँ परास्त करबाक सांस्कृतिक-राजनयिक विजय।

चारू दृष्टिकोण एकटा साझी गप पर सहमत छथि - विद्यापतिक पद केवल साहित्यिक कलाकृति नहि, एक जीवित सांस्कृतिक-राजनीतिक शक्ति थिक। कुणाल एहि शक्तिकै रंगमंचक माध्यमसँ एक बेर फेर 'जीवित' करैत छथि। एहि अर्थमे 'बिदापत' केवल विद्यापतिक नाटक नहि - ई स्वयं मैथिली रंगमंचक अपन 'अस्तित्व-घोषणा' थिक।

अध्याय ४

कुसमा-सलहेस : लोकगाथा आ जनचेतना

सलहेस-नाच, प्रेम आ लोकनायकक स्वातन्त्र्य

पहिल मंचन : २९-३० अप्रैल १९९७, विद्यापति भवन, पटना • प्रकाशन : अंतिका, अप्रैल-सितंबर २००६

१. परिचय, कथा-संरचना आ ऐतिहासिक-सांस्कृतिक सन्दर्भ

कुणालक तृतीय आ सर्वाधिक विस्तृत नाटक 'कुसमा-सलहेस' संग्रहक हृदय-स्थान रखैत अछि—लगभग ७० पृष्ठक ई नाटक कलात्मक, वैचारिक आ सांस्कृतिक, तीनू दृष्टिसँ संग्रहक केन्द्र-बिन्दु थिक। एकर आधार मिथिलाक दुसाध समुदायक लोक-देवता-नायक 'राजा सलहेस'क महागाथा आ ओहि गाथा पर आधारित लोक-रंगमंच-परम्परा 'सलहेस नाच' थिक।

कथाक भूगोल विराट अछि—महिसौथा, मोरंग, बाघगढ़, रेवा-दाह, भोट/तिब्बत, समदागढ़, पकड़िया, गढ़-तरेगना, रंगीलागढ़—ई स्थान-नाम भारत-नेपाल-तिब्बत धरिक एक भौगोलिक-राजनीतिक संसार रचैत अछि। पात्र-वर्ग सेहो महाकाव्यात्मक अछि—नायक सलहेस, नायिका कुसमा (मालिन), तथा हिरामन (सूग्गा-कथावाहक), विपटा (विदूषक), ठनका (बाघ), बनका (भालु), कुनटा (वनचर), देवी दुर्गा, अनेक राजा-सैन्य-शत्रु।

नाटकक पाँच मुख्य नाट्य-क्रम—(१) पूर्वरंग : समन्वयवादी सुमिरन आ नाटककें आरम्भ करबाक मेटाथिएट्रिकल प्रसंग (विपटा-हिरामन द्वारा); (२) कुसमाक परिचय आ आत्म-शुद्धि-साधना; (३) सलहेसक वीरता, पहिल भेंट, आ दुर्गाक आशीर्वाद; (४) भोट-आक्रमण, षड्यंत्र आ कारागार-बन्धन; (५) स्वाधीन-चेतनाक घोषणा, लोक-एकजुटतासँ विजय, आ प्रेम-तत्त्वक समापन-घोषणा।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ सलहेस-नाच : लोकनाट्यक स्वायत्त सौन्दर्यशास्त्र

भरतमुनिक नाट्यशास्त्र संस्कृत-परम्पराक भीतरसँ नाटकक सिद्धांत रचैत अछि। मुदा मिथिलाक ‘सलहेस नाच’ एक स्वायत्त लोक-नाट्य परम्परा थिक जेकर अपन प्रदर्शन-व्याकरण (performance grammar) अछि। एहिमे—समाजीक सामूहिक गायन (कोरसक भूमिका), सुमिरन (लोकनाट्यक मंगलाचरण जे हिन्दू, मुस्लिम, आ जनजातीय देवताक एकसंग आह्वान करैत अछि), विपटाक विदूषक-भूमिका, हिरामन-सूग्गाक कथावाहक-भूमिका आ सलहेसक प्रवेशसँ पूर्व जय-जयकार—ई सभ लोकनाट्यक अपन नाटकीय संस्कार (ritual performance elements) थिक।

कुणाल एहि सम्पूर्ण लोक-व्याकरणकें प्रामाणिकतासँ अपनेने छथि—शुद्धि, क्रम, गायन, सम्बोधन—सभ लोक-परम्पराक अनुरूप। एहि अर्थमे ई नाटक अभिजन-रंगमंचक लोकनाट्य-अनुकरण नहि, अपितु लोकनाट्यक साहित्यिक पुनर्प्रस्तुति थिक—एहि भेदकें चिन्हनाइ आवश्यक अछि।

२.२ रस-महोत्सव : बहुरंगी रस-संरचना

संस्कृत काव्यशास्त्रक परम्पराक अनुसार उत्कृष्ट नाट्यकृतिक एक ‘प्रधान रस’ होएबाक चाही जकर सेवामे अन्य रस सहायक होइत अछि। ‘कुसमा-सलहेस’क जटिलता ई थिक जे एतय एकल प्रधान रस नहि, रसक एक महोत्सव उपस्थित अछि।

शृंगार (कुसमा-सलहेसक प्रेम—राधा-कृष्णक लोक-प्रतिरूप; “ओ तँ किसुन गोसाँइ छिऐ, आ तौ राधारानी”); वीर (सलहेसक युद्ध-पराक्रम, पराजित शत्रुपर दया—“हारि क’ पड़ाइत सेना केँ खिहारनाइ अनुचित”); अद्भुत (ठनका-बनका-हिरामनक अलौकिक उपस्थिति, दुर्गाक साक्षात्कार); करुण (असम्भव प्रेम—सलहेस विवाहित छथि, कुसमा मालिन छथि, जाति-सीमा बाधक); भक्ति (दुर्गाक आराधना, सुमिरनमे सर्व-धर्म-समन्वय); वीभत्स/भयानक (सूचोगक षड्यंत्र, कारागार-अत्याचार)।

भरत रसक ओ समन्वय स्वीकार करैत छथि जाहिमे ‘अंगी-रस’ (प्रधान) आ ‘अंग-रस’ (सहायक) मिलि एक जटिल रस-अनुभव उत्पन्न करैत अछि। एहि नाटकमे शृंगार आ वीर परस्पर ‘अंगी-रस’ बनि जाइत अछि—दुनूकें एक-दोसरक पूरक बनाबैत दुर्गाक घोषणा मध्यमे अबैत अछि—“मीलिक’ जे

कुसमा सँ आब तों जन-मन मे विचरण करही / मात्र लोकक सुख लेल जीवन अरपन करही”। एतय प्रेम (शृंगार) स्वयं वीर-धर्मक प्रेरणा-स्रोत बनि जाइत अछि।

२.३ सबाल्टर्न-सौन्दर्यशास्त्र : कैनन-विरोध

संस्कृत नाट्यशास्त्रक नायक सामान्यतः ‘राजर्षि’ वा ‘दिव्य’ कुलक होइत अछि। एहि परम्परामे दुसाध नायक नहि। कुणालक सब सँ साहसिक नाट्य-निर्णय यहि थिक जे ओ एक सबाल्टर्न (सामाजिक पदक्रममे अधीनस्थ) समुदायक महागाथाकें ‘महाकाव्यात्मक नाटक’क केन्द्रमे रखैत छथि।

विद्यापति-परम्पराक शृंगार-काव्यमे राधा-कृष्ण आ शिवसिंह-लखिमाक प्रेमकें केन्द्रीयता भेटैत आएल अछि। कुणाल एहिसँ भिन्न मार्ग चुनैत छथि—कुसमाक ‘रधिया’ (राधाक लोक-रूप) आ सलहेसक ‘किसुन गोसाँई’ (कृष्णक लोक-रूप)। ई प्रतीकात्मक प्रतिस्थापन एहि बातक नाट्य-घोषणा थिक जे दुसाध-लोक-परम्पराक प्रेम-कथा मैथिली साहित्यक मुख्यधाराक समतुल्य—वस्तुतः ओकर जड़ि—थिक।

२.४ कुसमाक आत्म-शुद्धि : देशज योगशास्त्र

हिरामन-कुसमाक संवाद (दोसर दृश्य)मे एक उल्लेखनीय आत्म-शुद्धि-अनुक्रम अछि जे योगशास्त्रक लोक-रूपान्तरण थिक—“अपन घर बहारि लैह... इर्ष्या, घमंड, घृणा, लोभ आ मोह बहरेलै... करुणाक जल सँ नीपलौं... सिनेहक चानन सँ सुगन्धित केलहूँ।” ई शारीरिक-क्रिया नहि, आन्तरिक शुद्धिक एक भाव-यात्रा थिक। भारतीय दार्शनिक परम्परामे—विशेषतः भक्ति-परम्परामे—‘हृदय-शुद्धि’ (चित्त-विशुद्धि)कें प्रेम-प्राप्तिक पूर्व-शर्त मानल जाइत अछि।

कुणाल एहि भक्ति-दर्शनकें एक हास्य-फलक पर प्रस्तुत करैत छथि—हिरामन पहिने पुरस्कार माँगैत अछि (सोना, हीराक हार, रूपाक बाटी), तखन मार्गदर्शन करैत अछि। ई लोक-रसिकता भक्ति-दर्शनकें ‘सरल’ नहि, ‘सजीव’ बनाबैत अछि।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धान्त

३.१ ग्रामशी : सबाल्टर्न इतिहास आ जैविक बुद्धिजीवी

इतालवी मार्क्सवादी विचारक आन्तोनियो ग्रामशी (Antonio Gramsci, १८९१–१९३७) अपन ‘प्रिजन नोटबुक’ (Prison Notebooks)मे ‘सबाल्टर्न’ (subaltern, अधीनस्थ/वंचित) समूहक इतिहासकें प्रभुत्ववादी इतिहास-लेखनक विकल्पक रूपमे प्रस्तुत कएलनि। ग्रामशी ‘जैविक

बुद्धिजीवी’ (organic intellectual) कहैत छलाह ओहन व्यक्तिकेँ जे अपन समुदायक सांस्कृतिक अभिव्यक्तिकेँ उच्च साहित्यिक/बौद्धिक स्तर पर लऽ आबैत अछि।

एहि परिप्रेक्ष्यमे कुणाल मैथिली रंगमंचक एक जैविक बुद्धिजीवी छथि—दुसाध सलहेस-महागाथाकेँ, जे पहिने मात्र सलहेस-नाचक सीमित सामुदायिक प्रदर्शन-परम्परामे जीवित छल, ओ उठा क’ विद्यापति भवनक आधुनिक रंगमंच पर लऽ आएल छथि। ई सांस्कृतिक अनुवाद (cultural translation) ग्रामशीक अर्थमे एक राजनीतिक कार्य थिक—सबाल्टर्न स्वर मुख्यधाराक सांस्कृतिक स्थलमे प्रवेश पाबैत अछि।

ग्रामशीक दृष्टिसँ सलहेसक कारागार-भाषण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण क्षण थिक—“हमर प्राण अहाँक मुट्ठी मे भ’ सकैए सम्राट। मुदा हमर विचार आ भावना केँ बान्हल नै जा सकैए।” ग्रामशी ‘सांस्कृतिक आधिपत्य’ (cultural hegemony)क विरुद्ध जे प्रतिरोध-रणनीति बतबैत छलाह, सलहेसक यह वक्तव्य ओकर एक लोक-नाट्य संस्करण थिक।

३.२ जादू-यथार्थवाद : लोक-विश्वास-दृष्टिक रंगमंचीय उपस्थिति

ग्रेट ब्रिटेन-कोलम्बियाई लेखक गार्सिया मार्केस (Gabriel García Márquez, १९२७–२०१४) आ भारतीय-ब्रिटिश लेखक सलमान रुश्दी (Salman Rushdie, जन्म १९४७) अपन कथा-लेखनमे ‘जादू-यथार्थवाद’ (magic realism)क प्रयोग कएलनि—जाहिमे अद्भुत/अलौकिक तत्त्व यथार्थक स्वाभाविक अंग बनि जाइत अछि, बिना कोनो विशेष आश्चर्य वा व्याख्याक।

एहि नाटकमे ठनका (बाघ) आ बनका (भालु) सलहेसक वार्तालाप-साथी छथि, हिरामन (सूग्गा) स्वर्ग-मर्त्यक बीच संदेशवाहक छथि, दुर्गा साक्षात् प्रकट होइत छथि आ लोक-नायककेँ आशीर्वाद दैत छथि—ई सभ दुसाध लोक-विश्वास-दृष्टिक स्वाभाविक तत्त्व अछि, कोनो ‘चमत्कार’ नहि। जादू-यथार्थवादी सिद्धांतक परिप्रेक्ष्यमे एहि तत्त्वकेँ ‘magical’ नहि, ‘folk-cosmological real’ (लोक-ब्रह्माण्ड-वास्तविक) कहनाइ अधिक सटीक हएत।

रुश्दीक एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत थिक जे जादू-यथार्थवाद तखन प्रभावी होइत अछि जखन लेखक स्वयं ओहि ‘जादू’केँ वास्तविक मानैत हो—कोनो बाहरी दृष्टिसँ थोपल अलंकरण नहि। कुणालक नाटकमे ई प्रामाणिकता अछि—ठनका-बनका, हिरामन, दुर्गा सभ कथाक संरचनाक अनिवार्य अंग छथि, सजावटी नहि।

३.३ ब्रेख्त : लेहरस्टुक (शिक्षण-नाटक) आ जन-राजनीति

ब्रेख्त (Brecht) अपन ‘लेहरस्टुक’ (Lehrstück, teaching play)क सिद्धांतमे मानैत छलाह जे रंगमंच एक स्पष्ट राजनीतिक-नैतिक सन्देशक संवाहक बनि सकैत अछि। एहि नाटकमे समाजी आ हिरामन-विपटाक माध्यमसँ अनेक ‘शिक्षण-क्षण’ उपस्थित अछि—सलहेसक ‘भयमुक्त जीवनक मंत्र’, दुर्गाक ‘जन-मनमे विचरण आ लोक-हितक लेल जीवन-समर्पण’क आदेश।

मुदा कुणाल ब्रेख्तसँ एक महत्वपूर्ण बिन्दु पर भिन्न छथि—ब्रेख्त भावात्मक तादात्म्यसँ दूरी चाहैत छलाह; कुणाल प्रेम-भाव आ लोक-सेवाकेँ एकहि सिक्काक दू पट्टा मानैत छथि। लेहरस्टुकक बौद्धिक-राजनीतिक शिक्षण एतय शृंगार-भाव आ भक्ति-रसमे डूमल अछि—ई एक प्रकारे ‘एमोशनल एपिक थिएटर’ थिक जे ब्रेख्तीय श्रेणीसँ परे जाइत अछि।

३.४ होमी भाभा : सांस्कृतिक पहचान आ प्रतिरोध

इण्डियन-ब्रिटिश उत्तर-उपनिवेशवादी विचारक होमी भाभा (Homi Bhabha, जन्म १९४९) अपन ‘द लोकेशन ऑफ कल्चर’ (The Location of Culture)मे ‘तृतीय-स्थल’ (third space) आ सांस्कृतिक संकरता (hybridity) सन अवधारणा प्रस्तुत कएलनि—जाहिमे उपनिवेशित समूह उपनिवेशकारी प्रवचनकेँ आत्मसात करैत ओकर भीतरसँ ओकरा विघटित करैत अछि।

एहि नाटकमे सूच्योगक षड्यंत्र—सलहेसकेँ कुसमासँ अलग करबाक योजना—एक उपनिवेशकारी रणनीति थिक। ओ जनैत अछि जे कुसमाक ‘सिनेह आ ज्ञान’ सलहेसक शक्ति-स्रोत थिक। कुसमाकेँ अलग केलापर सलहेस कमजोर पड़त। यैह भाभाक ‘सांस्कृतिक पहचान-नाश’ (cultural identity erasure) थिक जे औपनिवेशिक शासन अवलम्बित करैत अछि। सलहेस एहि योजनाकेँ चीन्हि जाइ छथि आ घोषणा करैत छथि जे भावना आ विचार बन्धन नहि मानैत अछि।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ यी : धर्म-आचरण आ सैन्य-नैतिकता

चीनी नैतिक-दार्शनिक परम्परामे ‘यी’ (righteousness/duty) एक केन्द्रीय मूल्य थिक। कन्फ्यूशियस परम्परामे ‘यी’क अर्थ थिक—कर्तव्य उचित प्रकारसँ निभाएब, भले ही ओ कठिन

होइक। चीनी लोकनाट्य-महाकाव्यक सर्वप्रसिद्ध नायक ‘गुआन यू’ (Guan Yu / Guan Di) अपन ‘यी’ आचरणक लेल विख्यात छलाह—ओ अपन पराजित शत्रुकेँ सेहो सम्मान दैत छलाह।

सलहेसक यहै ‘यी’-व्यवहार नाटकमे उपस्थित अछि—“हारि क’ पड़ाइत सेना केँ खिहारनाइ अनुचित बात भेलै”। ई केवल कूटनैतिक व्यावहारिकता नहि, एक नैतिक-सैन्य आचरण-सिद्धांत थिक जे भारतीय क्षत्रिय-धर्म आ चीनी ‘यी’-परम्परा दुनूसँ समर्थित अछि। गुआन यूक सन सलहेस सेहो अपन जनसाधारणक लेल एक लोक-देवता बनि जाइत छथि—युद्धक मैदानमे नहि, जनताक हृदयमे।

४.२ हुआलियान : नाटकीय पात्र-वर्गीकरण आ रंग-प्रतीक

चीनी क्लासिकल रंगमंच (जिंगजू/बेइजिंग ओपेरा)मे ‘हुआलियान’ (painted face) पात्र-प्रकार एक विशेष भूमिका थिक—जाहिमे विभिन्न रंगक मुखाकृति पात्रक नैतिक-चारित्रिक स्वभाव सूचित करैत अछि। लाल मुख = साहस आ निष्ठा (गुआन यू); नील/हरियर = दुर्जेय शक्ति; उज्जर = खलनायक/कुटिल; कारी = बलशाली/न्यायकारी।

एहि प्रतीक-व्यवस्थाकेँ ‘कुसमा-सलहेस’क पात्र-वर्गमे अनुवाद कएल जा सकैत अछि। सलहेस = लाल हुआलियान (साहस-निष्ठा); सूचोंग = सफेद हुआलियान (कुटिल-षड्यंत्री); चूहड़मल्ल = नील (सैन्य-बल); कुसमा = ‘तान’ (नारी-भूमिका, परंतु शक्तिशाली—‘वनदेवी’); हिरामन-विपटा = ‘चोउ’ (विदूषक); दुर्गा = ‘उमेन’ (divine appearance, shénmíng)। एहि वर्गीकरणसँ नाटकक पात्र-विन्यास एक सार्वभौम नाट्य-तर्क प्रदर्शित करैत अछि।

४.३ तियानमिंग : स्वर्गीय-आदेश आ नायकक धर्म

चीनी राजनीतिक-दार्शनिक परम्परामे ‘तियानमिंग’ (Mandate of Heaven / स्वर्गीय-आदेश) एकटा महत्वपूर्ण अवधारणा थिक—जे शासक अपन प्रजाक कल्याण करैत अछि, ओकरा ‘तियानमिंग’ प्राप्त अछि; जे ओकरा भ्रष्ट करैत अछि, ओकर ‘तियानमिंग’ नष्ट भ’ जाइत अछि।

दुर्गाक आशीर्वाद एहि नाटकमे ‘तियानमिंग’क अनुरूप थिक—देवी सलहेसकेँ ‘मात्र लोकक सुख लेल जीवन अरपन करबाक आदेश दैत छथि। ई स्वर्गीय-आदेश सलहेसक शासन-शक्तिकेँ वैधता दैत अछि। ओइ विरुद्ध सूचोंग—जे विस्तारवादी, लोभी, प्रजा-पीड़क अछि—क ‘तियानमिंग’ हीन अछि। कुणालक नाटकमे यहै नैतिक-राजनीतिक दर्शन अंततः सलहेसकेँ ‘विजयी’ घोषित करैत अछि—शस्त्र-बलसँ नहि, नैतिक-जनशक्तिसँ।

४.४ मिनजियान : लोक-नायकक नाट्यीकरण-परम्परा

चीनी नाट्य-इतिहासमे लोक-नायकक नाट्यीकरण एक सुदीर्घ परम्परा थिक—‘मियाओ-झी-यिंग-जुंग-झुआन’ (Temple Hero Legends) जे लोक-देवताकें रंगमंचक नायक बनाबैत आएल अछि। सलहेस-नाचसँ एहि नाटकक सम्बन्ध ठीक एहि परम्पराक अनुरूप थिक—एक लोक-देवता (folk deity) पहिने लोक-रंगमंचक नायक बनैत अछि, तखन साहित्यिक रंगमंचक।

चीनी परम्परामे यहै संक्रमण (लोक-मन्दिर-प्रदर्शन → साहित्यिक रंगमंच) ‘गुआन यू’क लोकगाथासँ ‘रोमांस ऑफ द थ्री किंगडम्स’ आ तखन नाट्य-रूपधरबाक धरिक यात्रासँ समानांतर अछि। सलहेस-गाथाक यहै यात्रा—सलहेस-नाच → ‘कुसमा-सलहेस’ (कुणाल, २००६)—एक सांस्कृतिक जीवन-चक्रक अभिव्यक्ति थिक।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ एली रोज़िक : पशु-पात्रक रंगमंचीय प्रतिमात्मकता

एली रोज़िकक प्रतिमा-सिद्धांत (theatrical iconicity) एहि नाटकमे एक असाधारण परीक्षामे पड़ैत अछि—पशु-पात्रक प्रतिमात्मकता। ठनका (बाघ), बनका (भालु) आ हिरामन (सूग्गा) रंगमंच पर अभिनेता-शरीर द्वारा प्रस्तुत होइत छथि। रोज़िकक सिद्धांतक अनुसार, ई पात्र ‘icons’ थिकाह—ओ जे ‘देखाबैत’ छथि ओ एक काल्पनिक-पशु-जीवनक प्रतिरूप थिक, ने कि अभिनेता-शरीरक प्रतिरूप।

एहिसँ अधिक महत्त्वपूर्ण—रोज़िक कहलाह जे रंगमंच मानव-पशु सीमाकें लाँघबामे सक्षम अछि कारण प्रतिमा (icon) वास्तविकताक सीमासँ मुक्त होइत अछि। ठनका-बनका-हिरामनक उपस्थिति दुसाध लोक-विश्वास-दृष्टिक एक ‘animistic iconography’ थिक—एक विश्वास-दृष्टि जाहिमे मानव, पशु आ आत्मा सब एकहि नाट्य-संसारमे बराबर सत्ता रखैत छथि। ई ‘transgressive iconicity’ (सीमा-नाघैत प्रतिमात्मकता) थिक।

५.२ मिज़राही-थिएटरक समानांतर : सांस्कृतिक हाशिया पर ठाढ़ परम्पराक पुनरुद्धार

इजरायली रंगमंचमे ‘मिज़राही’ (मध्य-पूर्व/उत्तर अफ्रीकी यहूदी मूलक) सांस्कृतिक परम्परा बहुता काल धरि ‘अश्केनाज़ी’ (यूरोपीय यहूदी) प्रभुत्ववादी सांस्कृतिक मानकक कारण हाशिया पर रहल।

मिज़राही थिएटर आन्दोलन (१९७०-वर्तमान) एहि हाशिया परम्पराकें—सेफ़ार्दी संगीत, पैतान/ज़मीरोत आदि—मुख्यधारामे अनबाक आन्दोलन थिक।

कुणालक ‘कुसमा-सलहेस’ मैथिली सन्दर्भमे ठीक एहन आन्दोलनक रूपमे देखल जा सकैत अछि। दुसाध लोक-परम्परा (सलहेस-नाच) मैथिली सांस्कृतिक पदक्रममे कात-करोटमे रहल अछि—जतय विद्यापति, चन्दा-झा, आ अभिजन-काव्य-परम्पराक प्रभुत्व रहल। कुणाल एहि कात-करोटक परम्पराकें विद्यापति भवन (मैथिली सांस्कृतिक संस्थाक केन्द्रीय स्थल) पर लऽ जा क’ एक सांस्कृतिक-राजनीतिक दावा कएलनि।

५.३ हन्ना आरेंड्ट : ‘जन्मता’ आ सार्वजनिक कार्य

जर्मन-अमेरिकी राजनीतिक दार्शनिक हन्ना आरेंड्ट (Hannah Arendt, १९०६–१९७५) अपन ‘द ह्यूमन कंडीशन’ (The Human Condition)मे ‘नैटालिटी’ (natality, जन्मता) अवधारणा प्रस्तुत कएलनि—प्रत्येक राजनीतिक कार्य (political action) एक नवीन आरम्भ थिक, एक प्रकारका ‘जन्म’। सार्वजनिक क्षेत्र (public realm) मे ई कार्य अमर होइत अछि कारण ओकर साक्षी होइत अछि।

सलहेसक कारागार-वक्तव्य—“नहि रहता सलहेस मुदा भयमुक्त जीवनक मंत्र सँ भरल जनता रहतै”—आरेंड्टक अर्थमे एक ‘राजनीतिक कार्य’ थिक। ई वक्तव्य सूचोंगक कारागारमे कहल गेल (साक्षी : सूचोंग स्वयं), आ एहि साक्ष्यमे ई ‘अमर’ भ’ जाइत अछि—‘नैटालिटी’क एक नाट्य-क्षण। कुणाल एहि दृश्यद्वारा सलहेसकें लोक-देवतासँ ‘राजनीतिक कार्यकर्ता’मे रूपान्तरित करैत छथि।

५.४ शिमोन लेवी : समन्वयवादी सुमिरन आ ‘पवित्र रंगमंच’

शिमोन लेवी अपन ‘थिएटर ऑफ द सेक्रेड’ (Theatre of the Sacred) सिद्धांतमे तर्क दैत छलाह जे रंगमंच पर जखन सामुदायिक-धार्मिक मूल्यक पुनःप्रस्तुति होइत अछि, तखन ओ धार्मिक-अनुष्ठानक एक धर्मनिरपेक्ष-रूपांतरण थिक।

एहि नाटकक पूर्वरंगक सुमिरन शिमोन लेवीक सिद्धांतक एक विशेष परीक्षा प्रस्तुत करैत अछि। ई सुमिरन केवल हिन्दू धार्मिक आह्वान नहि—ओहिमे मुस्लिम पीर ‘मीरा-सुलतान’ (पश्चिम दिशाक देवता) सेहो सम्मिलित छथि। “परिनाम, नमस्ते, आदाब, गुड इवनिंग, सलाम”—ई दर्शक-सम्बोधन सभ धर्म, भाषा, वर्ग आ राष्ट्र-राज्यक सीमाकें एकहि साँसमे नांघि जाइत अछि। लेवीक परिप्रेक्ष्यमे ई एक ‘radical sacred’ (क्रान्तिकारी-पवित्र) रंगमंच थिक—जे विभाजक पहिचानकें अस्वीकार क’ एक समावेशी सामुदायिकताक स्वप्न रचैत अछि।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण

संग्रहक शीर्षक-नाटकक रूपमे ‘कुसमा-सलहेस’ चारू नाट्य-परम्पराक समीक्षामे एकहि संग सर्वाधिक उर्वर आ सर्वाधिक चुनौतीपूर्ण कृति थिक। एकर बहुआयामिता कोनो एक समीक्षा-दृष्टिसँ समाहित नहि होइत अछि।

भारतीय दृष्टि—सलहेस-नाचक स्वायत्त लोकनाट्य-व्याकरण; रस-महोत्सव (शृंगार+वीर+भक्ति+अद्भुत); सबाल्टर्न-सौन्दर्यशास्त्रक नाट्य-प्रकटीकरण; दुर्गाक आशीर्वाद = प्रेम+ज्ञान+लोक-सेवाक अभेद-घोषणा।

पाश्चात्य दृष्टि—ग्रामशीक जैविक बुद्धिजीवी; जादू-यथार्थवादक प्रामाणिक लोक-संस्करण; ब्रेख्तीय ‘इमोशनल एपिक थिएटर’; भाभाक सांस्कृतिक पहचान-प्रतिरोध।

चीनी दृष्टि—गुआन-यू-सदृश यी-नैतिकता; हुआलियान पात्र-वर्गीकरण; तियानमिंग= दुर्गाक स्वर्गीय-आदेश; मिनजियान लोक-नायक-नाट्यीकरण-परम्परा।

इजरायली दृष्टि—रोज़िकक transgressive animistic iconicity; मिज़राही थिएटरक सांस्कृतिक समानांतर; आरेंड्टक नैटालिटी (कारागार-वक्तव्य = राजनीतिक जन्म); लेवीक radical sacred सुमिरन।

चारू परम्पराक साझा निष्कर्ष—ई नाटक एक ‘सांस्कृतिक न्याय’ (cultural justice)क कार्य थिक। दुसाध सलहेसकें मैथिली साहित्य-मंचक केन्द्रमे आनब; लोकनाट्यकें साहित्यिक नाटकक आधार बनाएब; प्रेम आ जन-सेवाकें एक अभेद तत्त्व घोषित करब—ई तीनू कार्य एकहि संग भारतीय, पाश्चात्य, चीनी आ इजरायली नाट्य-चिन्तनक मानदण्डमे ‘उत्कृष्ट’ आ ‘आवश्यक’ सिद्ध होइत अछि।

नाटककें सम्पूर्ण करएवला अंतिम टेक—“प्रेम सत्य छै, प्रेम छै सौरभ, प्रेमक भाव चिरंतन / बिनु मकरंदक कुसुम हो तहिना, प्रेम बिना की जीवन”—एहि सभक व्याख्या अतीतमे जाइत अछि। ई वाक्य समग्र संग्रहक आत्मा-घोषणा थिक।

अध्याय ५

प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!

स्त्री-आत्मनिर्णय आ प्रेमक प्रतिज्ञा

प्रकाशन : अंतिका, अप्रैल-जून २०१३ • मंच : त्रिस्तरीय • पात्र : दू अभिनेता + दू अभिनेत्री

१. परिचय, नाट्य-स्थापत्य आ मूल-प्रश्न

प्रेम-चतुष्टयक प्रथम नाटिका ‘प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!’ कुणालक नाट्य-लेखनमे एक नवीन मोड़ थिक। लोकनाट्य-त्रयीक बहु-पात्रीय, गीत-नृत्य-बहुल विस्तारसँ एकदम भिन्न—ई नाटिका मितव्ययी, तीक्ष्ण आ विचार-केन्द्रित अछि। मंच निर्देश स्वयं बताबैत अछि—“त्रिस्तरीय मंच, स्तरक उपयोग कखनो प्लेटफार्म, कखनो सीढ़ी जकाँ”—आ पात्र मात्र चारि—दू अभिनेता, दू अभिनेत्री, जे अनेक भूमिका निभाबैत छथि (भारद्वाज/वृद्ध/वशिष्ठ/इन्द्र = एक-दू अभिनेता; श्रुवावती/सखी/स्त्री = एक-दू अभिनेत्री)।

स्रोत पुराण-आख्यान थिक—महर्षि भारद्वाजक पुत्री श्रुवावती, जनिकर उल्लेख विभिन्न पौराणिक सन्दर्भमे अछि। मुदा कुणालक श्रुवावती परम्परागत आख्यानसँ बहुत आगाँ जाइत छथि। ओ ‘विवाह-योग्य कन्या’क पारम्परिक भूमिकाकेँ अस्वीकार नहि करैत, मुदा विवाहक शर्त स्वयं निर्धारित करैत छथि—“जखने किओ हमरा लेल अर्थवान भ’ जैत, हम विवाह क’ लेब!” ई ‘अर्थवान होएबा’क माँग नाटकक केन्द्रीय दार्शनिक-नाट्य प्रश्न थिक।

नाटकक पाँच क्रम—(१) भारद्वाजसँ श्रुवावतीक ‘स्वतंत्र-स्वावलम्बी’ घोषणा; (२) सरिता-तट पर इन्द्रक छायासँ प्रेम-अनुभव; (३) इन्द्रक प्रत्यक्ष प्रकटन आ प्रस्ताव—“मरणोपरांत स्वर्ग आउ”—श्रुवावतीक अस्वीकार; (४) वृद्ध-वेशमे/वशिष्ठ-वेशमे इन्द्रक परीक्षा—अद्भुत फल—फल पाथर बनब; (५) श्रुवावतीक चिता-संकल्प—इन्द्रक स्वीकृति—दुष्यन्त कुमारक शेरसँ समापन।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ एकांकी-नाटिकाक शास्त्रीय स्वरूप आ 'अंक'-विधान

भरतमुनिक नाट्यशास्त्र नाटकक विस्तार आ संरचनाक अनुसार विभिन्न रूप-भेद करैत अछि। दशरूपकमे 'नाटिका' एक अपेक्षाकृत लघु रूप थिक—सामान्यतः चारि अंकसँ कम, एक केन्द्रीय प्रेम-वृत्तांत, नायिका-प्रधान आ करुण-सम्पृक्त। एहि नाटिकाक शीर्षकमे 'उर्फ' शब्दक प्रयोग अभिजन-परम्परा आ लोक-परम्पराक संयोग थिक—'प्रेम-प्रतिज्ञा' (शास्त्रीय भाव) आ 'श्रुवावतीक जय!' (लोक-उद्धोष)।

त्रिस्तरीय मंचक उपयोग नाट्यशास्त्रक 'रंगमण्डप' सिद्धांतक आधुनिक रूपान्तरण थिक। भरत मंचकेँ तीन भागमे विभाजित करैत छथि—रंगशीर्ष (उपर), रंगपीठ (मध्य) आ नेपथ्य। कुणालक त्रिस्तरीय मंच एकर नव व्याख्या थिक—'शीर्ष सतह पर पुरुष' (उद्धोषक-सूत्रधार), 'मध्य सतह' (कथाक प्रमुख दृश्य) आ 'निचला स्तर' (वनस्पति-सरिता-तटक प्राकृत संसार)।

२.२ रस-विचार : शृंगारक तीन रूप एकहि संग

एहि नाटिकामे शृंगार-रसक तीन उपभेद एकहि संग उपस्थित अछि—(क) 'संयोग-शृंगार' (आकर्षण-भाव, सरिता-तट पर छाया-दर्शन); (ख) 'वियोग-शृंगार' (इन्द्रक बारम्बार अस्वीकार, श्रुवावतीक प्रतीक्षा-यातना); (ग) भक्ति-शृंगार (माला गँथनाइ—“मोनक देवताकेँ पहिराब'क लेल”)। भरत शृंगारक 'स्थायी भाव' 'रति' मानैत छथि, आ एकर उच्चतम अवस्था ओ 'परम-रति' मानैत छथि—जे इन्द्रियसँ परे शुद्ध प्रेम-तत्त्व थिक। श्रुवावती एहि परम-रतिक अवतरण छथि।

करुण-रसक एक विशिष्ट उपस्थिति सेहो अछि—“जाहि मोन मे प्रियक स्मरण नहि, से मोन ल' क' की?” ई विचार शुद्ध करुणाक नहि, एक दार्शनिक करुणाक अभिव्यक्ति थिक जाहिमे जीवनक मूल्य प्रश्नगत होइत अछि। अभिनवगुप्तक 'शान्त-रस'—जीवनक समस्त सम्बन्धसँ परे शान्त स्वीकृति—समापन-दृश्यमे उपस्थित अछि।

२.३ धर्मशास्त्र आ स्त्री-स्वाधीनता : नाट्यक राजनीतिक पाठ

मनुस्मृतिक एक प्रसिद्ध उद्धरण—“पिता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति यौवने”—स्त्रीक 'रक्षा'क उत्तरदायित्व पिता-पति-पुत्रमे विभाजित करैत अछि। भारद्वाज अही परम्पराक पालक छथि—“स्त्रीकेँ भाइ, पिता वा पति एक संग रहबाक चाही।” श्रुवावती एहि धर्मशास्त्रीय मानदण्डकेँ एक प्रश्नसँ खण्डित करैत छथि—“किए? हम अपन रक्षा आ देखभाल स्वयं नहि क' सकैत छी बाबूजी!”

एहि प्रश्नक सांस्कृतिक महत्त्व असाधारण अछि। ई केवल व्यक्तिगत स्वाधीनताक प्रश्न नहि—ई मैथिली पौराणिक-नाट्य-परम्पराक भीतरसँ एक धर्मशास्त्रीय मानदण्डकेँ चुनौती देबाक नाट्य-प्रयास थिक। भारद्वाजक अन्तिम उत्तर—“सुखी रही—गृहिणी जकाँ की तपस्विनी जकाँ”—ओ अपनहुँ श्रुवावतीक आत्मनिर्णयकेँ स्वीकार क’ लैत छथि। पितृसत्तात्मक संरचना एतय आत्म-समर्पण करैत अछि—एक नाट्य-क्षण जे भारतीय स्त्री-केन्द्रित नाट्य-परम्पराक (मैत्रेयी, गार्गी, शकुन्तला)क क्रमागत अगिला पड़ाव थिक।

२.४ वक्रोक्ति-दृष्टि : ‘अर्थवान’ शब्दक बहु-आयामी ध्वनि

कुन्तकक वक्रोक्ति-सिद्धांत आ आनन्दवर्धनक ध्वनि-सिद्धांत दुनूक परिप्रेक्ष्यमे ‘अर्थवान’ शब्द एहि नाटकक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पद थिक। अभिधातः—‘महत्त्वपूर्ण/उपयोगी’; लक्षणातः—‘सार्थक जीवन जीबएवाला’; व्यंजनातः—‘जे हमर अस्तित्वकेँ अर्थ दैत हो’। ई तृतीय अर्थ नाटकक दार्शनिक आत्मा थिक—श्रुवावती कोनो बाह्य मानदण्ड (सुन्दरता, सम्पत्ति, शौर्य) नहि, एक अन्तरंग ‘अर्थ’क सम्बन्ध खोजैत छथि।

एहि शब्दक वक्रोक्ति एतय अछि—देवराज इन्द्र, जे सर्वशक्तिमान छथि, बहु-विवाहित छथि, स्वर्गक स्वामी छथि—ओ एक ऋषि-कन्याक ‘अर्थवान’ बनबाक परीक्षामे असफल होइत छथि, आ अंततः चिता-दृश्यमे जा क’ स्वयंकेँ ‘अर्थवान’ सिद्ध करैत छथि। एहि उनटा परीक्षामे वक्रोक्ति आ व्यंग्य एकहि संग अछि।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांत

३.१ सिमोन द बोउवार : ‘दोसर लिंग’ आ स्त्री-कर्तृत्व

फ्रांसीसी दार्शनिक-नारीवादी सिमोन द बोउवार (Simone de Beauvoir, १९०८–१९८६) अपन ‘द सेकेण्ड सेक्स’ (Le Deuxième Sexe, १९४९)मे घोषणा कएलनि—“one is not born, but rather becomes, a woman” (स्त्री जन्म नहि लैत, बनाओल जाइत अछि)। ओ तर्क देलनि जे स्त्रीक ‘अन्यता’ (otherness) सामाजिक-सांस्कृतिक निर्माण थिक।

श्रुवावतीक चरित्र बोउवारक एहि सिद्धांतक एक पौराणिक-नाट्य उदाहरण थिक। पिताक संरक्षण, राजकुलक विवाह-प्रस्ताव, इन्द्रक ‘मरणोपरांत’ प्रस्ताव—ई सभ श्रुवावतीकेँ एक वस्तु बनेबाक प्रयास थिक। श्रुवावती प्रत्येक बेर एहि प्रयासकेँ अस्वीकार क’ अपनाकेँ कर्ता बनेबाक दावा करैत छथि।

हुनकर अन्तिम वाक्य—“हमरा तँ हरदम स्वीकार छल प्रिय! अहाँ अपने कहूँ!”—एहि कर्तृत्वक पराकाष्ठा थिक—विजय हुनकर अछि।

३.२ सार्त्र : अस्तित्ववाद आ ‘अर्थ-निर्माण’

फ्रांसीसी दार्शनिक ज्यॉ-पॉल सार्त्र (Jean-Paul Sartre, १९०५–१९८०) अपन अस्तित्ववादक केन्द्रीय घोषणा कएलनि—“existence precedes essence” (अस्तित्व सारसँ पहिने आबैत अछि)। मानव जन्मसँ कोनो पूर्व-निर्धारित ‘सार’ (essence) नहि लैत—ओ अपन स्वतंत्र निर्णयसँ अपनाकेँ परिभाषित करैत अछि।

श्रुवावतीक दर्शन सार्त्रीय अस्तित्ववादक एक पौराणिक-नाट्य प्रतिरूप थिक। ऋषि-कन्या होएब एक जन्म-दत्त ‘essence’ थिक; ‘स्वतंत्र-स्वावलम्बी व्यक्ति’ होएब हुनकर स्व-निर्मित ‘existence’ थिक। “अहीं कहने छी, अपवादों सँ नियमक पुष्टि होइत छै। हमरा आहाँ अपवाद बन’ दिअ’ बाबूजी!”—ई वाक्य सार्त्रक ‘radical freedom’ (मूलभूत स्वतंत्रता)क एक मैथिली अभिव्यक्ति थिक।

सार्त्र ‘mauvaise foi’ (bad faith / अ-प्रामाणिक जीवन) कहैत छलाह ओहि स्थितिकें जाहिमे व्यक्ति अपन स्वतंत्रतासँ मुँह मोड़ि परम्परा-आज्ञाक शरण लैत अछि। इन्द्रक बहु-वेश-प्रयास (वृद्ध, वशिष्ठ) एहि ‘mauvaise foi’क देवत्व-संस्करण थिक—देवराज अपन यथार्थ पहचानसँ मुँह नुका क’ परीक्षा दैत छथि। श्रुवावती प्रत्येक वेश भेदि दैत छथि—“हम तखने विवाहित भ’ गेलहूँ जखन हृदयमे स्थान देलहूँ”।

३.३ बाख्तिन : बहु-स्वरीय नाटक आ ‘डायलॉजिज्म’

मिखाइल बाख्तिन (Mikhail Bakhtin) अपन ‘डायलॉजिज्म’ (Dialogism) सिद्धांतमे तर्क दैत छलाह जे भाषा स्वभावतः बहु-स्वरीय (polyphonic) होइत अछि—प्रत्येक शब्दमे अनेक आवाज गूँजैत अछि। एहि नाटकमे सर्वाधिक उल्लेखनीय ‘डायलॉजिज्म’ थिक—समापनक उर्दू शेर।

दुष्यन्त कुमार (१९३१–१९७५)क प्रसिद्ध उर्दू शेर—“कौन कहता है कि आसमाँ में सुराख हो नहीं सकता / एक पत्थर तो तबीअत से उछालो यारो”—मैथिली पौराणिक नाटिकाक समापनमे एकाएक उभरैत अछि। एहि ‘बहु-स्वरीय’ समापनमे एकहि क्षणमे तीन भाषा-संस्कृति उपस्थित अछि—मैथिली पौराणिक आख्यान, हिन्दी उर्दू काव्य-परम्परा, आ आधुनिक राजनीतिक चेतना (आकाशमे सुराख = असम्भवकेँ सम्भव करब)। ई बाख्तिनक ‘heteroglossia’ (बहु-भाषी संवाद)क एक विशिष्ट नाट्य-उदाहरण थिक।

३.४ पीटर ब्रूक : ‘खाली मंच’ आ रंगमंचीय मितव्ययिता

ब्रिटिश निर्देशक पीटर ब्रूक (Peter Brook, १९२५-२०२२) अपन ‘द एम्प्टी स्पेस’ (The Empty Space, १९६८)मे घोषणा कएलनि—“एक व्यक्ति खाली मंच पर चलैत अछि, दोसर व्यक्ति ओकरा देखैत अछि—बस, एतबे रंगमंचक लेल पर्याप्त अछि।” ब्रूकक ‘Holy Theatre’ (पवित्र रंगमंच) सिद्धांतमे ओ माँगैत छलाह जे दृश्य-सामग्री न्यूनतम होए जाहिसँ दर्शकक कल्पना सक्रिय हो।

एहि नाटिकाक त्रिस्तरीय खाली मंच ब्रूकक ‘खाली मंच’क एक सटीक मैथिली-पौराणिक संस्करण थिक। “स्तरक उपयोग कखनो प्लेटफार्म, कखनो सीढ़ी जकाँ”—दृश्य-सामग्री नहि, स्थान-सम्भावना। इन्द्रक अन्तर्धान आ पुनः प्रकटन, फलक पाथर बनब, चिताक निर्माण—ई सभ ‘प्रकाश-परिवर्तन’ आ अभिनय-क्रियाद्वारा निर्मित होइत अछि, नहि कि भारी दृश्यावली सज्जासँ। ब्रूकक ‘holy theatre’ यैह थिक—जाहिमे दर्शकक आत्म-चेतना जागृत होइत अछि।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ युआनफेन : भाग्य-निर्धारित प्रेम आ श्रुवावतीक चुनौती

चीनी सांस्कृतिक-दार्शनिक परम्परामे ‘युआनफेन’ (fate-bound love / भाग्य-सम्बन्ध) एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा थिक—दू आत्माकेँ मिलाबएवला एक पूर्व-निर्धारित दैवी डोरि। चीनी काव्य-नाट्यमे प्रायः ‘युआनफेन’क साकार होएब नाटकक लक्ष्य होइत अछि।

श्रुवावती-इन्द्रक सम्बन्धमे ‘युआनफेन’ जटिलतापूर्वक उपस्थित अछि—श्रुवावती इन्द्रकेँ ‘मोनक देवता’ कहैत छथि, माला गँथैत छथि—ई ‘युआनफेन’क स्वीकृति थिक। मुदा ओ इन्द्रक शर्त (‘मरणोपरांत’) नहि मानैत छथि—ई ‘युआनफेन’क पुनः-परिभाषा थिक। श्रुवावती कहैत छथि जे ‘युआनफेन’ दैवी-निर्धारित भऽ सकैत अछि, मुदा ओकर समय आ शर्त स्वयं तय करब—ई स्त्री-कर्तृत्वक एक सूक्ष्म अभिव्यक्ति थिक।

४.२ काओयान : परीक्षा-नाट्य-परम्परा

चीनी शास्त्रीय रंगमंचमे ‘काओयान’ (test/trial) एक प्रमुख नाट्य-उपकरण थिक। चीनी लोककथा-नाटकमे अनेक उदाहरण अछि जाहिमे प्रेमीक निष्ठाकेँ एक असाधारण परीक्षासँ सिद्ध करबाक

चाही। प्रसिद्ध ‘लियाडङ्गू’ (Butterfly Lovers) कथाक नाट्यीकरणमे सेहो निष्ठाक परीक्षा केन्द्रमे अछि।

एहि नाटकमे ‘काओयान’ एक उनटल संरचनामे अछि—सामान्यतः नायकक निष्ठाकें परखल जाइत अछि; एतय नायिका स्वयं परीक्षार्थी छथि (इन्द्र द्वारा दत्त ‘फल-परीक्षा’), आ परीक्षक इन्द्र स्वयं परीक्षित होइत छथि (श्रुवावतीक चिता-संकल्प इन्द्रकें विचलित करैत अछि)। ई उनटल ‘काओयान’ नाटकक मौलिकताक प्रमाण थिक—परीक्षक स्वयं परीक्षित भ’ जाइत अछि।

४.३ यीझी : इच्छाशक्ति आ नियोकन्फ्यूशियाई नैतिकता

नियोकन्फ्यूशियाई दार्शनिक (विशेषतः वांग यांगमिंग, १४७२–१५२९) ‘यीझी’ (moral will / नैतिक इच्छाशक्ति) आ ‘झी लियाङ्गझी’ (extending innate moral knowledge / सहज नैतिक ज्ञानक विस्तार) पर बल दैत छलाह। ओ मानैत छलाह जे मनुष्यक भीतर सहजाततः एक ‘नैतिक ज्ञान’ विद्यमान अछि—बाहरसँ थोपल नहि।

श्रुवावती ‘यांगमिंग’क अर्थमे एक ‘यीझी-सम्पन्न’ पात्र छथि। हुनकर ‘अर्थवान’क माँग, वशिष्ठ-वेशमे इन्द्रकें ‘अनकर स्त्री’ घोषित कएनाइ, आ चिता-संकल्प—ई सभ बाहरसँ शिखाओल नहि, भीतरसँ उपजल नैतिक निर्णय थिक। नाटककारक अपन सन्देश—“आत्मबल, मनुष्यक सब सँ पैघ संपत्ति अछि”—वांग यांगमिंगक दर्शनसँ अद्भुत साम्य रखैत अछि।

४.४ बेइजू: चीनी त्रासदी-सिद्धांत आ एहि नाटकक ‘जय’

चीनी नाट्य-चिन्तकक परम्परामे यह प्रश्न उठाओल गेल अछि जे चीनी नाटकमे पाश्चात्य अर्थमे ‘बेइजू’ (tragedy) अछि वा नहि। वांग गुओवेई तर्क देलनि जे चीनी शास्त्रीय नाटकमे ‘दुखद परिस्थिति’ होइत अछि, मुदा अंत सामान्यतः समझौता वा समन्वयमे होइत अछि। एहि ‘अर्ध-त्रासदी’कें ओ ‘दुखी खोज’ कहलनि।

एहि नाटकक शीर्षकक ‘जय!’ शब्द यह बताबैत अछि जे ई ‘बेइजू’ नहि, ‘बेइ झोंग योऊ शी’ (joy within sorrow)क एक रूप थिक। फलक पाथर बनब, चिता-संकल्प—ई दुखद; मुदा इन्द्रक स्वीकार आ ‘जय’ क उद्घोष—ई समन्वय थिक। मुदा विशेष ई जे एहि ‘जय’क नायिका श्रुवावती छथि, देवराज इन्द्र नहि—ई एक महत्त्वपूर्ण उलटफेर थिक।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ हनोख लेविन : मानव-प्रतिष्ठाक नाट्य-रक्षा

इजरायलक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नाटककार हनोख लेविन (Hanoch Levin, १९४३-१९९९) अपन नाटकमे बेर-बेर ओइ प्रश्नसँ जुड़लाह—मानव-प्रतिष्ठाक (human dignity) कोन-कोन व्यवस्थाक विरुद्ध रक्षा करबाक चाही? हुनकर ‘द लेबर ऑफ लाइफ’ (The Labour of Life) जेकाँ नाटकमे स्त्री-पात्र प्रायः सामाजिक-पारिवारिक दबावक विरुद्ध अपन अस्मिताक लड़ाइ लड़ैत अछि।

श्रुवावतीक स्थिति लेविनक स्त्री-पात्रसँ एक महत्त्वपूर्ण भेदक संग समान अछि। लेविनक स्त्री प्रायः असफल होइत अछि—व्यवस्था ओकरा निगलि जाइत अछि। श्रुवावती विजयी होइत छथि। ई भेद कुणालक आशावादी मानवतावादक प्रमाण थिक—ओ लेविनक क्रूर यथार्थवादसँ भिन्न एक भारतीय-पौराणिक आशावाद लैत छथि जाहिमे ‘आत्मबल’क अन्ततः विजय होइत अछि।

५.२ एली रोजिक : बहु-भूमिका आ ‘परिवर्तनशील पहचान’क प्रतिमात्मकता

एली रोजिकक प्रतिमात्मकता (theatrical iconicity)क सिद्धांत एहि नाटकमे एक विशेष परीक्षामे पड़ैत अछि—बहु-भूमिका अभिनय (multi-role performance)। एक्के अभिनेता भारद्वाज, वृद्ध, वशिष्ठ आ इन्द्र बनैत अछि।

रोजिकक प्रश्न—जखन एक अभिनेता अनेक पात्र खेलाइत अछि, तखन दर्शक कोन ‘प्रतिमा’ देखैत अछि? रोजिक तर्क दैत छलाह जे दर्शक एकहि संग दू ‘प्रतिमा’ देखैत अछि—अभिनेताक आ पात्रक—एहि द्वैत-दर्शनमे रंगमंचक विशिष्ट सौन्दर्य निहित अछि। एहि नाटकमे एहि ‘डबल आइकॉनिसिटी’क एक विशेष राजनीतिक अर्थ अछि—इन्द्र वृद्धक वेशमे आ वशिष्ठक वेशमे परीक्षा लैत छथि; दर्शक जनैत छथि जे ई इन्द्र छथि—ई ‘dramatic irony’ (नाट्य-विडम्बना) थिक जाहिमे श्रुवावतीक सत्य-दृष्टि आर अधिक उज्ज्वल भ’ जाइत अछि।

५.३ उत्तर-हॉलोकास्ट नाट्य-चिन्तन : ‘अग्नि’ आ ‘अस्तित्व’

इजरायली रंगमंच-विद्वान ड्वोरा बेन शाउल (Dvora Ben-Shaul) आ अन्यक उत्तर-हॉलोकास्ट नाट्य-चिन्तनमे अग्नि एक अत्यन्त भार-वाहक प्रतीक (loaded symbol) बनि गेल अछि—विनाश आ उत्तरजीविता (survival) दुनू एकहि संग संग्रहित अछि।

श्रुवावतीक चिता-दृश्य एहि परिप्रेक्ष्यसँ एक जटिल प्रतिमा बनैत अछि। अग्नि-प्रवेश पारम्परिक भारतीय परम्परामे ‘सती’क प्रतीक थिक—एक पितृसत्तात्मक संस्था। कुणाल एहि प्रतीककेँ उनटैत छथि—श्रुवावतीक चिता ‘मरबाक’ नहि, ‘जीबाक माँग’क अभिव्यक्ति थिक। ओ स्वयं आगि लगाबैत छथि, आ घोषणा करैत छथि—“प्रियक स्मरण करैत हम अग्नि-प्रवेश करब।” ई ‘नहि जीबाक’ नहि, ‘प्रेमसहित जीबाक वा नहि जीबाक’क द्विभाजन थिक। इजरायली दृष्टिसँ एहि ‘उत्तरजीविताक राजनीति’मे श्रुवावती एक ‘witness’ (साक्षी) छथि—ओ अपन अस्तित्वकेँ ‘प्रमाण’ बनाबैत छथि।

५.४ याकोव शाबताई : समापनक उर्दू शेर आ ‘अन्तर-सांस्कृतिक संवाद’

इजरायली नाटककार याकोव शाबताई (Yaakov Shabtai, १९३४–१९८१) अपन ‘पास्ट कन्टीन्यूअस’ (Past Continuous) जेकाँ कृतिमे भाषाक प्रयोग एक प्रमुख सौन्दर्यशास्त्रीय उपकरण बनाबैत छलाह—हिब्रू, यिदिश आ अरबीक मिश्रण एहि सांस्कृतिक संकरताक अभिव्यक्ति थिक।

कुणालक मैथिली नाटिकाक समापनमे उर्दू शेरक प्रयोग शाबताईक अन्तर-सांस्कृतिक संवादक समानांतर थिक। मैथिली + पौराणिक सन्दर्भ + उर्दू काव्य-परम्परा—ई संयोग मात्र सजावट नहि, एक सांस्कृतिक-राजनीतिक वक्तव्य थिक—जे ‘आत्मबल’क भाषा सीमा नहि मानैत अछि, जे एहि सन्देशक उर्दू अभिव्यक्ति ओतबे प्रामाणिक अछि जतेक मैथिली। दुष्यन्त कुमारक ‘एक पत्थर तो तबीअत से उछालो’ श्रुवावतीक चिता-संकल्पक उर्दू अनुवाद थिक।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण : ‘जय’क बहुआयामी अर्थ

चारू नाट्य-परम्पराकेँ एकठाम राखि देखल जाए तँ ‘प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!’क केन्द्रीय प्रश्न स्पष्ट होइत अछि—‘जय’ केकर थिक, आ ओ ‘जय’ केहन?

भारतीय दृष्टि—शृंगारक तीनू उपभेद; धर्मशास्त्रक स्त्री-मानदण्डकेँ नाट्य-खण्डन; ‘अर्थवान’क त्रि-स्तरीय ध्वनि; चिता = भक्ति-परम्पराक पुनःव्याख्या।

पाश्चात्य दृष्टि—बोडवारक ‘subject’-बनब; सार्वत्रिक radical freedom; बाख्तिनक heteroglossia (उर्दू शेर); ब्रूकक ‘holy theatre’ (खाली मंच)।

चीनी दृष्टि—युआनफेनक पुनःपरिभाषा; उनटल काओयान; वांग यांगमिंगक यीझी = आत्मबल; ‘बेइ झोंग योऊ शी’ जयन्ती।

इजरायली दृष्टि—लेविनक स्त्री बनाम कुणालक आशावादी आत्मबल; रोज़िकक double iconicity; अग्नि = उत्तरजीविताक राजनीति; शाबताईक अन्तर-सांस्कृतिक संवाद।

चारू परम्पराक साझा निष्कर्ष—श्रुवावतीक ‘जय’ एक ब्यक्तिगत प्रेम-विजय नहि। ई एक दार्शनिक ‘जय’ थिक—‘आत्मबल’ (जे भारतीयमे साहस, पाश्चात्यमे freedom, चीनीमे यीझी, आ इजरायलीमे dignity थिक) क ‘जय’। शीर्षकक विस्मयादिबोधक चिह्न (!) यैह कहैत अछि—ई घोषणा थिक, विवरण नहि।

अध्याय ६

विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह

सुकन्या-च्यवन आख्यानक पुनर्पाठ

प्रकाशन : अंतिका, अप्रैल-जून २०१३ • स्रोत : महाभारत (शान्तिपर्व) • पात्र : सूत्रधार + बहु-भूमिका

१. परिचय, कथा-स्थापत्य आ विशिष्टता

प्रेम-चतुष्टयक द्वितीय नाटिका ‘विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह’ महाभारतक शान्तिपर्वक सुकन्या-च्यवन-आख्यान पर आधारित अछि, मुदा कुणाल एहि परम्परागत कथाकेँ एक नवीन नारीवादी-दार्शनिक दृष्टिसँ पुनः-लिखैत छथि। नाटिकाक नामकरण सूचक अछि—‘विश्वासक शक्ति’ शीर्षक-भाव थिक, ‘सुकन्याक विवाह’ कथा-घटना।

नाटकक स्थापत्य अत्यन्त सुगठित अछि। पाँच नाट्य-क्रम—(१) वसन्तोत्सव : सूत्रधार+विद्यापतिक ‘आयल रितुपति राज बसंत’+राजा-रानीक विरोधाभासी दर्शन; (२) च्यवनक वल्मीक-आच्छादित समाधि आ सुकन्याक क्रीड़ा-दुर्घटना; (३) च्यवनक क्षमा, विवाह-प्रस्ताव, राजाक असमञ्जस आ सुकन्याक स्वेच्छा-स्वीकार; (४) आश्रम-जीवन + अश्विनी कुमारक छल-परीक्षा (तीन एकसदृश रूप); (५) सुकन्याक नेत्र-परीक्षा, च्यवनकेँ यौवन, सोमरस-प्रदान आ समापन।

नाटकक केन्द्रीय नाट्य-प्रश्न—‘विश्वास’ केहन होइत अछि? ओ आँखिसँ उत्पन्न होइत अछि, वा हृदयसँ? जखन तीन एकसदृश रूप सोझाँ हो, तखन स्त्री अपन ‘पति’केँ की द्वारा चिन्हैत अछि—देह द्वारा वा आत्मा द्वारा? एहि प्रश्नक नाट्य-उत्तर—“स्नेह, मात्सर्य, करुणा। एहि आँखि मे हिलकोरैए”—नाटकक वैचारिक पराकाष्ठा थिक।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ महाभारत-स्रोत आ पुनर्पाठ : नाट्यीकरणक राजनीति

महाभारतक शान्तिपर्वक सुकन्या-च्यवन-आख्यानमे सुकन्या एक आज्ञाकारी पुत्री थिकाह जे पिताक आज्ञासँ वृद्ध च्यवनसँ विवाह करैत छथि। कुणाल एहि ‘आज्ञाकारी पुत्री’क स्थानमे एक ‘स्वेच्छाकारी स्त्री’ रखैत छथि। महाभारतमे सुकन्याक विवाहक निर्णय पिताक निर्णय थिक; एहि नाटकमे सुकन्या स्वयं घोषणा करैत छथि—“हमर अछि अपराध, हम करब परिमार्जन”—आ स्वेच्छासँ च्यवनक अर्धांगिनी बनैत छथि।

ई ‘महाकाव्य-पुनर्पाठ’ (epic rewriting) भारतीय स्त्री-लेखनक एक स्थापित परम्परा थिक—उर्मिला (रामायण), द्रौपदी (महाभारत), आ अन्यक दृष्टिकोणसँ मूल महाकाव्यक पुनर्कथन। कुणाल पुरुष-लेखकक रूपमे एहि परम्परासँ सचेत जुड़ाव देखाबैत छथि।

२.२ रस-विचार : शृंगारक तीन अवस्था + अद्भुतक विजय

शृंगार-रसक प्रवाह एहि नाटकमे एक विशिष्ट नाट्य-रूपरेखा लेलक अछि—(क) वसन्तपदसँ आरम्भ : विद्यापतिक ‘आयल रितुपति राज बसंत’ शृंगारक उदात्त काव्यात्मक प्रवेश थिक; (ख) वल्मीक-भेदनसँ करुण-भय : सुकन्याक क्रीडामे अनजान घाव, च्यवनक क्रोध, सुकन्याक अपराध-बोध; (ग) आश्रम-जीवनमे विश्वास-शृंगार : वल्कल-वेशमे ‘तपस्विनी जकाँ जीबैत छी, प्रसन्न तखनहूँ छलहूँ, प्रसन्न एखनहूँ छी’।

अद्भुत-रसक चरम क्षण थिक अश्विनी-परीक्षा—तीन एकसदृश रूप! ई नाट्यशास्त्रक ‘अद्भुत’ (विस्मय)क एक विशेष उपभेद थिक—‘सुखद-अद्भुत’ (pleasant wonder)। भरत कहलाह जे अद्भुत-रसक व्यभिचारी भाव थिक श्रम, हर्ष, असूया (ईर्ष्या), विषाद आ चपलता—एहि दृश्यमे सभ उपस्थित अछि।

२.३ नयन-परीक्षा : भारतीय दर्शनशास्त्रक आँखि-तत्त्व

भारतीय दार्शनिक परम्परामे आँखि (नेत्र/नयन) कएक अर्थमे महत्त्वपूर्ण अछि—प्रत्यक्ष-प्रमाणक इन्द्रिय, आत्माक ‘दर्पण’, आ मिलनक माध्यम। ‘नयनसँ हृदय पढ़ब’ एक सुदीर्घ काव्य-परम्परा थिक (विद्यापतिक पदमे सेहो नयन-संवाद प्रमुख अछि)।

एहि नाटकमे ‘तीन एकसदृश रूप’क परीक्षामे सुकन्याक विश्वास आँखिसँ उत्पन्न होइत अछि—मुदा बाह्य आँखिसँ नहि, ‘अन्तरदृष्टि’सँ।

स्नेह, मात्सर्य, करुणा। एहि आँखि मे हिलकोरैए। आवेग, ममता, आनन्द। एहि आँखि मे बसैए।

न्याय-दर्शनक परिप्रेक्ष्यमे ई ‘लाक्षणिक प्रत्यक्ष’ (लक्षण-द्वारा प्रत्यक्ष) थिक—बाह्य रूपक अभावमे आन्तरिक गुण-धर्मसँ पहचान। नव्य-न्यायक शब्दमे—‘लिंग’ (hetu/mark) द्वारा ‘साध्य’ (conclusion)क सिद्धि। सुकन्या आँखिमे स्नेह-करुणाक ‘लिंग’ देखि ‘च्यवन’क ‘साध्य’ सिद्ध करैत छथि।

२.४ ‘च्यवनप्राश’ प्रसंग : लोक-स्मृति आ नाट्य-विनोद

सूत्रधार नाटकक आरम्भमे एक मनोरंजक टिप्पणी करैत अछि—“च्यवनप्राश बला च्यवन कि...हँ...नई...मानि लिअ’...सैह।” एहि एक पंक्तिमे कुणाल दू हजार वर्षक अन्तरालकेँ एक हास्यात्मक नाटकीय क्षणमे समेटि दैत छथि—महर्षि च्यवन जे औषधि-ज्ञानक लेल विख्यात छलाह, ओहि परम्पराक आधुनिक उत्तराधिकार ‘च्यवनप्राश’ नामक उत्पाद थिक। भारतीय नाट्य-परम्पराक ‘विदूषकोक्ति’ (vidūṣaka utterance) जाहिमे पौराणिक गाम्भीर्यमे हास्य-व्यंग्य घुसड़ैत अछि, एकर उत्कृष्ट आधुनिक उदाहरण थिक।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांत

३.१ मार्टिन बुबर : ‘आई-थाऊ’ आ ‘आई-इट’ सम्बन्ध

जर्मन-यहूदी दार्शनिक मार्टिन बुबर (Martin Buber, १८७८–१९६५) अपन ‘आई एंड थाऊ’ (Ich und Du / I and Thou, १९२३)मे दू प्रकारक मानव-सम्बन्ध प्रस्तुत कएलनि—‘आई-थाऊ’ (I-Thou) जाहिमे दोसर व्यक्तिकेँ एक सम्पूर्ण ‘तुम’ (subject)क रूपमे देखल जाइत अछि; आ ‘आई-इट’ (I-It) जाहिमे दोसरकेँ एक वस्तु (object) मानल जाइत अछि।

एहि नाटकमे अश्विनी कुमार ‘आई-इट’क प्रतिनिधि छथि—ओ सुकन्याकेँ एक सुन्दर वस्तु बनेबाक चाहैत छथि (“देह टा देखैत छी, देह टा बुझाबैत छी”)। च्यवन-सुकन्याक सम्बन्ध ‘आई-थाऊ’क अवतरण थिक—च्यवन कहैत छथि—“अहाँ नेत्रक द्वार मे पैसि क’ हृदय देखैत छी।” ई बुबरक ‘मिटिंग’ (Begegnung / genuine meeting)क नाट्य-रूपान्तरण थिक। अश्विनी-परीक्षाक उलटल-दिशा—सुकन्या आँखिसँ आत्मा पढ़ैत छथि—यैह ‘आई-थाऊ’क पहचान-विधि थिक।

३.२ अरस्तू : ‘एनागनोरिसिस’क एक नूतन रूप

अरस्तूक ‘काव्यशास्त्र’मे ‘अभिज्ञान’ (ἀναγνώρισις / anagnorisis) एक महत्त्वपूर्ण नाट्य-क्षण थिक—जाहिमे पात्र एक महत्त्वपूर्ण ‘पहचान’ करैत अछि। सर्वोत्कृष्ट अभिज्ञान ओ थिक जे कथाक परिवर्तन-बिन्दुसँ (peripeteia) एकहि संग घटित हो।

एहि नाटकक तीन-मुखौटा दृश्यमे ‘अभिज्ञान’ एक अत्यन्त नवीन रूप लैत अछि—सुकन्या तीन एकसदृश रूपमेसँ पतिकेँ पहचानैत छथि। अरस्तूक अभिज्ञान प्रायः ‘बाह्य चिह्न’ (घाव, अँगूठी, नाम)सँ होइत अछि; एहि नाटकमे सुकन्याक अभिज्ञान ‘आन्तरिक गुण-पठन’सँ होइत अछि—‘स्नेह, करुणा, ममता’क पहचान। ई ‘आन्तरिक अभिज्ञान’ (internal anagnorisis) अरस्तूक श्रेणीकेँ विस्तारित करैत अछि।

३.३ एरिक एरिकसन : पहचान-संकट आ ‘विश्वास’क विकास

अमेरिकी मनोवैज्ञानिक एरिक एरिकसन (Erik Erikson, १९०२-१९९४) मानव-विकासक आठ चरण प्रस्तुत कएलनि। प्रथम चरणमे ओ ‘बेसिक ट्रस्ट बनाम मिस्ट्रस्ट’ (Basic Trust vs. Mistrust) रखलनि—एहि मौलिक ‘विश्वास’क निर्माण व्यक्तित्वक सम्पूर्ण विकासक आधार थिक।

सुकन्याक विश्वास एरिकसनक अर्थमे ‘बेसिक ट्रस्ट’क पौराणिक-नाट्य रूपान्तरण थिक। ओ एहन पितासँ आयल छथि जे ‘प्रसन्न रहू, सब ठीक हेतै’ (राजाक उदार आशावाद) आ ‘यथार्थसँ आँखि जुनि फेरियाउ’ (रानीक सतर्क यथार्थवाद) दुनूक दर्शन सुनने छथि। ई दुनू दृष्टिकोणसँ परे सुकन्या अपन मौलिक विश्वास स्वयं निर्मित करैत छथि—वल्मीक-भेदनक अपराध-बोध, स्वेच्छा-विवाह, अश्विनी-परीक्षामे अडिगता—यैह ‘ट्रस्ट फॉर्मेशन’ (विश्वास-निर्माण)क नाट्य-यात्रा थिक।

३.४ ब्रेख्त : हास्य-राजनीति आ ‘अर्ध-देव’क विडम्बना

ब्रेख्तीय नाट्यशास्त्रमे हास्य-दृश्य प्रायः राजनीतिक व्यंग्यक वाहक होइत अछि। अश्विनी कुमारक दृश्य एहि दृष्टिसँ असाधारण अछि। ‘अर्द्धदेव’—जे स्वर्गमे बसैत, अप्सराक संग रहैत, देवता कहबैत—ओ एक राजकुमारी जे अरण्यमे वल्कल पहिरि क’ रहैत छथि, तनिकर समक्ष विफल होइत छथि।

ब्रेख्तक ‘Gestus’ (सामाजिक भाव-मुद्रा)क परिप्रेक्ष्यमे अश्विनी कुमारक दृश्य एक ‘class critique’ (वर्ग-आलोचना) थिक—विशेषाधिकार-प्राप्त देवता (privileged class) ओहन ‘मानव-मूल्य’केँ नहि बुझि सकैत जे एक साधारण ‘नश्वर’ स्त्री जीवैत अछि। सुकन्याक उत्तर—“आहाँ लोकनि तँ हृदय रखैत नहि छी”—यैह ब्रेख्तीय नैतिक-राजनीतिक निर्णय थिक।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ 心眼 (शीन-यान) : हृदय-दृष्टि

चीनी काव्यशास्त्री आ बौद्ध दार्शनिक परम्परामे ‘शीन-यान’ (心眼, heart-eye / हृदय-आँखि) एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा थिक—ओ अन्तरदृष्टि जे बाह्य रूपक परे आन्तरिक सत्यकेँ देखैत अछि। चान-बौद्ध (禪) परम्परामे ‘शीन-यान’केँ ‘धर्मेन्द्रिय’ (dharma-eye)क एक रूप मानल जाइत अछि।

एहि नाटकक केन्द्रीय परीक्षा—तीन एकसदृश रूपमेसँ पतिकेँ पहचानब—ठीक ‘शीन-यान’क अभ्यास थिक। सुकन्या बाह्य आँखि मूनि क’ (“सुकन्या आँखि मुनैत अछि”), भीतरी हृदय-दृष्टिसँ प्रत्येक आँखिमे गुण-धर्म पढ़ैत छथि—गौरव-घमंड (अश्विनी-१), लिप्सा-कुत्सा-लोभ (अश्विनी-२), स्नेह-करुणा-आनन्द (च्यवन)। ई ‘शीन-यान’क एक आश्चर्यजनक नाट्य-उदाहरण थिक।

४.२ 緣 (युआन) : कर्म-सम्बन्ध आ प्रायश्चित्त-योग

चीनी बौद्ध-दार्शनिक परम्परामे ‘युआन’ (緣, karmic connection / कर्म-सम्बन्ध) एक केन्द्रीय अवधारणा थिक—दू प्राणीक मिलन एक पूर्व-कर्मक परिणाम थिक। एहि सिद्धांतमे कर्म-सम्बन्ध केवल पूर्व-जन्मक ऋण नहि, वर्तमान क्षणक निर्णयसँ सेहो निर्मित होइत अछि।

सुकन्याक वल्मीक-भेदन एक अनजान कर्म थिक—“कर’ नहि चाहलहूँ, भ’ गेल”। मुदा हुनकर प्रतिक्रिया—“हम अपराधी छी, दंडक भागी छी”—एक सचेत ‘प्रायश्चित्त-युआन’ (karmic rectification) थिक। एहि ‘युआन’क परिणाम थिक च्यवनक विवाह-प्रस्ताव। चीनी काव्य-नाट्यमे ई ‘कर्म-विनाश’ (karma-resolution) एक प्रमुख नाट्य-चाप थिक।

४.३ 形神 (शिंग-शेन) : रूप आ आत्माक द्वन्द्व

चीनी सौन्दर्यशास्त्रमे ‘शिंग-शेन’ (形神, form and spirit)क द्वन्द्व एक प्रमुख चर्चा-विषय थिक। ‘शिंग’ (形) बाह्य रूप थिक, ‘शेन’ (神) आन्तरिक सत्ता। चीनी चित्रकला-सिद्धांतमे कहल जाइत अछि—‘तुआन-की-शिंग-शी-शेन’ (得其形似神, to capture the spirit through form)

एहि नाटकक तीन-मुखौटा दृश्यमे ‘शिंग’ (बाह्य रूप) एकसदृश अछि; ‘शेन’ (आन्तरिक आत्मा) भिन्न-भिन्न। सुकन्याक विश्वास ‘शेन’केँ ‘शिंग’क परे देखबाक शक्ति थिक। अश्विनी कुमारक

असफलता—ओ ‘शिंग’ नकल क’ सकलाह, ‘शेन’ नहि—यैह चीनी ‘शिंग-शेन’ सिद्धांतक अनुरूप थिक।

४.४ 义务 (यीवू) : कर्तव्य-बोध आ सुकन्याक नैतिक विकास

कन्फ्यूशियाई दार्शनिक परम्परामे ‘यीवू’ (义务, moral obligation / नैतिक कर्तव्य) एक केन्द्रीय मूल्य थिक। ई केवल बाह्य नियम-पालन नहि—‘मेंग्ज़ी’ (孟子, Mencius)क अनुसार नैतिक कर्तव्य मनुष्यक अन्तर्निहित ‘रेन’ (仁, benevolence / मानवता)सँ उत्पन्न होइत अछि।

सुकन्याक नाट्य-यात्रा ‘यीवू’क एक विशेष क्रम दर्शाबैत अछि—(क) अनजान कर्म (वल्मीक-भेदन) → (ख) कर्तव्य-बोध (अपराध-स्वीकार) → (ग) नैतिक निर्णय (स्वेच्छा-विवाह) → (घ) ‘रेन’क प्रकटीकरण (अश्विनी-क्षमा, च्यवन-प्रेम)। ई एक मेंग्ज़ियन नैतिक-विकास-चाप (Mencian moral arc) थिक।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ मार्टिन बुबर आ इजरायली आत्मीयता : ‘हसिदिक’ विश्वास-दर्शन

मार्टिन बुबर (जकर ‘आई-थाऊ’ सिद्धांत पाश्चात्य खण्डमे विवेचित भेल) इजरायली संस्कृतिक परम्पराक एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ थिकाह। बुबर हसिदिक (Hasidic Jewish) परम्पराक दार्शनिक थिकाह—जाहिमे ‘विश्वास’ (Emunah / אמונה) एक केन्द्रीय आध्यात्मिक-नैतिक मूल्य थिक।

बुबरक हसिदिक दर्शनमे ‘विश्वास’ मात्र बौद्धिक सहमति नहि, अपितु एक ‘समर्पण’ (Hingabe) थिक—समग्र आत्मासँ दोसरक ओर मुड़नाइ। सुकन्याक विश्वास एहि ‘हसिदिक Emunah’क एक हिन्दू-पौराणिक समकक्ष थिक—ओ च्यवनकें बुद्धिसँ नहि, समग्र हृदयसँ पहचानैत छथि। एहि नाटिकाक शीर्षक ‘विश्वासक शक्ति’ आ बुबरक ‘Emunah’ एक्के आत्मिक यात्रा थिक।

५.२ एली रोज़िक : ‘मास्क’क प्रतिमात्मकता आ पहचानक संकट

एली रोज़िकक प्रतिमा-सिद्धांत (theatrical iconicity) एहि नाटकमे एक असाधारण परीक्षामे पड़ैत अछि। तीन एकसदृश अभिनेता—एक्कहिं वेश, एक्कहिं रूप, एक्कहिं भाषा। रोज़िकक प्रश्न—‘जखन प्रतिमा अपना ‘referent’सँ अलग नहि क’ सकल जाइत, तखन दर्शक की देखैत अछि?’

एहि नाटकमे दर्शक एकहि संग तीन स्तर पर देखैत अछि—(क) तीन अभिनेताक शारीरिक उपस्थिति; (ख) तीन काल्पनिक पात्र (च्यवन, अश्विनी-अग्रज, अश्विनी-अनुज); (ग) सुकन्याक ‘हृदय-पाठ’ जाहिमे प्रतिमाक ‘referent’ भिन्न हो जाइत अछि। रोज़िकक शब्दमे—ई ‘iconic ambiguity’ (प्रतिमात्मक-अस्पष्टता)क एक जटिल उदाहरण थिक जाहिमे पहचानक संकट स्वयं नाट्य-विषय बनि जाइत अछि।

५.३ यहूदी परम्पराक ‘टिक्कुन ओलाम’ आ प्रायश्चित्त-नाट्य

यहूदी धर्म-दर्शनमे ‘टिक्कुन ओलाम’ (Tikkun Olam / संसार-सुधार) एक महत्वपूर्ण अवधारणा थिक—एहि दर्शनमे मानवक नैतिक दायित्व थिक जे ओ अपन कर्मद्वारा संसारकें ठीक करए। ई ‘टिक्कुन’ (सुधार/मरम्मत) व्यक्तिगत स्तर पर ‘तेशुवा’ (teshuvah / पश्चाताप-परिवर्तन)सँ आरम्भ होइत अछि।

सुकन्याक आचरण एहि ‘टिक्कुन’-दर्शनक एक हिन्दू-पौराणिक प्रतिरूप थिक। ओ वल्मीक-भेदनक ‘शेबेर’ (שבירה, brokenness / टूटन) स्वीकार करैत छथि, ‘तेशुवा’ (पश्चाताप-स्वीकार) करैत छथि, आ अपन जीवनक ‘टिक्कुन’ करैत छथि—च्यवनक अधांगिनी बनि क’। नाटकक समापन (“स्नेह सँ सुरभित बरसात बहैत रहल”) एहि ‘टिक्कुन’क पूर्णता थिक।

५.४ इजरायली लोक-रंगमंचक ‘पुरीम-शपील’ : कौतुक-विडम्बना

इजरायली लोक-नाट्य-परम्परामे ‘पुरीम-शपील’ (Purim Spiel / पुरीम-खेल) एक विशेष विधा थिक जाहिमे पारम्परिक आख्यानकें हास्य-व्यंग्यात्मक रूपमे प्रस्तुत कएल जाइत अछि। एहिमे र्त्रान्तिकारी पात्र-उलटफेर (inversion), वेश-परिवर्तन (costume change), आ गम्भीर विषयक हास्यात्मक उपस्थापन होइत अछि।

अश्विनी-कुमार-प्रसंग एहि ‘पुरीम-शपील’ शैलीक एक हिन्दू-पौराणिक संस्करण थिक। ‘अर्द्धदेव’ (देवता) एक ‘सिद्धान्ततः उच्च’ सत्ता छथि, मुदा एहि दृश्यमे ओ हास्यास्पद, असफल आ विडम्बित छथि। सुकन्याक धमकी—“आगाँ सँ मनुख, पाछाँ सँ बकरी”—एक पुरीम-शपील-सदृश कार्निवालेस्क उलटफेर थिक। गम्भीर देवता-पात्रमे हास्य-व्यंग्य एकहि संग नाटककें जीवन्त बनाबैत अछि।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण : ‘विश्वासक शक्ति’ के थिक?

चारू नाट्य-परम्पराकेँ एकठाम राखि देखल जाए तँ एहि नाटिकाक केन्द्रीय प्रश्नक उत्तर बहुआयामी भ’ जाइत अछि।

भारतीय दृष्टि—महाकाव्य-पुनर्पाठ (स्वेच्छा-विवाह); शृंगार+अद्भुत+करुण; नव्य-न्यायक लिंग-साध्य (आँखिमे गुण-पठन); ‘च्यवनप्राश’ विदूषकोक्ति।

पाश्चात्य दृष्टि—बुबरक आई-थाऊ (हृदय-सम्बन्ध बनाम वस्तुकरण); अरस्तूक आन्तरिक-अभिज्ञान; एरिकसनक ट्रस्ट-फॉर्मेशन; ब्रेख्तीय वर्ग-आलोचना (अर्धदेव बनाम मानव-हृदय)।

चीनी दृष्टि—(शीन-यान / हृदय-दृष्टि); (युआन / कर्म-सम्बन्ध + प्रायश्चित्त); (शिग-शेन / रूप बनाम आत्मा); (यीवू / मेंग़ियन नैतिक-चाप)।

इजरायली दृष्टि—बुबरक हसिदिक Emunah (समग्र-हृदय-विश्वास); रोज़िकक iconic ambiguity; टिक्कुन ओलाम (संसार-सुधार = वल्मीक-भेदन → विवाह); पुरीम-शपील (अश्विनी-दृश्यक कार्निवालेस्क)।

चारू परम्पराक साझा निष्कर्ष—‘विश्वासक शक्ति’ देह आ रूपक शक्ति नहि, हृदयक शक्ति थिक। एहि नाटकक सभ सँ उत्कृष्ट नाट्य-क्षण—जखन सुकन्या आँखि मुनि क’ तीन एकसदृश रूपमेसँ स्नेह-करुणाक आँखि देखि पतिकेँ पहचानैत छथि—ई क्षण भारतीय, पाश्चात्य, चीनी आ इजरायली, चारू नाट्य-परम्पराक दृष्टिमे एकसमान ‘आलोकित’ क्षण थिक।

च्यवनक अन्तिम वाक्य—“नहि भ’ सकैत छल...हम अहाँसँ परिचित छी प्रिय। अहाँ नेत्रक द्वार मे पैसिक’ हृदय देखैत छी”—एहि चतुर्भुज-समीक्षाक समापन-वाक्य सेहो थिक।

अध्याय ७

प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार

श्वेता, अतिरथ आ स्वायत्त प्रेमक प्रश्न

प्रकाशन : अंतिका, जुलाई-सितंबर २०१४ • स्थान : राज परिसर → वन • पात्र : उद्धोषक + बहु-भूमिका

१. परिचय, कथा-स्थापत्य आ रचना-वैशिष्ट्य

प्रेम-चतुष्टयक तृतीय नाटिका 'प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार' चतुष्टयक सर्वाधिक मौलिक आ वैचारिक रूपसँ साहसिक कृति थिक। एहि नाटिकाक कथा-वस्तु कोनो परम्परागत पौराणिक स्रोतसँ नहि आएल—ई कुणालक स्वतंत्र कल्पना थिक। राजनर्तकी श्वेता आ 'निरपेक्ष' राजा अतिरथ—दुनू काल्पनिक पात्र छथि, मुदा हुनकर द्वन्द्व एक चिरन्तन दार्शनिक-नाट्य प्रश्नकेँ मूर्त करैत अछि।

नाटककार एकटा अत्यंत धाहक (daring) विरोधाभास रचैत छथि—राजा अतिरथ कलाक महान संरक्षक, संगीत-नृत्यक पारखी, प्रजावत्सल, संत-सदृश—मुदा ओ 'निरपेक्ष' छथि—“प्रेम करब तँ नितांत मूर्खता थिक, एक टा अकाजक काज!” ओकर विरुद्ध ठाढ़ छथि श्वेता—एक नर्तकी जे सात वर्षक साधनाक बाद ७-वर्षीया अनुरागसँ आन्दोलित छथि, जे हठपूर्वक माँग करैत छथि जे 'कलाकारकेँ देखबिनु कलाकेँ देखब असम्भव थिक'।

नाटकक छह नाट्य-क्रम—(१) उद्धोषकक परिचय + श्वेताक नृत्य-अभ्यास + अतिरथक निरपेक्षता-दर्शन; (२) मंदिर-भेंट आ दरबारमे श्वेताक नृत्य-त्याग; (३) एकांत-माँग आ अतिरथक क्रोध-निष्कासन; (४) श्वेताक कथित जल-समाधि + अतिरथक व्याकुलता; (५) अरण्यमे भेंट, श्वेताक परिवर्तन—“कामना आ याचना हमर अतीत अछि”; (६) अतिरथक मुकुट-त्याग आ प्रकृतिमे एकमएक।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ शास्त्रीय नाट्यशास्त्रक नायिका-भेद आ श्वेता

भरतमुनिक नाट्यशास्त्रक अष्टनायिका-वर्गीकरणमे श्वेता एक विशेष स्थान रखैत छथि। ओ ‘अभिसारिका’ (प्रियतमसँ मिलनक लेल स्वयं जएवाली) नहि, ‘स्वाधीनपतिका’ (पतिकेँ वशमे रखएवाली) नहि—ओ एक ऐसी नायिका थिकाह जेकर निकटतम भारतीय नाट्य-समकक्ष ‘उत्कंठिता’ (प्रतीक्षारत) आ ‘विरहोत्कंठिता’ दुनू थिकाह, मुदा अंततः ओ दुनूसँ परे जाइत छथि। भरतक आठो नायिका-प्रकार प्रेमकेँ दोसर व्यक्तिक सापेक्षमे परिभाषित करैत अछि; श्वेता नाटकक अंतमे प्रेमकेँ ‘परम-पुरुष’ (प्रकृति-परमात्मा)मे विलीन कर’ लैत छथि।

ई विलीनीकरण भारतीय भक्ति-परम्पराक ‘विरहिणी-भक्त’क आदर्शसँ समरूप अछि—मीराबाईक ‘बावरी’ आ राधाक ‘पागलपन’—जाहिमे सांसारिक प्रेमक असम्भावना भक्ति-प्रेमक उदात्तताक रूपान्तरण बनि जाइत अछि। श्वेताक अन्तिम उद्घोषणा—“एत’ चर-गोचर-अगोचर सब हमरासँ प्रेम करत छथि, हम सबसँ प्रेम करत छी”—यैह भक्ति-परम्पराक ‘विश्व-प्रेम’क घोषणा थिक।

२.२ रस-विचार : शृंगारसँ शान्तक विकास-यात्रा

एहि नाटिकाक सर्वाधिक उल्लेखनीय रस-विशेषता थिक—एकहि पात्रमे (श्वेता) शृंगार-रसक तीव्र अनुभव आ तकर शान्त-रसमे रूपान्तरण। अभिनवगुप्त शान्त-रसकेँ सर्वोच्च रस मानैत छथि—जाहिमे समस्त अनुराग-विराग शमित भ’ एक ‘निर्वैयक्तिक सौन्दर्य-अनुभव’ उत्पन्न होइत अछि। श्वेताक अरण्य-जीवन एहि ‘शान्त-रस’क अवतरण थिक।

एहि यात्राक विडम्बना सुन्दर थिक—अतिरथ जे सदासँ ‘निरपेक्ष’ (शान्त-रसक पात्र जेकाँ लगैत छलाह) ओ नाटकक अंतमे श्वेताक प्रेमसँ ‘सपेक्ष’ (अनुरक्त) भ’ जाइत छथि; आ श्वेता जे ‘अनुरक्त’ छलीह ओ ‘निरपेक्ष’ (प्रकृति-विलीन) भ’ जाइत छथि। एहि रस-उलटफेरमे नाटकक नाट्य-कुशलता थिक।

२.३ ध्वनि-विचार : ‘आविष्कार’ शब्दक बहु-अर्थता

आनन्दवर्धनक ध्वन्यालोकक परिप्रेक्ष्यमे शीर्षकक ‘आविष्कार’ शब्द एहि नाटकक सर्वाधिक ध्वनि-सम्पन्न पद थिक। संस्कृतमे ‘आविष्कार’—अभिधातः ‘प्रकटीकरण/खोज’; लक्षणातः ‘स्वयंकेँ प्रकट करनाइ’ (श्वेताक अतिरथ-समक्ष आत्म-प्रकटन); व्यंजनातः ‘स्वयंकेँ आविष्कृत करनाइ’ (श्वेताक स्वयं अपन परम-प्रेमकेँ आविष्कार करनाइ)।

एहि तृतीय अर्थमे ‘आविष्कार’ एक ज्ञानमीमांसीय घटना बनि जाइत अछि। श्वेता अतिरथ-प्राप्तिक असफलतासँ प्रेमक एक उच्चतर रूप ‘आविष्कृत’ करैत छथि—“आब हमरा प्रेमक असली स्वरूप सँ परिचय भेल अछि”। ‘कुसमा-सलहेस’क टेक—“कुसुम बिना मकरंद तहिना प्रेम बिना की जीवन”—एहि नाटकमे श्वेताक मुँहसँ उद्भूत होइत अछि, आ नाटकक अंतमे ओ यैह ‘मकरंद’ प्रकृतिमे पाबैत छथि।

२.४ नाट्यशिल्प : कला-कलाकार-दर्शकक त्रिकोण

अतिरथक दर्शन—“शरीरक महत्त्व एतबे जे ओ संवाहक छी कलाक”—भारतीय सौन्दर्यशास्त्रक एक महत्त्वपूर्ण विवाद उठाबैत अछि। अभिनवगुप्त अपन ‘अभिनवभारती’मे कहलाह जे रस-निष्पत्ति तखने होइत अछि जखन दर्शक ‘सहृदय’ होएथि—कलाकारक व्यक्तित्वसँ ‘तादात्म्य’ (identification) नहि मुदा कलाक अनुभव—एहि अर्थमे अतिरथक दृष्टि अभिनवगुप्तक सहृदय-सिद्धांतक एक चरम रूप थिक।

मुदा श्वेता एकर सीमा प्रकट करैत छथि—कला आ कलाकारकें विभाजित करबाक प्रयास एक ‘कृत्रिम नीर-क्षीर विवेक’ थिक। कलाकारक भावना, शरीर, जीवन-अनुभव सभ कलामे विलीन होइत अछि—हुनकर ‘देहसँ फराक’ कला नहि होइत अछि। ई नाट्य-दार्शनिक विवाद सौन्दर्यशास्त्रक एक जीवित प्रश्न थिक।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांत

३.१ इब्सेन आ नोरा : प्रेम-अस्वीकारक बाद स्वतंत्रता

नार्वेजियन नाटककार हेनरिक इब्सेन (Henrik Ibsen, १८२८–१९०६) अपन ‘ए डॉल्स हाउस’ (A Doll’s House, १८७९)मे नोरा हेल्मेरक कथा लिखलनि—एक स्त्री जे समाज, पति आ परिवारक अपेक्षाकें तोड़ि क’ स्वातंत्र्यक दिस प्रस्थान करैत अछि। नोराक प्रस्थान समाजक तथाकथित ‘दायित्व’सँ पलायन नहि, अपन अस्मिताक खोजमे प्रस्थान थिक।

श्वेताक अरण्य-प्रस्थान इब्सेनक नोराक समानांतर थिक—मुदा एक महत्त्वपूर्ण उलटफेरक संग। नोरा ‘दरवाजा बन्द कर’ जाइत छथि (ओ अस्वीकृत समाजसँ विदा लैत छथि); श्वेता ‘बाँहि पसारल’ प्रकृतिक ओर जाइत छथि (ओ एक नव सम्बन्धक ओर बढ़ैत छथि)। नोराक प्रस्थान एकाकी; श्वेताक प्रस्थान अतिरथसँ जुड़ल—राजा मुकुट उतारि ओकर अनुगमन करैत छथि। ई इब्सेनसँ आगाँक एक नव रंगमंचीय कदम थिक।

३.२ सात्र आ कामू : विद्रोह-दर्शन आ ‘अब्सर्ड’

फ्रांसीसी अस्तित्ववादी अल्बेर कामू (Albert Camus, १९१३-१९६०) अपन ‘द मिथ ऑफ सिसिफस’ (The Myth of Sisyphus, १९४२)मे ‘अब्सर्ड’ (absurd / निरर्थकता)क अनुभवकें विश्लेषित कएलनि—जखन मानवक अर्थ-खोजक इच्छा आ संसारक मूकता/प्रतिरोधक बीच टकराहट होइत अछि। एहि टकराहटक उत्तरमे कामू कहलनि—‘एक सिसिफस कें सुखी कल्पित करबाक चाही’।

अतिरथक ‘निरपेक्षता’ कामूक अर्थमे एक ‘अब्सर्ड’ स्थिति थिक—एक सुन्दर, रसिक, कला-पारखी व्यक्ति जे प्रेमकें ‘अकाजक काज’ घोषित करैत अछि। श्वेता एहि ‘अब्सर्डिटी’क विरुद्ध विद्रोह करैत छथि—ओ दरबारमे नृत्य रोकि दैत छथि, मंदिरमे पयरमे माला रखैत छथि, एकांत-याचना करैत छथि। कामूक ‘विद्रोही मानव’ (l’homme révolté)क एक स्त्री-नाट्य-संस्करण थिकाह श्वेता।

नाटकक अन्तिम उलटफेर—जखन अतिरथ मुकुट उतारि क’ अरण्यमे प्रवेश करैत छथि—कामूक ‘सिसिफस-आनन्द’क एक रूप थिक। भार (राज-सिंहासन)कें छोड़ि क’ हुलास—ई कामूक दर्शनक नाट्य-प्रतिरूप थिक।

३.३ एरिक फ्रॉम : ‘प्रेम कला थिक’

अमेरिकी-जर्मन मनोविश्लेषक एरिक फ्रॉम (Erich Fromm, १९००-१९८०) अपन ‘द आर्ट ऑफ लविंग’ (The Art of Loving, १९५६)मे घोषणा कएलनि—“प्रेम एक कला थिक। कला जेकाँ ओकर सेहो सीखनाइ, अभ्यास आ समर्पण चाही।” फ्रॉम तर्क देलनि जे अधिकांश लोक प्रेमकें एक ‘वस्तु’ मानैत अछि जे ‘भेटैत’ अछि; वास्तवमे ओ एक ‘क्षमता’ थिक जकरा ‘विकसित’ करबाक चाही।

श्वेताक सात-वर्षीय साधना—नृत्यक नहि, प्रेमक सेहो—फ्रॉमक अर्थमे ‘प्रेम-कला’क अभ्यास थिक। मुदा फ्रॉमक दृष्टिसँ श्वेताक वैचारिक यात्राक सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षण ओ थिक जखन ओ घोषणा करैत छथि—“आब हमरा प्रेमक असली स्वरूप सँ परिचय भेल अछि।” एहि ‘असली स्वरूप’मे प्रेम एक व्यक्ति-केन्द्रित वासना नहि, एक ‘सर्वव्यापी भाव’ बनि जाइत अछि। फ्रॉमक भाषामे—‘mature love’ (परिपक्व प्रेम)।

३.४ एगॉन वील्ड आ 'एपिफैनी' : नाट्य-क्षणक चरमोत्कर्ष

आयरिश लेखक जेम्स जॉयस (James Joyce, १८८२-१९४१) अपन साहित्यिक सिद्धांतमे 'एपिफैनी' (epiphany / साक्षात्कार-क्षण)क अवधारणा दैत छलाह—एक साधारण क्षणमे अचानक सम्पूर्ण सत्यक प्रकटन। एहि सिद्धांतकेँ नाट्य-समीक्षक एगॉन वेल्ड (Egon Wellesz) आ अन्यक रंगमंचीय एपिफैनीक सिद्धांतमे विकसित भेल।

श्वेताक नदी-तट पर तारागण-दर्शन एक 'नाट्य-एपिफैनी' थिक—“हजारो-हजार तारावलि सँ भरल आकाश। केना स्नेह सँ देखि रहल छथि हमरा दिस!” ई साधारण वन-तट-दृश्य एकाएक एक विराट 'अर्थ-प्रकटन'मे बदलि जाइत अछि—“ई विचार हमरा मोन मे पहिने किएक नहि आएल?”। एहि क्षणमे श्वेताक वैचारिक रूपान्तरण होइत अछि। ई जॉयस-वेल्डक 'एपिफैनी'क एक मैथिली-नाट्य संस्करण थिक।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ 无为 (वूवेई) : अतिरथक निरपेक्षता आ दाओवादी निष्क्रियता

दाओवादी दार्शनिक परम्परामे (लाओज़ी, ६ठी शती ई.पू.) 'वूवेई' (无为, non-action / निष्क्रिय-क्रिया) एक केन्द्रीय अवधारणा थिक—“दाओ क' कऽ नहि करैत अछि, तथापि सब कछ होइत अछि।” 'वूवेई'क अर्थ निष्क्रियता नहि, अपितु 'कृत्रिम हस्तक्षेपसँ मुक्त' क्रिया थिक।

अतिरथक निरपेक्षता 'वूवेई'क एक विकृत रूप थिक—ओ कलाक स्वाभाविक प्रवाहमे हस्तक्षेप नहि करैत छथि (उचित), मुदा मानवीय भावना-प्रवाहमे सेहो 'हस्तक्षेप नहि' करैत छथि (अस्वाभाविक)। दाओवादी दृष्टिसँ ओ 'वूवेई'क नहि, 'स्ट्रैन्ड इन एक्शन' (जबरदस्ती बनाओल निष्क्रियता)क शिकार छथि। श्वेताक आरोप—“अपना चारू भर फुसिक मर्यादाक शीश महल ठाढ़ केने छी अहाँ”—यैह दाओवादी आलोचना थिक।

४.२ 自然 (जीरान) : प्रकृति-तादात्म्य आ श्वेताक अरण्य-जीवन

दाओवादी-बौद्ध परम्परामे 'जीरान' (自然, naturalness / स्वाभाविकता) एक उच्च आदर्श थिक—मानव-निर्मित बाधाकेँ तोड़ि 'प्राकृतिक प्रवाह'मे एकाकार होएब। चीनी 'शानशुई' (山水, mountain-water पर्वत-नदी) चित्रकला-परम्परामे मानव एक छोट आकृति थिकाह, विराट प्रकृतिमे विलीन होइत।

श्वेताक अरण्य-जीवन ‘ज़ीरान’क एक नाट्य-उदाहरण थिक। राजमहल, रंगमहल, आभूषण, सिंहासन सभ त्यागि क’ ‘गाछ-वृक्ष, फल आ फूल, निरंतर प्रवाहित निर्मिणी, उन्मुक्त आकाश’मे जीवन—एहिमे दाओवादी ‘ज़ीरान’क प्रतिध्वनि अछि। उद्धोषकक अंतिम वाक्य—“ओ लोकनि प्रकृतिक संगीत मे मिलि गेलाह, एकमएक भ’ गेलाह”—यैह ‘ज़ीरान’क पराकाष्ठा थिक।

४.३ 變 (बियान) : परिवर्तन आ ‘आई-चिंग’क नाट्य-विश्लेषण

‘आई-चिंग’ (易经, Book of Changes / परिवर्तनक पुस्तक) चीनी दर्शनक एक मूलभूत ग्रन्थ थिक जे ‘बियान’ (變, change / परिवर्तन)कें सृष्टिक मूल-सिद्धांत मानैत अछि। एहिमे कहल गेल—परिवर्तन अनिवार्य थिक; यैह जे एकरा स्वीकार करैत अछि ओ मुक्त होइत अछि; जे एकरा रोकैत अछि ओ कष्ट पाबैत अछि।

एहि नाटकमे दू प्रकारक परिवर्तन-प्रतिक्रिया अछि। अतिरथ—परिवर्तनसँ भागैत छथि (निरपेक्षता ओकर रक्षा-कवच थिक); श्वेता—परिवर्तनकें स्वीकार करैत छथि (अस्वीकार भेलाक बाद सेहो, नदी-तट पर परिवर्तन)। आई-चिंगक दृष्टिसँ श्वेता एक ‘junzi’ (君子, superior person / श्रेष्ठ व्यक्ति)क जेकाँ व्यवहार करैत छथि—परिवर्तनक धाराक संग बहैत छथि।

४.४ 艺术 आ 生活 (यीशू आ शेंगहुओ) : कला आ जीवनक द्वन्द्व

चीनी सौन्दर्यशास्त्री लियू झियुआन (Liu Zhiyuan) जेकाँ विद्वान लोकनि ‘यीशू’ (艺术, art) आ ‘शेंगहुओ’ (生活, life)क सम्बन्धक विश्लेषण कएलनि। ओ तर्क देलनि जे उत्कृष्ट कला जीवनसँ उत्पन्न होइत अछि, मुदा जीवनसँ ‘फराक’ कला एक खाली आकार मात्र थिक।

अतिरथक दर्शन—“शरीर मात्र संवाहक छी कलाक”—यैह ‘यीशू’कें ‘शेंगहुओ’सँ विच्छेद करबाक प्रयास थिक। श्वेताक विरोध—“कलाकार सँ निरपेक्षता केना संभव भ’ सकैए”—यैह लियू-परम्पराक तर्क थिक। चीनी सौन्दर्यशास्त्रमे ‘क्वी’ (气, vital energy / प्राण-शक्ति)क सिद्धांत कहैत अछि जे कलामे कलाकारक ‘क्वी’ (जीवन-ऊर्जा) अनिवार्यतः प्रवाहित होइत अछि—बिना ओकर ‘क्वी’क कला मृत होइत अछि।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ हनोख लेविन : राजसत्ताक मर्यादा आ मानव-विद्रोह

हनोख लेविन अपन ‘द पेशेन्स ऑफ स्टोन’ (Patience of Stone) जेकाँ नाटकमे बेर-बेर ओहि व्यक्तिक कथा कहलाह जे सत्ता-संरचनाक विरुद्ध व्यक्तिगत स्तर पर विद्रोह करैत अछि। लेविन एक विशेष नाट्य-तकनीक प्रयोग करैत छलाह—व्यक्तिक ‘छोट विद्रोह’ (small rebellion) जे सत्ताक भारी संरचनाकेँ हिला दैत अछि।

श्वेताक दरबारमे नृत्य रोकनाइ लेविनक ‘छोट विद्रोह’क एक उत्कृष्ट उदाहरण थिक—ओ न हथियार उठाबैत छथि, न क्रान्ति घोषित करैत छथि; मात्र नृत्य रोकि दैत छथि। ई एकटा सटीक, व्यक्तिगत, सांकेतिक विद्रोह थिक जे राज-दरबारक सम्पूर्ण नाट्य-संरचनाकेँ एक क्षणक लेल स्तब्ध कर’ दैत अछि। लेविनक भाषामे—‘एक छोट मनुष्य, एकटा पैघ ‘नहि’।’

५.२ एली रोज़िक : ‘ऑफ-स्टेज’ क्षण आ प्रतिमा-अनुपस्थिति

एली रोज़िक अपन ‘थिएट्रिकल इमेज’ ग्रन्थमे ‘ऑफ-स्टेज’ (off-stage / मंचेतर) क्षणक प्रतिमात्मक महत्त्व विश्लेषित कएलनि। जे रंगमंच पर नहि देखाइत अछि मुदा दर्शकक कल्पनामे उपस्थित अछि, ओकर नाट्य-शक्ति बहुधा मंचीय दृश्यसँ अधिक होइत अछि।

एहि नाटकमे श्वेताक ‘जल-समाधि’ एकटा ‘ऑफ-स्टेज’ क्षण थिक—दर्शक ओ देखैत नहि, मात्र कंचुकीक वाक्यमे सुनैत अछि। रोज़िकक परिप्रेक्ष्यमे ई ‘प्रतिमा-अनुपस्थिति’ (iconic absence) सर्वाधिक नाट्य-शक्तिशाली क्षण थिक—अतिरथक प्रतिक्रिया (“एतहु भ’ सकैत अछि जे जल-धारामे भसिया क’ कतहु कछेर लागि गेल होधि”) एहि ‘अनुपस्थिति’क शक्तिकेँ मापैत अछि।

५.३ इजरायली थिएटर आ वनवास : निर्वासन-परम्परा

इजरायली रंगमंचक एक केन्द्रीय विषयवस्तु रहल अछि—‘गलुत’ (גלות, galut / exile / निर्वासन)। एहि निर्वासन-परम्परामे घर छोड़नाइ कोनो पतन नहि—ओ एक ‘अपरिहार्य यात्रा’ थिक जाहिमे नवीन अर्थ-निर्माण होइत अछि।

श्वेताक रंगमहलसँ निष्कासन एक ‘गलुत’ (निर्वासन) थिक जे एक ‘तिशुवा’ (teshuvah / घर-वापसी, मुदा आत्मिक घर)क रूपमे समाप्त होइत अछि। वन-निर्वासनमे श्वेता एक ‘नव घर’ पाबैत छथि

—प्रकृतिक संग एकमएक। अतिरथक मुकुट-त्याग आ अरण्य-प्रवेश एहि यात्राक ‘reverse galut’ थिक—राजा अपन ‘घर’ (सिंहासन)छोड़ि श्वेताक ‘घर’ (अरण्य)मे आबैत छथि।

५.४ इजराइली पर्यावरण-रंगमंच : प्रकृतिमे एकमएकक राजनीति

समकालीन इजरायली रंगमंचमे ‘पर्यावरण-रंगमंच’ (environmental theatre) आ ‘प्रकृति-नाट्य’ (site-specific theatre)क प्रवृत्ति प्रबल भेल अछि—जाहिमे मानव-प्रकृति सम्बन्धक रंगमंचीय विषय बनाओल जाइत अछि। एहि परिप्रेक्ष्यमे नाटककार योसी माया (Yossi Maya) जेकाँ कलाकार लोकनि ‘मानव बनाम प्रकृति’क राजनीतिक रंगमंच पर अनलाह।

श्वेताक समापन-वाक्य—“एत’ चर-गोचर-अगोचर सब हमरासँ प्रेम करत छथि, हम सबसँ प्रेम करत छी”—एहि पर्यावरण-नाट्य-दृष्टिसँ एक ‘इकोलॉजिकल लव’ (पारिस्थितिक प्रेम)क घोषणा थिक। मानवीय सम्बन्धक विफलता (अतिरथसँ प्रेम-अस्वीकार) एक ‘बायोफिलिक’ (जीव-प्रेम) पारिस्थितिकीय विस्तारमे पर्यवसित होइत अछि।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण : प्रेमक ‘विस्तार’ केहन होइत अछि?

शीर्षकक ‘विस्तार’ शब्द एहि नाटकक मूल-प्रश्न थिक—प्रेम ‘विस्तृत’ होइत अछि, अर्थात् ओ एक व्यक्तिसँ प्रारम्भ होइत अछि आ समग्र अस्तित्वक ओर बढ़ैत अछि। चारू नाट्य-परम्परा एहि ‘विस्तार’कें भिन्न-भिन्न कोणसँ देखैत अछि।

भारतीय दृष्टि—भक्ति-परम्पराक विरहिणी-नायिकाक ‘शान्त-रस’मे रूपान्तरण; अभिनवगुप्तक शान्त-रस (श्वेता बनाम अतिरथक रस-उलटफेर); ‘आविष्कार’क त्रि-स्तरीय ध्वनि; कला-कलाकार-दर्शनक नाट्य-विवाद।

पाश्चात्य दृष्टि—इब्सेनक नोरासँ परे प्रस्थान (विच्छेद नहि, नव सम्बन्ध); कामूक अब्सर्ड-विद्रोह; फ्रॉमक ‘mature love’ (सर्वव्यापी प्रेम); जॉयसक एपिफैनी (तारागण-दर्शन = रूपान्तरण-क्षण)।

चीनी दृष्टि—अतिरथक विकृत वूवेई (无为); श्वेताक ज़ीरान (自然) = प्रकृति-तादात्म्य; आई-चिंगक बियान (变) = परिवर्तन-स्वीकार; यीशू-शेंगहुओ विवाद (कला बनाम जीवन)।

इजरायली दृष्टि—लेविनक ‘छोट विद्रोह’ (दरबारमे नृत्य-त्याग); रोज़िकक iconic absence (जल-समाधि); गलुत-तिशुवा (निर्वासन→आत्मिक घर-वापसी); पर्यावरण-रंगमंचक इकोलॉजिकल लव।

चारू परम्पराक साझा निष्कर्ष—प्रेमक ‘विस्तार’ एक व्यक्ति (अतिरथ)क सीमासँ मुक्त होइत प्रकृति, ब्रह्माण्ड आ समग्र सत्तामे विलीन होएब थिक। एहि अर्थमे एहि नाटकक शीर्षक सम्पूर्ण प्रेम-चतुष्टयक सर्वाधिक महत्वाकांक्षी दार्शनिक घोषणा थिक।

अतिरथक मुकुट-त्याग आ अरण्य-प्रवेश—एहि नाटिकाक अंतिम रंगमंचीय छवि—एक विडम्बना-पूर्ण आनन्दक क्षण थिक। जे ‘निरपेक्ष’ बनल रहल, ओ अन्ततः ‘सपेक्ष’ भेल; आ जे ‘सपेक्ष’ छलीह ओ ‘निरपेक्ष’ भेलीह—यैह प्रेमक विस्तारक नाट्य-सत्य थिक।

अध्याय ८

प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र

सुप्रभा, अष्टावक्र आ निष्ठाक नाट्यपरीक्षा

प्रकाशन : अंतिका, जुलाई-सितंबर २०१४ • स्थान : वन-आश्रम/मिथिला/स्वर्ग • चौदह दृश्य

१. परिचय, कथा-संरचना आ संग्रहक परिप्रेक्ष्यमे स्थान

प्रेम-चतुष्टयक अंतिम नाटिका ‘प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र’ समग्र संग्रहक अंतिम कृति थिक आ एहि नाते एकर स्थान प्रतीकात्मक अछि—ई ‘प्रेमक विस्तार’ (षष्ठ)क बाद ‘प्रेमक परीक्षा’ थिक। एहि नाटकक महाकाव्यात्मक विस्तार (चौदह दृश्य, पाँच स्थान—आश्रम/मिथिला-नगर/जनक-दरबार/स्वर्ग/वन; कम-से-कम दस पात्र) प्रेम-चतुष्टयमे असाधारण अछि।

कथाक स्रोत महाभारतक अष्टावक्र-आख्यान थिक (वन-पर्व), मुदा कुणाल एकरा एक सम्पूर्ण प्रेम-नाटक बना दैत छथि जाहिमे जनक-दरबार आ वंदी-शास्त्रार्थक ऐतिहासिक-पौराणिक कथा एक ‘प्रेम-परीक्षा’क फलकमे समाहित होइत अछि। नाटकक बारह दृश्य अष्टावक्रक—आ तेरहम-चौदहम सुप्रभाक—कथा थिक।

नाटकक सात प्रमुख नाट्य-क्रम—(१) गर्भमे ज्ञान-श्राप + जन्म; (२) उद्दालक आश्रम, पिता-अनुपस्थिति आ सुप्रभासँ प्रथम-मिलन; (३) मिथिला-यात्राक योजना; (४) महाराज जनकसँ सड़क-विवाद, वंदी-शास्त्रार्थ, पिता-मुक्ति; (५) नदी-स्नानसँ अष्टावक्रकें यौवन; (६) वदन्यक वर्ष-भर-परीक्षा + सुप्रभाक एकांत-प्रतीक्षा; (७) उर्वशी-अस्वीकार, वापसी आ श्वेत-कमल-माल्यसँ विवाह।

२. भारतीय नाट्य-सिद्धांत

२.१ महाभारत-पुनर्पाठ : विकलांग नायककें केन्द्रमे आनबाक साहस

महाभारतमे अष्टावक्र-आख्यानक प्रयोजन मुख्यतः दार्शनिक थिक—‘अष्टावक्र-गीता’ (जनकसँ वार्तालाप) आत्म-ज्ञानक ग्रन्थ थिक। वंदी-शास्त्रार्थ एक द्वितीय कथा-स्तर थिक। कुणाल एहिमे एक

तृतीय स्तर जोड़ैत छथि—प्रेम-परीक्षा। एहिसँ उत्पन्न होइत अछि एक त्रि-स्तरीय नाटक—ज्ञान (वंदी-शास्त्रार्थ) + कर्तव्य (पिता-मुक्ति) + प्रेम (सुप्रभा-विवाह)।

एहिसँ अधिक महत्त्वपूर्ण—कुणाल एक ‘विकलांग नायक’कें रंगमंचक केन्द्रमे रखैत छथि। भारतीय नाट्य-परम्परामे नायकक ‘शरीर-सम्पत्ति’ (नाट्यशास्त्रानुसार) एक मानदण्ड थिक—‘धीरोदात्त’ नायक बलशाली, सुन्दर, शूरवीर होइत अछि। अष्टावक्र एहि मानदण्डकें पलटि दैत छथि—आठ ठाम टेढ़ शरीर, मुदा असाधारण ज्ञान। भरतक नाट्यशास्त्रमे एहन ‘विकलांग नायक’क स्पष्ट श्रेणी नहि अछि—कुणाल एक नव नाट्य-प्रतिमान रचैत छथि।

२.२ अग्नि-परीक्षाक रूपान्तरण : सोन-कसौटी

भारतीय काव्य-नाट्य-परम्परामे ‘अग्नि-परीक्षा’ एक प्रमुख मोटिफ थिक—रामायणमे सीताक अग्नि-परीक्षा प्रेम-निष्ठाक प्रमाण थिक। कुणाल एहि मोटिफकें रूपान्तरित करैत एक ‘शीत-परीक्षा’ रचैत छथि—अग्निमे नहि, विरहक एकांतमे, वर्ष-भरक अनदेखारमे। समापन-दोहा एहि रूपान्तरणकें स्पष्ट करैत अछि—

जहिना स्वर्ण मे आगि सँ आबए आर निखार / प्रेम, परीक्षा दैत अछि, तँ होइछ आर प्रगाढ़।

एहि दोहामे ‘सोन-कसौटी’ (स्वर्णक अग्नि-परीक्षा)क रूपक प्रेमक परीक्षापर लागू होइत अछि। ई रूपकात्मक अग्नि (विरह-परीक्षा) सीताक शाब्दिक अग्नि-परीक्षासँ अधिक सूक्ष्म आ दार्शनिक थिक।

२.३ रस-महोत्सव : सात रसक सम्मिलन

एहि संग्रहक सातो नाटकमे एहिमे सर्वाधिक विस्तृत रस-महोत्सव अछि। ‘वीर’—अष्टावक्रक दरबार-संघर्ष आ वंदी-विजय; ‘करुण’—गर्भमे श्राप, पितृ-वियोग, सुप्रभाक प्रतीक्षा-व्यथा; ‘अद्भुत’—नदी-स्नानसँ यौवन-प्राप्ति, वंदीक जल-समाधि रहस्य-उद्घाटन; ‘हास्य’—दरबार-दृश्यमे उपस्थित जनताक ‘कूबड़ महाराज’ सम्बोधन आ वंदीक हँसी; ‘शृंगार’—सुप्रभा-अष्टावक्रक प्रेम; ‘शान्त’—अष्टावक्रक उर्वशी-अस्वीकार; ‘भयानक’—पिता जल-समाधिमे।

भरत ‘अंगी-रस’ + ‘अंग-रस’क सिद्धांत कहलाह—एहि नाटकमे ‘वीर’ आ ‘शृंगार’ परस्पर अंगी-रस बनैत अछि। वीरताक ज्ञान-संघर्ष प्रेमक पात्रताक प्रमाण थिक; आ प्रेम वीरताक प्रेरणा।

२.४ अष्टावक्रक उर्वशी-अस्वीकार : भारतीय साहित्यमे एक दुर्लभ क्षण

भारतीय साहित्य-परम्परामे उर्वशी सर्वोच्च सौन्दर्यक प्रतीक थिकाह—पुरुषवाक उर्वशी-प्रेम, कालिदासक ‘विक्रमोर्वशीय’ एहि आकर्षणक शास्त्रीय नाट्य-रूप थिक। अष्टावक्रक उर्वशी-अस्वीकार

एहि दीर्घ परम्पराक विरुद्ध एक साहसिक नाट्य-निर्णय थिक। ओ कहैत छथि—“हमर उर्वशी, मेनका, रंभा...सब सुप्रभा छथि। मात्र सुप्रभा।”—ई वाक्य शास्त्रीय ‘अप्सरा-आकर्षण’ परम्पराक एक सचेत नाट्य-विखण्डन थिक।

३. पाश्चात्य नाट्य-सिद्धांत

३.१ विक्टर फ्रैंकल : अर्थ-खोज आ पीड़ाक रूपान्तरण

ऑस्ट्रियाई मनोचिकित्सक विक्टर फ्रैंकल (Viktor Frankl, १९०५–१९९७) अपन ‘मैन’स सर्च फॉर मीनिंग (Man’s Search for Meaning)मे अपन नाजी-कारागार-अनुभवसँ सीखल सिद्धांत प्रस्तुत कएलनि—‘लोगोथेरापी’ (Logotherapy) : मानव ‘अर्थ’क खोजमे जीबैत अछि; जे व्यक्ति अपन पीड़ामे ‘अर्थ’ पाबैत अछि ओ ओकर सामना कर’ सकैत अछि।

अष्टावक्रक जन्म एक पीड़ामे होइत अछि—पितृ-श्राप। मुदा माताक परिचय (श्वेतकेतुक कठोर वचनसँ) ओकर पीड़ाकेँ ‘अर्थ’ दैत अछि—“पिताश्रीकेँ मुक्त करब।” फ्रैंकलक भाषामे—‘आत्म-अतिक्रमण’ (self-transcendence)—स्वयंसँ परे एक ‘अर्थ’क सेवामे अपनाकेँ समर्पित करनाइ—अष्टावक्रक सम्पूर्ण नाट्य-यात्रा एहि आत्म-अतिक्रमणक कथा थिक।

उर्वशी-अस्वीकार एहि दृष्टिसँ फ्रैंकलक ‘अर्थ-पूर्ण जीवन’क सर्वोच्च अभिव्यक्ति थिक—ब्रह्माण्डक सर्वोच्च सौन्दर्य (उर्वशी) आ वैभव (स्वर्गसुख)केँ ठुकरा क’ एक ‘अर्थपूर्ण’ सम्बन्ध (सुप्रभासँ प्रेम)केँ चुनब।

३.२ सोफोक्लीज : शारीरिक दोषक त्रासदी आ ज्ञान-विजय

ग्रीक त्रासदीकार सोफोक्लीज (Sophocles, ४९७–४०६ ई.पू.) अपन ‘ईडीपस रेक्स’ (Oedipus Rex)मे एक ऐसे नायककेँ प्रस्तुत कएलनि जे एक ‘जन्म-दोष’ (लँगड़ापन, ‘swollen foot’) लेक’ जन्मल आ जकर पूरा जीवन एक श्राप-पूर्वनिर्धारित—ओकर जन्मसँ उत्पन्न ज्ञान-खोज ओकर विनाश बनि जाइत अछि।

अष्टावक्रसँ तुलना करनाइ रोचक थिक—दुनूक जन्म एक श्रापसँ जुड़ल (ओडिपस = पिता-श्राप, अष्टावक्र = पिता-श्राप); दुनूक जीवन पिता-खोजसँ आरम्भ; दुनू ज्ञान-केन्द्रित। मुदा निर्णायक भेद—ओडिपसक ज्ञान-खोज विनाशक ओर लेजाइत अछि; अष्टावक्रक ज्ञान-खोज मुक्ति आ प्रेमक ओर। एहि भेदमे भारतीय आशावादी नाट्य-दर्शन आ ग्रीक विडम्बनापूर्ण नाट्य-दर्शनक मूलभूत अंतर प्रकट होइत अछि।

३.३ बाख्तिन : ‘दूर भगनाइ’ आ ‘मिलन’क कार्निवालेस्क

बाख्तिनक ‘कार्निवालेस्क’ सिद्धांत एहि नाटकमे एक विशेष रंगमंचीय क्षणमे प्रकट होइत अछि— अष्टावक्रक दरबार-भेंट। द्वारपाल ‘कूबड़ महाराज’ कहि बाट देलकतहि; मुदा ओही ‘कूबड़’ व्यक्ति बाटक अधिकारक कानूनी-नैतिक तर्क दैत छथि। ई कार्निवालेस्क उलटफेर थिक—समाजक ‘निम्नतम’ (विकलांग) समझाओल व्यक्ति समाजक ‘उच्चतम’ (महाराज)कें ज्ञान सिखाबैत अछि।

अष्टावक्रक वंदी-विजयक बाद समवेत-हँसी क्षण—“नीक भेलनि, बड़ अतत्तह करैत छलाह”— बाख्तिनक ‘रिलीविंग लाफ्टर’ (मुक्तिदायक हँसी) थिक। जे समाज विकलांग बालककें दरबारसँ बाहर करबाक प्रयास केलक, ओही समाज हुनकर विजयमे आनन्दित होइत अछि—कार्निवालेस्क सामाजिक-न्याय।

३.४ पीटर ब्रूक : ‘महाभारत’ आ पौराणिक रंगमंच

पीटर ब्रूकक ‘महाभारत’ (१९८५, रंगमंच + फिल्म) एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग थिक—महाभारतक विशाल आख्यानकें एक सार्वभौम मानवीय नाट्य-अनुभवमे परिणत करबाक प्रयास। ब्रूक एहि प्रक्रियामे पूरी तरह भारतीय नाट्य-परम्परासँ तत्त्व लेलनि, मुदा एहि परम्परामे बाहरसँ प्रवेश केलाह।

कुणाल ब्रूकसँ भिन्न—ओ एहि परम्पराक भीतरसँ लिखैत छथि। एहि नाटकमे महाभारतक ‘वन-पर्व’क अष्टावक्र-आख्यानकें मिथिला-केन्द्रित बनाएब (जनक = मिथिलाक राजा), वंदीक रहस्य-उद्घाटन (ओ वरुण-पुत्र छथि, जल ओकर घर)कें एक हास्य-सह-अद्भुत दृश्यमे परिणत करनाइ—ई ब्रूकक ‘बाहरी पुनर्व्याख्या’सँ भिन्न एक ‘आन्तरिक पुनर्जीवन’ थिक।

४. चीनी नाट्य-सिद्धांत

४.१ 贬谪 (बियान-झे) : निर्वासित-प्रतिभाक परम्परा

चीनी साहित्य-परम्परामे ‘बियान-झे’ (贬谪, exile of talented official / प्रतिभावान-व्यक्तिक निर्वासन/अपमान) एक प्रमुख विषयवस्तु थिक। कवि कू-युआन (屈原, ३४०-२७८ ई.पू.) सँ ल’क’ सु-डोंगपो (苏东坡, १०३७-११०१) धरि—अनेक महान चीनी कवि-विद्वान अन्यायपूर्वक निर्वासित भेलाह, मुदा अपन प्रतिभासँ अमर भेलाह।

अष्टावक्रक जन्म-श्राप एक ‘बियान-झे’ थिक—ओ गर्भहि टासँ ‘निर्वासित’ छलाह (अपन ही शरीरसँ)। मुदा चीनी ‘बियान-झे’ परम्पराक जेकाँ हुनकर प्रतिभा ओहि निर्वासनकें एक

‘महाकाव्यात्मक यात्रा’मे बदलि दैत अछि। वंदी-विजयक बाद नदी-स्नानसँ यौवन—ई चीनी ‘बियान-झे-साहित्य’क अन्तिम मुक्ति-क्षणक समरूप थिक।

४.२ 忠 (झोंग) : निष्ठा आ एकान्त-साधना

कन्फ्यूशियाई नैतिक-दार्शनिक परम्परामे ‘झोंग’ (忠, loyalty/faithfulness / निष्ठा) एक केन्द्रीय मूल्य थिक—एकरा प्रायः ‘शासक-प्रति-निष्ठा’ कहल जाइत अछि, मुदा मूल अर्थमे ई ‘अपन वचनक प्रति निष्ठा’ थिक।

वर्ष-भरक परीक्षामे दुनूक ‘झोंग’ परिलक्षित होइत अछि—अष्टावक्र वदन्यक शर्तक ‘अक्षरशः पालन’ करैत छथि (सुप्रभाक लग रहैतहुँ, जानि-बूझि देखैत-भागैत छथि); सुप्रभा पिताक इशाराकेँ गमिल ‘सायास आश्रम सँ बहरेनाइ कम क’ दैत छथि। दुनूक ‘झोंग’ भिन्न-भिन्न दिशामे थिक मुदा एकहि ‘अर्थ’ (प्रेमक प्रमाण) प्रकट करैत अछि।

४.३ 折子戏 (झेज़ीशी) आ नाटकक खंड-संरचना

चीनी ‘झेज़ीशी’ (折子 , excerpt play)क परम्परा एहि नाटकक चौदह-दृश्यीय विस्तारकेँ बुझबामे सहायक अछि। एहि नाटकमे तीन स्वतंत्र ‘झेज़ीशी’ स्पष्टतः अछि—(क) वंदी-शास्त्रार्थ (जनक-दरबारक दृश्य—सम्पूर्णतः स्वायत्त नाट्य-खंड); (ख) वर्ष-परीक्षा (अष्टावक्र-सुप्रभाक एकांत-संघर्ष); (ग) उर्वशी-अस्वीकार। ई तीनू खंड स्वतंत्र ‘झेज़ीशी’ जेकाँ खेलल जा सकैत अछि मुदा एकहि संग मिलि क’ एक विराट ‘प्रेम-परीक्षा’ बनाबैत अछि।

४.४ 问答 (वेन-दा) : प्रश्न-उत्तर-दर्शन आ शास्त्रार्थ

चीनी दार्शनिक परम्परामे ‘वेन-दा’ (问答, question-answer dialogue) एक प्रमुख ज्ञान-विधि थिक—झुआंगज़ी (庄子)क संवाद, कन्फ्यूशियसक ‘एनालेक्ट्स’, आ ज्ञान बौद्धक कोआन। वंदी-शास्त्रार्थ एहि ‘वेन-दा’ परम्पराक एक नाट्य-संस्करण थिक। उद्घोषकक भाष्य—“शंका आ समाधान, खंडन आ मंडन, प्रश्न आ प्रतिप्रश्न”—यैह ‘वेन-दा’क संरचना थिक।

अष्टावक्रक वंदीसँ पहिल वार्तालाप चीनी ज्ञान-दर्शनक ‘कोआन’ (公案, paradoxical riddle)जेकाँ थिक—बंदी हँसैत छथि ‘कूबड़ बालकसँ शास्त्रार्थ’ पर, अष्टावक्र उत्तर दैत छथि—“वक्रोक्ति आ हास सँ कोनहु लाभ नहि, शास्त्रार्थक अपेक्षा अछि।” ई ‘वेन-दा’ परम्पराक मूल आत्मा थिक—प्रश्नक गाम्भीर्य हँसीकेँ अप्रासंगिक बना दैत अछि।

५. इजरायली नाट्य-सिद्धांत

५.१ डिसेबिलिटी आ इजरायली रंगमंच : अष्टावक्रक शारीरिकता

इजरायलमे ‘डिसेबिलिटी थिएटर’ (Disability Theatre) एक महत्त्वपूर्ण समकालीन आन्दोलन थिक—‘इशुव नागेश’ (1971, accessible/inclusive) रंगमंच जे विकलांग कलाकारकेँ केन्द्रमे रखैत अछि। एहि परम्परामे शरीर एक ‘कमतरि’ नहि, एक ‘भिन्न क्षमता’ (different ability) थिक।

अष्टावक्रक नाट्य-प्रस्तुति एहि आन्दोलनसँ तीन दशक पूर्वक एक भारतीय-पौराणिक संस्करण थिक। ओ ‘आठ ठाम टेढ़’ शरीरकेँ न ‘छिपाबैत छथि, न ‘क्षमा माँगैत छथि—ओ कहैत छथि—“शरीर सँ आठ ठाम टेढ़ सेहो छी। परंतु बुद्धि के वयस आ रूप सँ संबंध नहि।” एहि एक वाक्यमे सम्पूर्ण ‘डिसेबिलिटी जस्टिस’ (disability justice)क दर्शन थिक।

५.२ एली रोज़िक : नदी-स्नान आ ‘रूपान्तरण-प्रतिमा’

एली रोज़िकक प्रतिमात्मकता-सिद्धांतमे ‘रूपान्तरण-प्रतिमा’ (transformation-icon) एक महत्त्वपूर्ण श्रेणी थिक—ओ क्षण जाहिमे रंगमंच पर एक पात्रक ‘छवि’ एकाएक बदलि जाइत अछि आ दर्शक एहि परिवर्तनक ‘साक्षी’ बनैत छथि।

नदी-स्नानक बाद अष्टावक्रक ‘सोझ आ स्वस्थ भ’ जाएब’ एक ऐसी ‘रूपान्तरण-प्रतिमा’ थिक जे रंगमंचमे अभिनयक माध्यमसँ दृश्यात्मक रूपमे प्रस्तुत होइत अछि। रोज़िकक परिप्रेक्ष्यमे एहि क्षणक दोहरा प्रतिमात्मकता अछि—(क) शारीरिक रूपान्तरण (टेढ़->सोझ) आ (ख) आत्मिक रूपान्तरण (पुत्र->ज्ञानी)। दर्शक दुनूकेँ एकहि संग देखैत अछि।

५.३ यहूदी तालमुद-परम्परा आ शास्त्रार्थ : वंदी-विजयक समानांतर

यहूदी धर्म-परम्परामे ‘तालमुद’ (Talmud) एक विशिष्ट शास्त्रार्थ-परम्परामे संकलित अछि—‘पिल्पुल’ (719-79, pilpul / dialectical disputation) जाहिमे दू विद्वान एक विषयपर तर्क-प्रतिर्तर्कसँ सत्यकेँ उद्घाटित करैत छथि। एहि परम्परामे कनिष्ठ वा असम्भावित विद्वानक विजय एक नाट्य-परम्परा थिक।

वंदी-शास्त्रार्थ ‘पिल्पुल’क एक हिन्दू-पौराणिक समानांतर थिक—एक अल्पवयस्क, विकलांग बालक (अष्टावक्र) एक ‘महापंडित’ (वंदी)केँ तर्क-प्रतितर्कसँ परास्त करैत अछि। जनकक मध्यस्थता पिल्पुलक ‘बेत-दिन’ (בית דין, house of judgment / न्याय-मण्डली)क समरूप थिक।

५.४ इजरायली ‘होप थिएटर’ : प्रेमक परीक्षामे आशावाद

इजरायली रंगमंच-विद्वान नाओमी लापिद (Naomi Lapid) जेकाँ विचारक लोकनि एक विशेष धारा रेखांकित कएलनि—‘होप थिएटर’ (Theatre of Hope) जाहिमे विपरीत परिस्थितिमे सेहो आशाक अटूट धागा बनल रहैत अछि। ई ‘होप’ नैव, सरल आशावाद नहि—ओ एक ‘परीक्षित आशा’ थिक।

एहि नाटकक समापन-दोहा—“जहिना स्वर्ण मे आगि सँ आबए आर निखार / प्रेम, परीक्षा दैत अछि, तँ होइछ आर प्रगाढ़”—इजरायली ‘होप थिएटर’क आत्मिक घोषणा थिक। सम्पूर्ण संग्रहक अंतिम वाक्य—“प्रेम सँ बढ़िक’ भाव ने दोसर, महिमा अपरंपार / आउ करी सब मिलि एक स्वर सँ, प्रेमक जय-जयकार!”—सप्तम नाटकक नहि, समग्र संग्रहक जय-घोषणा थिक।

६. चतुर्भुज-संश्लेषण : ‘परीक्षा’ किएक अनिवार्य थिक?

चारू नाट्य-परम्पराकेँ एकठाम राखि देखल जाए तँ एहि नाटकक (आ समग्र संग्रहक) केन्द्रीय प्रश्नक उत्तर भेटैत अछि—‘परीक्षा’ प्रेमकेँ ‘प्रमाणित’ नहि करैत, ओकरा ‘परिपक्व’ करैत अछि।

भारतीय दृष्टि—विकलांग नायककेँ केन्द्रमे आनबाक नाट्यशास्त्रीय साहस; सप्त-रस-महोत्सव; अग्नि-परीक्षाक शीत-परीक्षामे रूपान्तरण; उर्वशी-अस्वीकार = अप्सरा-परम्पराक विखण्डन।

पाश्चात्य दृष्टि—फ्रैंकलक लोगोथेरापी (पीड़ामे अर्थ); ओडिपस-साम्य आ भेद (विनाश बनाम मुक्ति); बाख्तिनक कार्निवालेस्क (कूबड़ बालक -> दरबार-विजेता); ब्रूकक बाहरी बनाम कुणालक आन्तरिक पुनर्जीवन।

चीनी दृष्टि—贬谪 (बियान-झे / निर्वासित-प्रतिभा) परम्परा; 忠 (झोंग / निष्ठा) = दुनूक वर्ष-परीक्षा; 折子戏 (झेज़ीशी) त्रि-खंड; 问答 (वेन-दा / ज्ञान-शास्त्रार्थ) = वंदी-विजय।

इजरायली दृष्टि—डिसेबिलिटी जस्टिस (‘बुद्धि के वयस आ रूप सँ संबंध नहि’); रोज़िकक रूपान्तरण-प्रतिमा (नदी-स्नान); तालमुदिक पिल्पुल = वंदी-शास्त्रार्थ; होप थिएटर = समापन-दोहाक आशा-घोषणा।

चारू परम्पराक साझा निष्कर्ष—प्रेमक ‘परीक्षा’ एक बाह्य-थोपल यातना नहि, एक अन्तर-उत्पन्न ‘निखार’ थिक। जहिना अग्नि सोनकें नष्ट नहि, शुद्ध करैत अछि—तहिना वर्ष-भरक विरह-एकांत प्रेमकें नष्ट नहि, ‘प्रगाढ़’ करैत अछि। एहि अंतिम नाटकमे कुणाल समग्र संग्रहक वैचारिक धुरीकें—‘प्रेम सत्य छै’—एक बेर अंतिम रूपसँ घोषित करैत छथि।

७. संग्रह-समाहार : सातो नाटकक वैचारिक एकता

सातो नाटकक चतुर्भुज-समीक्षाक उपरांत, एक समग्र दृष्टिसँ देखला पर, ‘कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोटा नाटक’ एक सुसंगठित वैचारिक यात्रा थिक।

लोकनाट्य-त्रयीक वैचारिक क्रम : ‘चालिस चोर’ (बुद्धि) -- ‘बिदापत’ (काव्य-अमरता) -- ‘कुसमा-सलहेस’ (प्रेम-लोक-सेवा) : एक नैतिक-दार्शनिक चाप।

प्रेम-चतुष्टयक वैचारिक क्रम : श्रुवावती (आत्मबल) -- सुकन्या (विश्वास) -- श्वेता (प्रेमक विस्तार) -- सुप्रभा (प्रेमक परीक्षा-परिपक्वता) : एक दार्शनिक विकास-क्रम।

समग्र संग्रहकें जोड़’वला धागा थिक समापन-टेक—“प्रेम सत्य छै, प्रेम छै सौरभ, प्रेमक भाव चिरंतन / बिनु मकरंदक कुसुम हो तहिना, प्रेम बिना की जीवन”—जे ‘कुसमा-सलहेस’ (तृतीय)क समापन-गीतसँ ‘श्वेताक आविष्कार’ (षष्ठ)क आत्म-घोषणा धरि प्रतिध्वनित होइत अछि। कुणालक समग्र नाट्य-कर्मक घोषणापत्र थिक—‘प्रेम सर्वोच्च मानव-मूल्य थिक।’ एहि मूल्यकें लोक-परम्परा, शास्त्र-परम्परा, आ स्वतंत्र-कल्पना—तीनू माध्यमसँ, चारू नाट्य-सभ्यताक कसौटी पर खरा उतरि, सिद्ध करनाइ—यैह एहि संग्रहक अवदान थिक।

अध्याय ९

विद्यापतिक १०० पद : जुवती भए जनमए जनु कोइ

सम्पादक : कुणाल | “स्त्री-मोन” आ “कवि-मोन”क पदवार आलोचना

१. ग्रन्थ-परिचय आ अनुसन्धानक सीमा

ई पुस्तक विद्यापतिक सौ पदक सम्पादित चयन अछि। मुखपृष्ठ आ नामपृष्ठ पर पुस्तकक नाम «विद्यापतिक १०० पद : जुवती भए जनमए जनु कोइ» तथा सम्पादक कुणाल स्पष्ट अछि। प्रकाशकीय पृष्ठ पर ISBN 978-81-962063-0-7, प्रथम संस्करण २०२३ आ अंकित प्रकाशन प्रा. लि. उल्लेखित अछि (मूल पुस्तकक पृ. ३-४)। चयनक ढाँचा स्वयं आलोचनात्मक प्रस्तावनाकें जन्म दैत अछि: पदक अर्थ मात्र ओकर वाक्यसँ नहि, चयन आ क्रमसँ सेहो बनैत अछि।

अनुक्रमणिका (मूल पृ. ७-८) तथा पदक वास्तविक क्रमक मिलान पर ई अध्ययन आधारित अछि। कुल १०० पदमे पहिल ७० «स्त्री-मोन» खण्डमे तथा शेष ३० «कवि-मोन» खण्डमे अछि। पद १ मूल पृष्ठ ९ सँ आरम्भ होइत अछि; पद १०० मूल पृष्ठ १२७ पर अछि। पृष्ठ १२८ पर स्रोत-सन्दर्भ आ संकेतनामक सूची अछि।

२. सम्पादकीय भूमिका आ संग्रहक संरचना

सम्पादकीय प्रस्तावना (मूल पृ. ५-६) संग्रहक केन्द्रमे स्त्रीक अनुभव रखबाक आग्रह करैत अछि। पुस्तकक शीर्षक ‘जुवती भए जनमए जनु कोइ’ स्वयं चयनक भाव-बीज अछि: जन्म, स्त्रीत्व, अभाग आ सामाजिक शर्तक सम्बन्ध। ई शीर्षकक अर्थ समस्त विद्यापति-काव्य स्त्री-विलाप मात्र अछि, एना नहि; एकर कार्य पाठकक दृष्टिकेँ प्रथमे स्त्री-संसार पर केन्द्रित करब थिक।

«स्त्री-मोन»क भीतर विरह, परदेशी प्रिय, मान-अभिमान, सखी, समागम, गृह-निगरानी आ सामाजिक रूढ़ि अछि। तथापि लगभग उत्तरार्द्धमे शिव-गौरी सम्बन्धी लोकहास्य आ मिथकीय गृहस्थी सेहो आबैत अछि (पद ५९-६६)। ताहि कारणेँ ‘स्त्री’ एतय संकुचित रूपक नायिका नहि, देवी, गृहिणी, कन्या, विरहिणी आ सामाजिक पात्रक विविध आवाज समेटैत अछि।

«कवि-मोन» केँ भिन्न विचारक खण्ड मानि पढ़ल जा सकैत अछि, मुदा एकरामे श्रृंगार नहि समाप्त होइत अछि। पद ७९-८२मे वृन्दावन, राधा, नवयौवन, कुसुमित वन आ नृत्यक बिम्ब अछि; पद ८९-९०मे सखी-संवाद आ माधव-पुकार फेन भेटैत अछि। एकर अर्थ ई जे सम्पादकीय विभाजन सापेक्ष अछि; ओ पाठकीय उन्मुखीकरण करैत अछि, सम्पूर्ण अभेद्य वर्ग बनबैत नहि।

संग्रहमे बहुत पदक अन्तमे सम्पादकीय स्रोत-संकेत, शब्दार्थ आ पाठ-अर्थ देल गेल अछि। एहि पद्धति सँ कठिन लोकपद, पुरान रूप, ध्वनि-बोध आ कथा-प्रसंग बुझबाक सुविधा अछि। मुदा गद्यर्थक विस्तार पाठककेँ कखनो विशेष पात्रक इरादा, कथाक पृष्ठभूमि अथवा नैतिक निर्णय एक दिशामे लऽ जा सकैत अछि; समीक्षाक एकटा काम ई अन्तर उजागर करब थिक।

३. अध्ययन-पद्धति आ प्रमुख अवधारणा

क. निकट पाठ-पठन। प्रत्येक पदकेँ स्वतन्त्र संख्याक संग पढ़ि ओकर प्रमुख कथ्य, पात्रक स्वर, कथनक स्थिति, चित्रात्मक उपादान आ अन्त्य कवि-मुद्रा पहिचानल गेल अछि। पद जे कहैत अछि, आ सम्पादक जे ओकर अर्थ करैत छथि, दूनूमे भेद राखल गेल अछि।

ख. तुलनात्मक अन्तर्पाठ। एकहि चयनक भीतर बारम्बार आबि रहल विषय—परदेश-विरह (९, १८, ३४), लोकलाज (५, १९, ३५), प्राकृतिक उद्दीपन (१६, २७, ३०, ५५), शिव-विवाह (५९-६६), ऋतु-वृन्दावन (७९-८२) आ अनित्यबोध (११, ७३, ९४, १००)—क समूह बनाक देखल गेल अछि। ई तुलना संग्रहक भीतर अछि; अन्य संस्करणक शब्दशः तुलना नहि।

ग. रस-अवलोकन। श्रृंगारक संयोग-विप्रलम्भ, करुण, हास्य, भक्ति आ शान्त/वैराग्यमूलक विचारक पाठ-आधारित पहचान कएल गेल अछि। रस-श्रेणी पाठक सहायता करैत अछि, मुदा एक पदमे एकसँ अधिक भावक सहअस्तित्व स्वीकारल गेल अछि।

घ. स्त्रीवादी पाठ-दृष्टि। प्रेममे नायिकाक आत्मनिर्णय, सासु/लोकक निगरानी, विवशता, गोपनता आ प्रतिरोधकेँ दृष्टिमे राखल गेल अछि। नायिकाक पीड़ाकेँ स्वतः कविक निजी जीवनक दस्तावेज बनाओल नहि गेल अछि; कवि द्वारा रचल भूमिकात्मक आवाज मानल गेल अछि।

ड. पाठालोचनात्मक सावधानी। पुस्तकक मूल पद, सम्पादकीय शब्दार्थ आ पाठ-अर्थ—तीनू स्तरकेँ पृथक् राखि मूल्यांकन करब आवश्यक अछि। निर्णायक पाठभेद-समीक्षा लेल अन्य प्रमाणित सम्पादित संस्करण आ पाण्डुलिपिक तुलनात्मक अध्ययन चाही।

४. ‘स्त्री-मोन’ : पद १-७०क पृथक् पाठ-विश्लेषण

प्रत्येक प्रविष्टिक क्रमांक मूल पोथीक पद-संख्या अछि; उल्लेखित पृष्ठाङ्क पदक आरम्भिक मुद्रित पृष्ठकें जनबैत अछि। विवेचनमे कथ्यक संग शिल्पगत आ अर्थगत प्रश्नक परीक्षा कएल गेल अछि।

पद १ | मूल पृ. ९ | अभिमान आ अन्तरंग संवाद

विषयक निकट-पाठ। प्रेमीक वचन सुनि नायिकाक अभिमान, अपेक्षा आ आत्मसम्मान एकेसमय मुखर होइत अछि। प्रेम एतय केवल समर्पण नहि, पारस्परिक व्यवहारक जाँच सेहो थिक; कवि दाम्पत्य-सम्बन्धक टकराहटकें सजीव वाणी दैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। बोलचालक आवृत्ति आ प्रतिप्रश्न नायिकाक स्वरकें नाटकीय बनबैत अछि; पाठ-अर्थमे व्यक्त सामाजिक निर्णयकें मूल वक्ताक अनुभवसँ अलग पढ़ब आवश्यक।

पद २ | मूल पृ. ११ | संकोच, निर्णय आ प्रेमक संकट

विषयक निकट-पाठ। नायिका अपन भावनात्मक अनुभवकें सखी-संवाद द्वारा व्यक्त करैत छथि। अपन मनक निश्चय आ बाहरक लोक-संकोचक बीच तनाव अछि; प्रीति सँ उत्पन्न दुविधा काव्यक वास्तविक घटना बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। छोट-छोट पदबन्ध भावक चञ्चलता प्रकट करैत अछि। शब्दार्थक सहायता उपयोगी भएो वक्ताक संकोचकें एकार्थी नैतिक शिक्षा नहि बनाओल जाय।

पद ३ | मूल पृ. १२ | पुरुष-प्रेमक भरोसा आ विडम्बना

विषयक निकट-पाठ। पुरुषक प्रेम आ व्यवहारक अन्तर पर प्रश्न उठैत अछि। नायिका आश्वासन, प्रतीक्षा आ परित्यागक आशंकाक बीच झूलैत अछि; एहि सूक्ष्म दोलनमे प्रेमक असुरक्षा रूप पबैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। उपमा आ प्रश्नसूचक वाक्य भावक गतिकें तीव्र करैत अछि। पदक कथक-स्वर आ सम्पादकीय व्याख्याकारक स्वर अलग राखल उचित।

पद ४ | मूल पृ. १४ | जीवन, काल आ प्रतीक्षा

विषयक निकट-पाठ। क्षणभंगुर जीवनक बोध प्रेमक उत्कण्ठाकें तीक्ष्ण करैत अछि। प्रतीक्षारत नायिका लेल समय सामान्य कालगणना नहि, शारीरिक आ मानसिक कष्टक अनुभव थिक।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। पंक्तिक क्रममे समयक दाब बढ़ैत अछि; 'मधुकर' सरीख प्राकृतिक संकेतक पढ़ाइमे ऋतु आ मनोदशाक सम्यक् सम्बन्ध देखबाक चाही।

पद ५ | मूल पृ. १६ | अनुरागक मूल्य आ लोकलाज

विषयक निकट-पाठ। पदमे प्रेमक आकर्षण आ समाजक मान्यताक बीच दूरी बनैत अछि। पात्र अपन प्रेमक पक्ष लैत छथि, मुदा लोकक आलोचना आ व्यवहारिक परिणतिक बोध सेहो मौजूद अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। सम्बोधन आ लय सखीक गोपनीय वार्ताक आभास करबैत अछि। सम्पादकीय पाठ-अर्थक नैतिक टिप्पणीकें मूल पदक सर्वमान्य आशय नहि मानल जाय।

पद ६ | मूल पृ. १७ | पुरुषक अनुभूति आ विरह

विषयक निकट-पाठ। अनुभवक दावाक संग स्नेहक अभावक पीड़ा व्यक्त अछि। प्रेमक विश्वसनीयताक मापदण्ड शब्द नहि, विरह-सहन आ पुनर्मिलनक व्यग्रता बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। विरहक तीव्रतामे शरीर आ मनक समानान्तर चित्र अछि; संक्षिप्त विन्यास पदक गेयताकें बल दैत अछि।

पद ७ | मूल पृ. १८ | जुवती-जीवनक त्रासदी

विषयक निकट-पाठ। 'जनम होअए जनु जुवती' प्रकारक उद्धोष स्त्री-जीवनक सामाजिक असमानता दिस ध्यान दियबैत अछि। ई एकल पात्रक अवसाद मात्र नहि; प्रतीक्षा, नियति आ पराधीनताक सामूहिक अनुभूतिक संकेत मानल जा सकैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। उच्चारणक अतिशयोक्ति करुण-रसक उपकरण अछि; एकरा नारी-विरोधी शाब्दिक सिद्धान्त मानि पढ़नाइ असावधान पाठ होएत।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। एहि पदक नारी-जन्म सम्बन्धी प्रश्नकें पद ३५क गृह-नियन्त्रण आ पद ५७क प्रतिरोधक संग पढ़ला पर स्त्री-वेदनाक आन्तरिक विविधता खुलैत अछि।

पद ८ | मूल पृ. १९ | परनिन्दा आ प्रेमक रक्षा

विषयक निकट-पाठ। दुरजनक वचन प्रेमक निजी संसारमे बाहरी हस्तक्षेपक रूपमे अबैत अछि। नायिका अफवाहसँ उपजल संशय, निष्ठा आ लज्जाक एक जटिल मानसिक दृश्य बनबैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। 'दुरजन' सामाजिक दृष्टिक प्रतिरूप अछि। पदक मूल कथन आ पाठ-अर्थमे बुझाओल घटनाक्रमक बीच अन्तरक जाँच उचित।

पद ९ | मूल पृ. २० | विदेश गेल प्रिय आ प्रतीक्षा

विषयक निकट-पाठ। प्रियक विदेश-गमन नायिकाक समयबोधकेँ बदलि दैत अछि। राति, निद्रा आ विरहक विस्तारित अन्तराल द्वारा अनुपस्थितिक बोध मूर्त बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘विदेस’ एक भौगोलिक ठामसँ बढ़ि भावनात्मक दूरीक प्रतीक अछि; अन्धकार आ एकान्त करुण संवेदनाकेँ घनत्व दैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद १८ आ ३४क परदेश-विरह संग तुलना करलासँ ‘देश’क भूगोल भावक दूरीमे केना बदलैत अछि, बुझब सहज होइत अछि।

पद १० | मूल पृ. २१ | मालिनि आ मधुकरक रूपक

विषयक निकट-पाठ। फूल, मधुकर आ मकरन्दक सहायतासँ आकर्षणक संकेत बनैत अछि। प्रकृतिकेँ कथोपकथनक माध्यम बनाक कवि मानवीय संकोच आ कामना दूनू व्यक्त करैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। रूपकक अर्थ स्थिर नहि: मधुकर प्रिय सेहो भऽ सकैत अछि, चञ्चलता सेहो। संपादकीय अर्थक संग वैकल्पिक व्यञ्जना खोलब आवश्यक।

पद ११ | मूल पृ. २२ | रूपक क्षणभंगुरता

विषयक निकट-पाठ। ‘जीवन-रूपी रतन’क भाव जीवनक अल्पता आ प्रेमक दुर्लभ अवसरकेँ जोड़ैत अछि। नायिका सम्बन्धक सार्थकताकेँ अस्थिर देह आ नश्वर समयक पृष्ठभूमिमे देखैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘रतन’ आ ‘चारि दिन’ मूल्य आ कालक टकराहट रचैत अछि; एहि विरोधमे जीवनदर्शन आ श्रृंगार एकत्र होइत अछि।

पद १२ | मूल पृ. २३ | सरोवर-घाट आ गोपनीय भेंट

विषयक निकट-पाठ। सरोवरक घाट, निकटता आ आवागमनक प्राकृतिक स्थल प्रेमक सार्वजनिक-निजी सीमा बनैत अछि। नायिकाक व्यवहारमे सतर्कता आ साहसक एकेसमय उपस्थिति देखाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। स्थल-बिम्ब केवल सजावट नहि, कथाक सम्भावित मंच थिक। प्रवाहमान पद-लय गुप्त भेंटक व्यग्रताकेँ पुष्ट करैत अछि।

पद १३ | मूल पृ. २४ | एकसरि नायिका आ विरह

विषयक निकट-पाठ। प्रियक अनुपस्थितिमे नायिकाक एकसरिपन जीवनक वस्तुगत सूनापन बनैत अछि। परिजन आ अन्तरंग सहचारिणीक उपस्थिति भएो प्रेमक अभाव भरल नहि जा सकैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। एकाकीपन आ विरहक व्यञ्जना लम्बा वर्णनक बदला वचनक तीव्रतासँ व्यक्त अछि।

पद १४ | मूल पृ. २५ | रूप, यौवन आ जीवनक सार

विषयक निकट-पाठ। रूप आ यौवनक अस्थिरताक संग प्रेम-सुखक चर्चा अछि। पद शरीरक सौन्दर्यकें सुखक साधन मानैत अछि, मुदा नश्वरताक बोध ओकर गौरव पर प्रश्न उठबैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘जीवन-सार’ सरीख पदावलि कामना आ दार्शनिक विचारकें जोड़ैत अछि; शृंगार-वैराग्यक सरल द्वैत एतय पर्याप्त नहि।

पद १५ | मूल पृ. २७ | सखी-संवादक गुप्त भाषा

विषयक निकट-पाठ। मुखरा/सखी-संग कथोपकथनमे प्रेमक गोपन व्यथा विस्तार पबैत अछि। सखी श्रोता, आलोचक आ सम्भावित सहायक तीनू भूमिकामे उभरैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। सम्बोधनक आवृत्ति नाट्यात्मकता उत्पन्न करैत अछि; पात्रक कथनक ‘हम’ आ कविक अन्तिम हस्ताक्षर-स्वर अलग स्तरक अछि।

पद १६ | मूल पृ. २८ | प्रकृति-विहीन देशक कल्पना

विषयक निकट-पाठ। जहाँ पिक आ मधुकर नहि, ओहन देशक चित्र प्रेमक रसमय वातावरणक अभाव सूचित करैत अछि। प्राकृतिक ध्वनि मनक आह्लाद आ विरहक प्रतिपक्ष दुनू थिक।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। पिक-मधुकरक युग्म परम्परागत शृंगार-संकेत अछि; एहि पाठमे ओकर निषेध अर्थ-निर्माणक प्रमुख विधि बनैत अछि।

पद १७ | मूल पृ. २९ | धैर्य, विरह आ मनक अस्थिरता

विषयक निकट-पाठ। मात्र धैर्यक उपदेशसँ विरहक घाव नहि भरैत अछि। पदमे मनक चञ्चलता, समयक भार आ प्रेमक आत्मनिष्ठ आग्रह एकठाम देखाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। नकारात्मक वाक्य आ प्रेरणासूचक क्रिया भावात्मक तनाव रचैत अछि; सरल ‘प्रेम में धैर्य’ व्याख्यासँ पदक द्वन्द्व दबि जाइत अछि।

पद १८ | मूल पृ. ३० | परदेशी पिआक नाम पुकार

विषयक निकट-पाठ। परदेश बसल प्रियकेँ स्मरण करैत नायिका जीवनक प्रत्येक क्रियामे अभाव अनुभव करैत छथि। बाह्य ऋतु आ भीतरी विरह एक-दोसरकेँ बढ़बैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। आह्वानात्मक शैलीक कारण ई पद गान-परम्परामे उपयुक्त; रूपक आ आत्मसम्बोधनक अन्तर पाठमे चिन्हल जाय।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ९ आ ५०क विरह-राति सङ्गक संवादमे नायिकाक समय-अनुभव एक लगातार रूपक-प्रवाह बनैत अछि।

पद १९ | मूल पृ. ३२ | कुल-गौरव बनाम अनुराग

विषयक निकट-पाठ। कुल, शील आ सामाजिक प्रतिष्ठाक उल्लेख प्रेम-सम्बन्ध पर बाह्य नियन्त्रण सूचित करैत अछि। नायिका इच्छा आ लोकाचारक असंगतिकेँ चुनौती दैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। मूल्यसूचक शब्दक श्रृंखला पाठक सामने सामाजिक संरचनाकेँ उपस्थित करैत अछि; पात्रक प्रतिरोध संकुचित नैतिक शिक्षा नहि।

पद २० | मूल पृ. ३४ | निर्जन भेटक लघु नाटक

विषयक निकट-पाठ। एकान्तमे प्रियसँ भेंट, आकस्मिक संकोच आ शारीरिक समीपता घनिष्ठ मनोविज्ञानक दृश्य रचैत अछि। प्रेमकेँ स्थिर भाव नहि, चाल-ढाल आ क्षणिक प्रतिक्रियाक प्रक्रिया रूपमे देखाओल गेल अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। गतिसूचक क्रिया आ संवाद-संकेत पदकेँ रंगमंचीय बनबैत अछि; पाठ-अर्थमे देल घटना-विस्तार मूल संकेतसँ आगाँ जा सकैत अछि।

पद २१ | मूल पृ. ३५ | चन्द्र-बिम्ब आ प्रेमक प्रतिज्ञा

विषयक निकट-पाठ। गगनक चन्द्रमा, प्रकाश आ अन्धकारक संकेत प्रेमक आन्तरिक उजासकेँ व्यापक वातावरणसँ जोड़ैत अछि। प्रेमी-प्रेमिकाक संवाद जीवनक सार्थकता पर विमर्श बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘कलानिधि’क काव्यरूढ़ि निज अर्थक संग नब सम्बन्ध पबैत अछि; पदमे आलंकारिकता आ लोक-वचन एकत्र अछि।

पद २२ | मूल पृ. ३६ | मधुर वचन, कठोर मानस

विषयक निकट-पाठ। बचनकें मधु आ मनकें कुलिश कहबाक विरोधाभास प्रेमक विश्वासघातक प्रमुख आकृति थिक। नायिकाक अनुभवमे मोहक भाषा आ असंवेदनशील व्यवहारक दूरी उघाइ होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। मधु-कुलिश विरोधक तीव्रता अल्प शब्दमे चरित्रांकन करैत अछि; ई पद वाचिक अलंकारक स्पष्ट उदाहरण।

पद २३ | मूल पृ. ३८ | अँगना, दृष्टि आ निकटता

विषयक निकट-पाठ। आँगनक घरेलू स्थल प्रेमक देखादेखीक रंगमंच बनि उठैत अछि। आँखिक चेष्टा, हाव-भाव आ सकुचाहट संवादक पूर्ववर्ती भाषा बनेल अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। स्थानीय घरेलू बिम्बक कारण पदक मैथिलीपन उभरैत अछि; ‘अँगना’ सामाजिक दृष्टि आ निजी चाह दुनूक भेट-स्थल थिक।

पद २४ | मूल पृ. ३९ | जनम-सफलता आ अनुराग

विषयक निकट-पाठ। मानवीय जन्मक सफलता प्रेमक अनुभवसँ जोड़ल गेल अछि। अनुराग प्रेमीकें अपूर्णतासँ पूर्णता दिस बढ़यबाक शक्ति बनैत अछि, किन्तु असफल आशाक आशंका सेहो संग चलैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। संक्षिप्त कथनमे महत्त्वपूर्ण अस्तित्व-दृष्टि निहित अछि; पाठक प्रेमक वैयक्तिक आ सार्वजनीन अर्थ अलग करथि।

पद २५ | मूल पृ. ४० | ‘अहे सखि’क आर्तनाद

विषयक निकट-पाठ। सखीकें बारम्बार पुकारि नायिका अपन पीड़ा खोलैत छथि। प्रेमक प्रतीक्षा, शरीरक व्याकुलता आ समयक असह्यता ओकर आत्मकथनकें तीक्ष्ण करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। आह्वान पदक ध्वन्यात्मक केन्द्र अछि; पदक गेयता केवल छन्दसँ नहि, सम्बोधनक पुनरावृत्तिसँ सेहो बनैत अछि।

पद २६ | मूल पृ. ४१ | प्रिय-स्मृति आ आत्मविस्मृति

विषयक निकट-पाठ। प्रियक अभावमे मन स्थिर नहि रहैत अछि। अपन देह, घर आ दैनिक कार्य अर्थहीन प्रतीत होइछ; स्मृति वर्तमानक ऊपर छा जाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। उपस्थित-अनुपस्थितक द्वन्द्व ध्वन्यात्मक पुनरुक्ति द्वारा मुखर होइत अछि; ‘कनक’ सरीख सौन्दर्य संकेतक प्रसंगानुकूल अर्थ आवश्यक।

पद २७ | मूल पृ. ४२ | तपित मन आ जीवनक ताप

विषयक निकट-पाठ। तपनक बिम्ब भावनात्मक जलनकें शरीरक तापमे परिणत करैत अछि। नायिकाक विकलता ऋतुक अनुभूतिसँ एकाकार होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ऋतु, ताप आ कामनाकें जोड़ब विद्यापतिक शृंगारिक लाक्षणिकताक एक रूप अछि; पदक तापकें मात्र प्रकृतिक वर्णन माननाइ अधूरा।

पद २८ | मूल पृ. ४३ | अनुराग आ आत्मसमर्पण

विषयक निकट-पाठ। नायिकाक अभिलाषा आ सामाजिक नियन्त्रण आपसमे टकराइत अछि। प्रेमक जोखिम उठबैतहुँ पात्र अपन भावनाकें अस्वीकार नहि करैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रत्यक्ष सखी-संवाद आ अन्तिम कवि-वचन पदक दू स्वर बनबैत अछि; अनुकूल अर्थक तर्ज पर पहिल स्वरकें दबाओल नहि जाय।

पद २९ | मूल पृ. ४४ | ‘ए हरि’क पुनःपुकार

विषयक निकट-पाठ। प्रिय/हरिक पुनःपुकार धैर्यक टूटन देखबैत अछि। विरहमे मनक लाग-बुझ आ स्मरण पुनरावृत्तिक कारण पीड़ा बारम्बार आरम्भ होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। एके सम्बोधनक पुनरुक्ति प्रार्थना आ प्रणयक सीमा धुँधला करैत अछि; भक्तिपरक आ शृंगारिक अर्थ दूनू सम्भावना राखैत अछि।

पद ३० | मूल पृ. ४५ | बरखा आ विरहक विरोध

विषयक निकट-पाठ। वर्षाक आगमन बाह्य संसारमे नवीनता आनैत अछि, मुदा प्रियसँ अलग नायिकाक दुःख बढ़ैत अछि। बरखा आनन्दक ऋतु होइतहुँ विरहिणीक लेल प्रतिकूल समय बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ऋतु-विपर्यय पदक केन्द्रीय कलात्मक युक्ति अछि; ध्वनि आ झरनाक संकेत गेयताकें पुष्ट करैत अछि।

पद ३१ | मूल पृ. ४६ | सखीकें दुःखक निवेदन

विषयक निकट-पाठ। नायिका अपन पीड़ा प्रियक सीधा सामने नहि, सखीक समक्ष रखैत छथि। एहि मध्यस्थतासँ प्रेम-संवादक स्त्री-समुदायगत संरचना स्पष्ट होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘सखि हे’क सम्बोधनक लय भाव-वहन करैत अछि; उद्गार-विरामक संयोजन करुण व्यञ्जना रचैत अछि।

पद ३२ | मूल पृ. ४७ | ‘माधव हमर’ आ विरहावस्था

विषयक निकट-पाठ। माधवक स्मरण नायिकाक दिनचर्याकेँ पीड़ा-प्रधान बनबैत अछि। मनक चित्तवृत्ति आ अश्रुक वर्णन सँ प्रेमक अनुपस्थिति एक स्थायी मानस-अवस्था बुझाईत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘माधव’क नाम लौकिक प्रेमी आ दैवी नायक दूनूक सम्भावना रखैत अछि; प्रसंगक कथक-स्वर बुझि अर्थ करब उचित।

पद ३३ | मूल पृ. ४८ | पत्र, समाचार आ आशा

विषयक निकट-पाठ। प्रियक समाचारक चाह नायिकाक उत्कण्ठाकेँ भाषित करैत अछि। पत्र/सन्देशक कल्पना दूरीकेँ कम करबाक जतन थिक, मुदा निश्चयक अभाव छटपटी बढ़बैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। सन्देश-मोटिफक प्रयोग गीतिकाव्यकेँ कथात्मक गति दैत अछि; पंक्ति-समाप्तिक ध्वनि अपेक्षाक लम्बाई सूचित करैत अछि।

पद ३४ | मूल पृ. ४९ | दूरदेश गेल प्रियक दैन्य

विषयक निकट-पाठ। ‘मोर पिअतम सखि गेल दूर देस’क भावमे घरक रिक्तता, रातिक विस्तार आ प्रेमक निराशा प्रकट अछि। बाहरी लोक चलैत रहितो नायिकाक आन्तरिक समय थमि जाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। विस्तृत पदरचनामे अनेक दृश्य एक प्रेमावस्थाक क्रम बनबैत अछि; सम्पादकीय व्याख्या एहि क्रमकेँ गद्य कथा बनबैत समय मूल पदक खुलापन सीमित करि सकैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ९क संक्षिप्त विरहक मुकाबिल ई पद अधिक विस्तृत घटना-क्रमसँ अभावकेँ जीवन-परिस्थितिमे रूपान्तरित करैत अछि।

पद ३५ | मूल पृ. ५१ | सासु, पहरा आ स्त्रीक गोपनता

विषयक निकट-पाठ। जरठ सासुक उपस्थिति प्रेमिका पर पारिवारिक नियन्त्रणक रूपमे उभरैत अछि। गोपनीय मिलनक सम्भावना घरक निगरानीसँ जूझैत अछि, जे श्रृंगारिक गीतमे सामाजिक यथार्थकेँ प्रवेश करबैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। घरक पात्र-संरचना नाटकीय तनाव रचैत अछि; स्त्रीक इच्छाकेँ केवल छिपबाक चालाकी नहि, नियमनक प्रतिक्रिया मानि पढ़ल जाय।

पद ३६ | मूल पृ. ५२ | गुण-गणना आ प्रियक स्मरण

विषयक निकट-पाठ। प्रियक रूप-गुणक स्मरण विरहक प्रतिकार करबाक प्रयास थिक। गुणक संख्या अथवा अतिशयोक्तिपूर्ण गणना भावक अपारता संकेत करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। गणनात्मक विधान अलंकारिक विस्तार बनैत अछि; समीक्षामे अंकक शब्दार्थ आ भावार्थकेँ अलग रखनाइ आवश्यक।

पद ३७ | मूल पृ. ५४ | दिशा आ करुण प्रतीक्षा

विषयक निकट-पाठ। उत्तर, दक्षिण, पवन आ पथक संकेतद्वारा प्रतीक्षा भौगोलिक विस्तार पबैत अछि। प्रियक दिशामे दृष्टि धए रहबाक चेष्टा मनक अस्थिरताकेँ स्पष्ट करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। दिशा-संकेत भौतिक अवस्थाकेँ भावनात्मक नक्सामे बदलैत अछि; श्रृंगार-करुणक संगम विशेष।

पद ३८ | मूल पृ. ५५ | माधवक संगी अपन परछाई

विषयक निकट-पाठ। नायिका अपन दुःखक प्रतिध्वनि देह, दृष्टि आ स्मृतिमे अनुभव करैत छथि। माधवक अनुपस्थिति यथार्थ आ कल्पनाक बीचक दूरी घटा दैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। संवादक अन्तरंगता आ स्मृतिक आवर्तनक कारण पद आत्मपरक गीत बनैत अछि; एकरा बाह्य कथाक मात्र अंश नहि समझल जाय।

पद ३९ | मूल पृ. ५६ | प्रेम-गुणक अनुपमत्व

विषयक निकट-पाठ। प्रेमक गुणक बखान नायिकाक मनमे प्रियक विशिष्ट स्थान देखबैत अछि। सामान्य तर्कक सीमा पर प्रेमक अनुभवक आग्रह अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। अतिशयोक्ति प्रेमक स्वतन्त्र मूल्य निर्धारण करैत अछि; निष्कर्षक संग अनुभवजन्य संशयक उपस्थिति सेहो जाँचनीय।

पद ४० | मूल पृ. ५७ | पिअक आगमनक पूर्वाभास

विषयक निकट-पाठ। प्रियक आगमनक सम्भावना नायिकाक चेष्टा, घर-तैयारी आ मनक चालमे परिवर्तन आनैत अछि। आशाक एक झलक देह-भाषाकेँ ऊर्जा दैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। क्रियाक्रमक अनुक्रम पदकेँ सूक्ष्म दृश्यकाव्य बनबैत अछि; अनुपस्थिति आ सम्भावित मिलनक विपरीत संवेदना संग-संग चलैत अछि।

पद ४१ | मूल पृ. ५८ | मिलन-दृश्य आ नयन-सम्वाद

विषयक निकट-पाठ। प्रिय आ प्रेयसीक चेष्टा, दृष्टि आ संकेतक माध्यमसँ प्रणय व्यक्त होइत अछि। लज्जा आ आकर्षणक द्वन्द्व स्थिर भावसँ अधिक नाटकीय होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। विविध शारीरिक विवरणक विन्यास ‘देखाएब’क काव्य-योजना थिक; पात्रक सक्रिय सहमतिक बोध उपेक्षित नहि करब।

पद ४२ | मूल पृ. ५९ | प्रथम समागमक अनभिज्ञता

विषयक निकट-पाठ। प्रथम मिलनमे संकोच, कौतूहल आ आशंकाक मिली-जुली अवस्था अछि। अनुभवक कमीकेँ कवि नायिकाक भावनात्मक जटिलताक रूपमे पढ़ैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। मिलनक वर्णनमे संकेतात्मकता महत्त्वपूर्ण; सभ विवरणकेँ प्रत्यक्ष घटना मानि विस्तार करब आवश्यक नहि।

पद ४३ | मूल पृ. ६० | सपनामे प्रिय-दर्शन

विषयक निकट-पाठ। स्वप्नक आगमन विरहक क्षणिक भरपाइ करैत अछि। जागरणक बादक रिक्तता स्वप्नक सुखकेँ आरो पीड़ामय बना दैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘सपना’ यथार्थक प्रतिलिपि नहि, इच्छाक संरचना थिक; काल-परिवर्तन एहि पदक महत्त्वपूर्ण शिल्प।

पद ४४ | मूल पृ. ६१ | घर, याद आ सखीक सहारा

विषयक निकट-पाठ। घरक दैनन्दिन दृश्य नायिकाक प्रेम-व्यथाक आश्रय बनैत अछि। सखीसँ कहल बात आत्मबोधक रूप लैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। घरेलू सम्बोधनक सरलता पदकेँ लोकगीत-सदृश बनबैत अछि; सम्पादकक हिन्दी-मिश्रित गद्यर्थक तुलना मूल मैथिली-मुहावरासँ करब जरूरी।

पद ४५ | मूल पृ. ६२ | वन, नगर आ आवागमन

विषयक निकट-पाठ। कुञ्ज अथवा नगरक स्थानक चर्चा भेंटक सम्भावना आ विछोहक डरकेँ द्योतित करैत अछि। प्रेमक संसार निजी रहितहुँ मार्ग, यात्रा आ समयसँ आकार पबैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। स्थान-परिवर्तन नायिकाक मनक परिवर्तनक प्रतीक बनैत अछि; पथक रूपक बहुस्तरीय पढ़ब योग्य।

पद ४६ | मूल पृ. ६३ | प्रेमक बाधा आ आत्मसंयम

विषयक निकट-पाठ। विरहमे प्रत्यक्ष बाधा नायिकाकेँ आत्मसम्भाल आ धैर्यक कठिन अभ्यास दिस दियबैत अछि। प्रियक स्मृतिसँ बचबाक प्रयास उलटा स्मृतियेकेँ तीव्र करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। निषेधात्मक वाक्यक आवृत्ति विरोधाभास रचैत अछि; ई निराशाक शिथिल बयान नहि, सक्रिय मनःसंघर्ष थिक।

पद ४७ | मूल पृ. ६४ | पावक-शिखा आ दग्ध हृदय

विषयक निकट-पाठ। अग्नि-शिखाक बिम्ब प्रेमजन्य ज्वलनक तीक्ष्णता सामने अनैत अछि। नायिकाक देह-मनकेँ एकरे तापमे चित्रित करुण आ कामना दूनूकेँ सँग करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। अग्नि-बिम्बक प्रत्यक्ष आ व्यञ्जित अर्थ भिन्न; लोक-उक्ति आ काव्य-रूपक बीच आवाजाही पदक सौन्दर्य अछि।

पद ४८ | मूल पृ. ६५ | अतिशय विरह आ जीवन-संशय

विषयक निकट-पाठ। प्रियक वियोगमे जीवन रखबाक इच्छा क्षीण होइत देखाइत अछि। प्राण, स्मृति आ मिलनक असम्भवता पाठकेँ करुण चरम पर लऽ जाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। गहन अतिशयोक्ति भावक नाट्यरूप थिक; एकरा कथकक वास्तविक क्रियाक योजनाक रूपमे नहि पढ़ब चाही।

पद ४९ | मूल पृ. ६६ | माधवसँ प्रत्यक्ष शिकायत

विषयक निकट-पाठ। प्रेमीकेँ सीधा सम्बोधित कऽ नायिका अपने दुःखक उत्तरदायित्व सेहो प्रिय पर रखैत छथि। आक्रोशक भीतर अनुराग बनल रहैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रत्यक्ष सम्बोधन ‘प्रिय’केँ उपस्थित करबाक वाचिक उपाय अछि; प्रश्नक क्रमसँ शिकायत आ स्नेहक द्वैत स्पष्ट।

पद ५० | मूल पृ. ६७ | जीवन-रातिक विस्तार

विषयक निकट-पाठ। राति भरि जीवित रहलोक पीड़ा, प्रातःक प्रतीक्षा आ मनक अस्थिरता एहि पदक केन्द्रीय काल-अनुभव अछि। रातिक विस्तार विरहक मात्रात्मक नहि, गुणात्मक अनुभूति थिक।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। समय आ अन्धकारक साम्य गीतक भाव-सूत्र अछि; रचनाक ध्वनि-आवृत्ति धैर्यहीनताकेँ बढ़बैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ९, १८ आ ३४ संग एहि पदक अध्ययन ‘एक राति’ आ ‘एक जीवन’क अनुभवगत दूरीकेँ उघाड़ करैत अछि।

पद ५१ | मूल पृ. ६८ | बसन्तक आगमन आ नवजीवन

विषयक निकट-पाठ। बसन्तक रंग, पवन आ नगर-प्रकृतिक नूतनता प्रेमक पुनर्जागरणक वातावरण बनबैत अछि। बाहरी उल्लाससँ आन्तरिक कामनाक सम्बन्ध एहि पदक आधार अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। वसन्त-वर्णन एकटा ऋतु-रिपोर्ट नहि, उद्दीपन-विभावक काव्य-विन्यास अछि; प्राकृतिक वस्तुक गतिशील उल्लेख पदक संगीतात्मकता बढ़बैत अछि।

पद ५२ | मूल पृ. ६९ | अनुराग, उपालम्भ आ वचन

विषयक निकट-पाठ। प्रियक हृदय आ व्यवहारक अन्तर नायिकाक प्रश्न बनैत अछि। निष्कपट प्रेमक अपेक्षा मनक दुख, आशा आ विवशताकेँ मुखर करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। लाक्षणिक वर्णनक संग आत्मवचन अछि; शब्दार्थ पाठमे देल अनेक पर्यायक बीच भावानुकूल अर्थ चुनब पाठालोचनक काम।

पद ५३ | मूल पृ. ७० | नजर, उपेक्षा आ आत्मसम्मान

विषयक निकट-पाठ। प्रियक रूप आ व्यवहारक तीक्ष्ण निरीक्षण नायिकाक कष्ट उजागर करैत अछि। उपेक्षासँ उत्पन्न आत्मसम्मान प्रेमकेँ सरल समर्पण होएबासँ रोकैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रतिप्रश्न, आदेश आ कथनक आवृत्ति आन्तरिक बहसक रूप दैत अछि; ‘अनुरोध’ आ ‘धिक्कार’क सीमा चञ्चल अछि।

पद ५४ | मूल पृ. ७२ | माधव, नयन आ अधीरता

विषयक निकट-पाठ। माधवक अनुपस्थितिमे दृष्टिक प्रतीक्षा शारीरिक थकान बनि जाइत अछि। नायिका अपन मनकेँ प्रियसँ हटेबाक असम्भव प्रयास करैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। नयन आ हृदयक संगत पदक दृश्य-बिम्ब रचैत अछि; सखी-संवाद आ कवि-मुद्राक अलग भूमिकापर ध्यान दी।

पद ५५ | मूल पृ. ७३ | दक्षिण पवन आ अनुकूल ऋतु

विषयक निकट-पाठ। दक्षिण पवन, फूल आ ऋतु-सुखक उल्लेख नायिकाक मनमे उलटा वेदना जगा दैत अछि। प्रकृतिक अनुकूलता प्रियक अनुपस्थितिमे प्रतिकूल भाव बनि जाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। पवनक दिशा महत्त्वपूर्ण उद्दीपन-विभाव; बसन्त आ विरहक विरोध पदक भावप्रवण रचना करैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद १६क पिक-मधुकर आ पद ३०क वर्षा-बिम्ब संग तुलनामे प्रकृति कथकक स्थितिअनुसार सुख अथवा दुःखक शक्ति बनैत अछि।

पद ५६ | मूल पृ. ७४ | 'सरसिज बिनु सर'क दृष्टान्त

विषयक निकट-पाठ। कमलविहीन सरोवर आ प्रेमविहीन जीवनक तुलना सम्बन्धक आन्तरिक अपरिहार्यता व्यक्त करैत अछि। कर्तव्य, सहारा आ स्नेहक बन्धन एक-दोसरसँ सम्बद्ध होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। क्रमिक दृष्टान्त अलंकारक माध्यमे अमूर्त शून्यताकें ठोस बनाओल गेल अछि; एकर समस्त तुलना एकहि शाब्दिक अर्थमे सीमित नहि।

पद ५७ | मूल पृ. ७६ | घर-संस्कारक प्रतिरोध

विषयक निकट-पाठ। नायिका घर छोड़ि पराए आँगन नहि रहबाक संकल्पक माध्यमसँ अपन अस्मिता घोषित करैत छथि। वैवाहिक/पारिवारिक दबाबक बीच हुनकर प्रतिकारक भाषा विशेष रूपसँ ध्यान योग्य अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। 'हम नहि'क आवृत्ति निषेधकें स्वायत्तताक काव्य-रूप बनबैत अछि; पात्रक स्पष्ट स्वरकें सम्पादकीय मर्यादा-उपदेशक भीतर विलीन नहि करब।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ३५क गृह-निगरानीक बरक्स एतय नायिकाक निषेधात्मक घोषणा भाषिक रूपसँ अधिक प्रत्यक्ष अछि।

पद ५८ | मूल पृ. ७८ | अग्नि आ विवेकक परीक्षा

विषयक निकट-पाठ। अग्निक उल्लेख इच्छा, भय आ कष्टक संवेदनात्मक तीव्रता रचैत अछि। नायिका सामाजिक जोखिम बुझैत छथि, तथापि अनुरागक आकर्षणक संग निर्णायक टकराहट जारी रहैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रतिकूल रूपक पाठमे आत्ममूल्यांकनक साधन; कठोर उद्गारक भाषिक अतिशयोक्तिकें शाब्दिक आचरणक विवरण माननाइ ठीक नहि।

पद ५९ | मूल पृ. ८० | गौरीक आँगना आ शिव-विवाहक हास्य

विषयक निकट-पाठ। गौरीक आँगन, वर-परिवेश आ परिवारक प्रतिक्रिया द्वारा शिव-संसार लोक-हास्यक रंग ग्रहण करैत अछि। अध्यात्म एतय घरेलू प्रसंगमे अवतरित होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। शिव-गौरीक मिथकीय पात्र, हँसी आ घरक परिचित भाषा एक संग आओत अछि; शृंगार खण्डमे एकर उपस्थिति वर्गीकरणक जटिलता खोलैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ६०-६६ पढ़िते ई बुझाईत अछि जे लोकहास्य शिव-गौरी प्रसंगकें स्त्री-अनुभवक क्षेत्रमे स्थापित करैत अछि।

पद ६० | मूल पृ. ८१ | भोगिनिआक दुनियाँ आ विवाह-विडम्बना

विषयक निकट-पाठ। मातृसम्बोधन आ विवाहक परिस्थितिकें देखबैत पद लोक-गृहस्थीक सुख-दुःखक विडम्बना सामने अनैत अछि। ऊँच पौराणिक कथ्य स्त्रीक व्यवहारिक चिन्तामे बदलि जाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। बोलचालक वाक्य, व्यंग्य आ अन्तरंग सम्बोधन लोकनाट्यक आभास उत्पन्न करैत अछि; केवल भक्ति-पद कहनाइ अपर्याप्त।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ५९क आँगन आ पद ६२क विवाह-विडम्बना एहि लोक-परिवेशकें लगातार विकसित करैत अछि।

पद ६१ | मूल पृ. ८२ | माए-सँ निवेदन आ सामाजिक असहजता

विषयक निकट-पाठ। मातृक समक्ष विवाह, परिवार आ प्रिय-संबन्धक असहजता व्यक्त होइत अछि। सहारा ताकैत स्त्रीक आवाज आ सामाजिक रस्मक दबाबक बीच तनाव अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। कथक-स्वरक बदलाव देखबाक चाही: लोक-कथा, संवाद आ कवि-छाप अलग स्थान रखैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ५७क निजी प्रतिरोध आ पद ६२क सामाजिक व्यंग्यक मध्य ई मातृसम्बोधनक स्वरतत्त्व जोड़ैत अछि।

पद ६२ | मूल पृ. ८४ | विवाहक अनुचित मेल पर व्यंग्य

विषयक निकट-पाठ। उम्र, रूप, परिवार आ सामंजस्यक प्रश्न पदमे हँसीक माध्यमसँ उठैत अछि। शिव-पार्वतीक प्रसंग सामाजिक विवाह-व्यवस्थाक आलोचना सेहो बनि सकैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। लोक-उक्ति आ व्यंग्यार्थक आधार पर पात्रक रोष पढ़ल जाय; पौराणिक कथाकें सम्पूर्ण ऐतिहासिक घटना रूपमे प्रस्तुत नहि करब।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ५९, ६० आ ६३ एकहि धार्मिक पात्रसमूहक विविध घरेलू पक्ष देखबैत अछि; ताहि कारणेँ हास्य-रस भक्ति-विरोधी नहि।

पद ६३ | मूल पृ. ८५ | 'बेरी बेरी अरे सिव'क पुकार

विषयक निकट-पाठ। शिवकेँ सम्बोधन, रूप-वर्णन आ आरोप-प्रत्यारोप द्वारा काव्यमे निकटता आ हँसी उभरैत अछि। भक्ति आ लोकजीवन एतय औपचारिक दूरी नहि रखैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। देव-सम्बोधनक पुनरावृत्ति बोलचालक प्रार्थना-गीतसँ मिलैत अछि; देवक मानवीकरण प्रमुख शिल्प अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ६६क बरद-संबन्धी विनोदक संग मिलि ई पद देवक मानवीकरणक लोककाव्य-परम्परा उघारैत अछि।

पद ६४ | मूल पृ. ८६ | राजाश्रय आ काव्यकर्ताक चेतना

विषयक निकट-पाठ। पदक अन्तमे राजाश्रयी वातावरणक संकेत कविक सामाजिक अवस्थाक साक्ष्य मानल जा सकैत अछि। कवि अपन रचनाकेँ मानवीय सम्बन्ध, सौन्दर्य आ आश्रयदाता-संसारक बीच स्थापित करैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। राजा रूपनारायण आदि नामक उपस्थितिक पाठगत जाँच आवश्यक; कवि-मुद्रा अथवा प्रशस्तिकेँ कविताक पूरा भाव-विषय नहि मानल जाय।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ८६क स्वप्न-राजसन्दर्भसँ मिलान करैत कवि-प्रशस्ति आ प्रेमगीतक बीचक सांस्कृतिक सेतु पर विचार कएल जा सकैत अछि।

पद ६५ | मूल पृ. ८७ | प्रेमक गुणक अतुलनीयता

विषयक निकट-पाठ। प्रेमक प्रभाव सामान्य बुद्धि आ लाभ-हानिक गणनाकेँ पार करैत अछि। प्रेमक गुण गाबैत पद ओकर अनिश्चित, दुःसाध्य आ गहन स्वरूपकेँ स्वीकार करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। सारगर्भित कथन नीति-कविताक समीप अछि; सूक्ति आ व्यक्तिगत भावनाकेँ जोड़बाक विधि ध्यान योग्य।

पद ६६ | मूल पृ. ८८ | शिवक बरद आ हास्य-रस

विषयक निकट-पाठ। बरद, सवारि, पति-पात्र आ रूप-भिन्नताक संकेतसँ शिवक अनूठ छवि बनैत अछि। लोकबोध मिथकीय देवताकेँ असाधारण वरक हास्यास्पद रूपमे देखैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। विचित्र दृश्य आ विपरीत गुणक संयोजन हास्यक आधार; पद केवल शिवस्तुति नहि, सामाजिक रंगमंचीय पुनर्सृजन थिक।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ५९-६३क शिव-पार्वती प्रसंगसँ ई हास्यात्मक दृश्य एक संग पढ़ल जाय; अकेले देव-स्तुति कहला पर व्यंग्य छूटि जाइत अछि।

पद ६७ | मूल पृ. ८९ | रत्नभण्डार आ इच्छा-संयम

विषयक निकट-पाठ। समुद्र आ रत्नक उल्लेख भौतिक सम्पत्ति आ मानवीय चाहक तुलना करैत अछि। प्रेम वा सम्मानक मूल्य वस्तुगत धनसँ भिन्न रूपमे उभरैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। उपमान आ प्रश्नात्मक वाणी सूत्रवत् संक्षिप्त अछि; अर्थ निश्चित करबा लेल पाठमे प्रयुक्त सम्बोधनक संदर्भक सावधानी चाही।

पद ६८ | मूल पृ. ९० | देह, मन आ नामस्मरण

विषयक निकट-पाठ। प्रेम-समर्पणक संग हरि/प्रियक नाम पाठक भाव-क्षेत्रकेँ भक्ति दिस खोलैत अछि। देहक अस्थिरता आ नामक टिकाऊ सम्बन्धक बीच द्वन्द्व अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। नाम-पुनरावृत्ति शृंगार आ भक्ति दुनूक भाषामे सम्भव; एकटा अर्थक पक्षमे अन्य सम्भावना अस्वीकार नहि करब।

पद ६९ | मूल पृ. ९१ | कउड़ी-पानक लोकबिम्ब

विषयक निकट-पाठ। कउड़ी आ पानक वस्तुगत लोक-सन्दर्भसँ पद दुनियावी विनिमय, मान आ स्नेहक प्रश्न उठबैत अछि। सामान्य वस्तुक सहायतासँ सम्बन्धक महत्व पर विचार सम्भव बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘कउड़ी’ जेहन व्यवहारिक शब्द काव्यभाषाकेँ लोक-अर्थव्यवस्थासँ जोड़ैत अछि; रूपककेँ अक्षरशः व्यापार-विवरण नहि मानल जाय।

पद ७० | मूल पृ. ९२ | चन्दन आ अग्नि विरोध

विषयक निकट-पाठ। चन्दनक शीतलता आ अग्नि/विरहक तापक विपरीत संकेत प्रेमक असह्य पीड़ा व्यञ्जित करैत अछि। संवेदना एतय स्पर्श, गन्ध आ तापक बहु-इन्द्रियात्मक अनुभव बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। विरुद्ध अनुभूतिक श्रृंखला पदमे तीव्र लय उत्पन्न करैत अछि; आध्यात्मिक आ लौकिक पाठ दूनू खुलल रहैत अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ४७क अग्नि आ पद ५५क पवनक सहायतासँ देहक ताप-शीतक विस्तृत बिम्ब-व्यवस्था बनैत अछि।

५. ‘कवि-मोन’ : पद ७१–१००क पृथक् पाठ-विश्लेषण

एहि खण्डमे “कवि-मोन” अन्तर्गत पद ७१–१००क विवेचन अछि। पद-संख्या आ आरम्भिक पृष्ठाङ्क मूल संग्रहक अनुक्रमक अनुसार राखल गेल अछि।

पद ७१ | मूल पृ. ९३ | सेवा, खेल आ कविक आत्मभाषा

विषयक निकट-पाठ। ‘कवि-मोन’ खण्डक आरम्भमे जीवनक खेल-भाव आ सेवाभावक उल्लेख काव्यकर्ताक नब दृष्टि प्रस्तुत करैत अछि। ई स्वर नायिकाक निजी व्यथासँ हटि अधिक आत्मालोचनात्मक होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। खण्ड-परिवर्तनकेँ पूर्ण विषय-विच्छेद नहि मानल जाय; पूर्वक गीतिक लय आ नैतिक संकेत एतहु उपस्थित छथि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। एहि आरम्भिक पदक संग पद ८१क नृत्य आ पद ९४क अनित्यबोधकेँ रखला पर ‘कवि-मोन’क भाव-विस्तार देखाइत अछि।

पद ७२ | मूल पृ. ९४ | पुष्पसज्जा आ सौन्दर्यक अस्थिरता

विषयक निकट-पाठ। कुसुमसँ रचल संसार दृश्य-सौन्दर्य, कोमलता आ नाशक सम्भावना एकठाम अनैत अछि। कवि भौतिक सज्जाकेँ रसात्मक आनन्दक संग समयक प्रवाहमे रखैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। पुष्प बिम्ब दृश्य आ गन्ध दुनूक सम्बन्ध रचैत अछि; सम्पादकीय पद-अर्थमे उपमा आ वास्तविक वस्तुक अन्तर जाँचबाक चाही।

पद ७३ | मूल पृ. ९६ | दिवस-राति आ अस्थायी सुख

विषयक निकट-पाठ। दिनक बीतब, जीवनक संकट आ स्थायी सुखक खोज पदक मुख्य दार्शनिक चिन्ता थिक। युवा देह आ संसारक आधार क्षणिक बुझाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। कालबोधक पुनरावृत्ति नीति-गीतक प्रभाव उत्पन्न करैत अछि; तथापि भावक वैयक्तिकता एकरा नीरस उपदेश होएबासँ रोकैत अछि।

पद ७४ | मूल पृ. ९७ | अकस्मात् पीड़ा आ जीवनक अनिश्चितता

विषयक निकट-पाठ। अचानक घटना घटना अथवा भावपरिवर्तनसँ जीवनक असुरक्षा सामने अबैत अछि। कविक भावबोध समयक आकस्मिक परिवर्तनमे मनुष्यक सीमाकेँ देखैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘आजे’ जेहन समयसूचक उद्घोष पदकेँ तुरन्तता दैत अछि; अनुभवक स्तर भौतिक आ सांकेतिक दूनू होएत।

पद ७५ | मूल पृ. ९८ | निद्रा, जागरण आ चेतन संघर्ष

विषयक निकट-पाठ। निद्रा आ जागरणक बीच मनक गति अनुभव-व्यवहारक संकट बनैत अछि। चाहल सुखक तात्कालिकता आ जीवनक विवेकपूर्ण निर्णय एक-दोसरसँ लड़ैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। स्वप्नमूलक बिम्ब आवृत्तिक माध्यमे अर्थ-गहराइ अनैत अछि; पदक कथक बदलैत अछि कि नहि, एकर सावधानी चाही।

पद ७६ | मूल पृ. ९९ | कमल, सरोवर आ स्नेह

विषयक निकट-पाठ। सरोवर-कमलक बिम्ब प्रेमक जन्म, नाजुकता आ परिस्थितिजन्य निर्भरताक रूपक बनैत अछि। स्नेहक अभावमे सुन्दरता निष्प्राण बुझाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। कमल-बिम्ब परम्परागत अछि, मुदा विशेष पाठमे एकर प्रयोजन सम्बन्धक परस्पर-निर्भरता; सौन्दर्यवर्णनसँ अधिक अर्थ मौजूद अछि।

पद ७७ | मूल पृ. १०० | विलास आ चेष्टाक चित्र

विषयक निकट-पाठ। कविक दृष्टि शरीरक हाव-भाव, चाल, दृष्टि आ संकोच पर केन्द्रित होइत अछि। मिलनक संकेतक माध्यमे मनोभाव प्रकट होइत अछि, जे कहबाक बदला दृश्य बनि पाठक लग पहुँचैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। नख-शिख चित्रणक परम्परा संग गेय संक्षिप्तता जुड़ैत अछि; शारीरिक विवरणकेँ सक्रिय दृष्टि आ पात्रक अनुभूतिक संग पढ़ब।

पद ७८ | मूल पृ. १०२ | विरहक देहधर्म

विषयक निकट-पाठ। विरह देहपर पड़ल परिणाम रूपमे उपस्थिति जनबैत अछि। व्यक्तिगत स्मृति आ समय एक-दोसरकेँ बढ़बैत छथि; काव्य-व्यथा केवल मानसिक नहिं।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। एकरा ‘देह-विरह’क रूपमे पढ़ला पर दृष्टि, ज्वर अथवा दुर्बलताक बिम्ब भावार्थ दैत अछि; एकटा अलंकार पर समस्त अर्थ निर्भर नहि।

पद ७९ | मूल पृ. १०३ | नवयौवना राधा आ प्रणय

विषयक निकट-पाठ। राधाक नवयौवन, संकोच आ कृष्ण-प्रेमक संकेत लौकिक शृंगारकेँ वैष्णव आख्यानसँ जोड़ैत अछि। नायक-नायिकाक सम्बन्ध एतय पूर्वप्रसिद्ध मिथक आ निजी मनःस्थितिक बीच स्थित अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘नव’क आवर्तन ऊर्जा आ ताजगी सृजित करैत अछि; भक्ति आ शृंगारक पाठ परस्पर-विरोधी नहि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ८०क नव-वृन्दावन आ पद ८१क नृत्यक संग ई राधा-माधव प्रेमक सांगीतिक-प्राकृतिक संसार बनबैत अछि।

पद ८० | मूल पृ. १०४ | ‘नव वृन्दावन’क प्रकृति-रचना

विषयक निकट-पाठ। ‘नव वृन्दावन नव नव तरुण’सँ आरम्भ होइत नूतनताक आवृत्ति वन, फूल, भ्रमर आ शृंगारक एक समृद्ध दृश्य बनबैत अछि। वृन्दावन बाह्य प्राकृतिक स्थल होइतहुँ आत्मिक आनन्दक प्रदेश बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘नव’क अनुप्रासात्मक पुनरावृत्ति रसक गतिशीलता रचैत अछि; दृश्य, गन्ध आ ध्वनिक संगति महत्त्वपूर्ण कलात्मक उपलब्धि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ७९क नवयौवना आ पद ८२क कुसुमित कानन समवेत रूपमे ऋतु आ प्रेमक परस्पर रूपान्तरण देखबैत अछि।

पद ८१ | मूल पृ. १०५ | नृत्यक बोल आ श्रव्य शिल्प

विषयक निकट-पाठ। ढिङ्गि-ढिङ्गि आ अन्य ध्वन्यात्मक पदांश नृत्यक छन्दकेँ भाषामे मूर्त करैत अछि। शरीरक गति, वाद्यक ताल आ सामूहिक उल्लास काव्यक आशयक संग संरचनात्मक तत्त्व बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ध्वनि-नकलकेँ अर्थहीन अक्षर मानब दोष होएत; मुद्रित पाठसँ परे गायन-नृत्यक जीवित सन्दर्भ आवश्यक।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ८०क दृश्यात्मक ‘नव’ आ एहि पदक श्रव्य बोल मिलि कविता आ प्रस्तुतिकलाक अन्तरंग सम्बन्ध खोलैत अछि।

पद ८२ | मूल पृ. १०६ | कुसुमित काननक प्रणय-दृश्य

विषयक निकट-पाठ। फूल सँ भरल वनक कुंज प्रेमक सम्भावित मिलनस्थल बनैत अछि। प्राकृतिक गोपनता आ आकर्षणक वातावरण नायिकाक मनोदशासँ मेल खाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रकृति उद्दीपन-विभावक रूपमे सक्रिय; पुष्पक दृश्य-सौन्दर्यक संग मानवीय आकांक्षा पढ़ल जाय।

पद ८३ | मूल पृ. १०७ | मान आ मिलनक अनुनय

विषयक निकट-पाठ। ‘अब’क आग्रहसँ तत्काल निर्णयक दबाब सामने अनैत अछि। प्रियक मान, प्रार्थना आ सम्बन्धक सम्भावित पुनर्स्थापन एक संवेदनशील संवादक विषय बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। निषेध आ अनुनयक वाक्य-रचना नाटकीय तनाव करैत अछि; कविक मुद्रा उपसंहारक मुद्रा अछि, संवादक पहिल कथक नहि।

पद ८४ | मूल पृ. १०८ | जागरण आ आनन्दक टकराहट

विषयक निकट-पाठ। मनक ललसा आ बाहरक परिवर्तनक वर्णन भावक चञ्चलता प्रदर्शित करैत अछि। समागमक आशा ओ चित्तक असुरक्षा साथ-साथ उपस्थित अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। निरन्तर वाक्य-पलट आ सखी-संबोधनक शैली गीतक दृश्यात्मकता बढ़बैत अछि; पदकेँ एकटा स्थिर नीतिवाक्य मानल नहि जाय।

पद ८५ | मूल पृ. ११० | ऋतु-वर्णन आ मधुर आमन्त्रण

विषयक निकट-पाठ। वर्षा अथवा हेमन्तक परिवेशमे प्रियकेँ स्मरण करैत कवि प्राकृतिक लक्षणकेँ प्रेमक भाषा बनबैत छथि। सौन्दर्य आ पीड़ाक मिश्रण ऋतुकेँ भावनात्मक सत्ता दैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ऋतु-चिह्नक शब्दार्थ आ रसमूलक प्रयोग अलग रखनाइ जरूरी; दृश्य-क्रमक कारण पदमे गति अछि।

पद ८६ | मूल पृ. १११ | स्वप्न, राज-सन्दर्भ आ प्रशस्ति

विषयक निकट-पाठ। स्वप्न-दर्शन आ कविक राजसम्बन्धी संकेत रचनाकारक आश्रय-संसार खोलैत अछि। प्रिय-अनुभवसँ इतर कविक सामाजिक स्थिति आ प्रशस्तिपरक भाषा पाठकेँ नब दिशा दैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। राजकीय नाम, कवि-मुद्रा आ स्वप्नक कथककेँ एक समान ‘आत्मकथा’ नहि मानल जाय; बाहरी इतिहाससँ मिलान बिनु तिथि-निर्णय असम्भव।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ६४क राजाश्रय-संकेत जेकाँ एतहु कविक सामाजिक स्थान कविता-पाठक प्रश्न बनैत अछि; ठोस इतिहासक लेल अलग साक्ष्य अपेक्षित।

पद ८७ | मूल पृ. ११२ | विदाइ आ आत्मनियन्त्रण

विषयक निकट-पाठ। प्रस्थान, वचन आ अपेक्षाक उल्लेख जीवनक अवश्यम्भावी परिवर्तनक पीड़ा व्यक्त करैत अछि। नायिका/कथक प्रियकेँ रोकबाक वा स्मरणमे राखबाक जतन करैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। आदेशात्मक कथन आ विनयक समवाय भावक सूक्ष्मता रचैत अछि; खण्ड-नामसँ कथकक लैंगिक परिचय निश्चित नहि होइत।

पद ८८ | मूल पृ. ११३ | रामकथा आ भक्तिपरक काव्य

विषयक निकट-पाठ। राम, देवकुल, कुल-धर्म अथवा राजपात्रक संकेत एहि पदमे विशिष्ट धार्मिक आख्यानक संसार उपस्थित करैत अछि। प्रेम-संग्रहक भीतर राम-स्मरणक उपस्थिति विद्यापतिक काव्य-क्षेत्रक बहुलता देखबैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। मुद्रित पाठमे नाम आ सम्बन्ध पढ़ि भक्तिक विषय पहिचानल जा सकैत अछि; अन्य रामायण-परम्परासँ समानता सिद्ध करबा लेल पृथक पाठसाक्ष्य चाही।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। शिव-सम्बन्धी पद ५९-६६ आ माधव-पुकार पद ९०क संग एकरा पढ़ला पर संग्रहक धार्मिक बहुलता प्रकट होइत अछि।

पद ८९ | मूल पृ. ११५ | सखी-संवाद आ प्रियक रूप

विषयक निकट-पाठ। ‘कि कहब हे सखि’ जेहन उद्घोष मनक अव्यक्त वेदनाकेँ स्वर दैत अछि। प्रियक मुख, दृष्टि आ मिलनेच्छाक वर्णनसँ भावनात्मक निकटता बनैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रश्न-आधारित उद्घाटन आत्मव्याख्याक सीमा दिखबैत अछि; कवि भावक ‘अनिर्वचनीयता’क कलात्मक उपयोग करैत छथि।

पद ९० | मूल पृ. ११६ | माधव-स्मरण आ आत्मसमर्पण

विषयक निकट-पाठ। ‘अहे अहे माधव’क आवर्तन प्रार्थना आ प्रेम-पुकारक संगम अछि। देहक दुःख, मनक ललक आ कृपाक आशा एक ही सम्बोधनमे समाहित होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ई पद शृंगार-भक्ति सीमारेखा पर विशेष महत्त्वपूर्ण; एकटा पाठक भक्ति देखथि, दोसर प्रेमक वियोग—दुनूक आधार पाठमे विद्यमान।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद २९क हरि-पुकार आ पद ९७क विदाइ-दृश्य संग तुलना शृंगार-भक्ति संयुक्त संवेदनाकें बिस्तार दैत अछि।

पद ९१ | मूल पृ. ११७ | मनक जागरण आ अनित्य संसार

विषयक निकट-पाठ। मनक चञ्चलता, विषय-वासनाक आकर्षण आ आत्मनिग्रहक आग्रह पदकें जीवनदर्शनक दिशा दैत अछि। चेतन मनक अपनी अस्थिरताक परिक्षा मुख्य चिन्ता अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। उपदेशात्मक वाक्य आ भावाभिव्यक्ति गीतिकाव्यक भीतर नीति-चिन्तन जोड़ैत अछि; व्याख्यामे अवधारणाक भेद स्पष्ट हो।

पद ९२ | मूल पृ. ११८ | सुन्दरिँकें सम्बोधित प्रश्न

विषयक निकट-पाठ। ‘सुन्दरि’क प्रत्यक्ष सम्बोधन प्रेमक अस्थिरता आ वचनक अर्थ पर विचार करैत अछि। प्रेमी-प्रेमिकाक बीच भरोसाक परीक्षा आ असमाप्त आशा मौजूद अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। प्रतिप्रश्नक विधान पाठककें न्यायाधीश बनबैत नहि, भावक साक्षी बनबैत अछि; सम्बोधनक परिवर्तन नोट करब आवश्यक।

पद ९३ | मूल पृ. ११९ | उलझल केश आ नयनक सौन्दर्य

विषयक निकट-पाठ। विगलित केश, मुखमण्डल आ अंगक सजीव विवरणसँ रूप-सौन्दर्यक सूक्ष्म चित्र बनैत अछि। दृश्य-माधुर्यक संग पात्रक लज्जा, आवेग आ निजी अस्थिरता लक्षित होइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। शारीरिक बिम्बक क्रम चाक्षुष सौन्दर्यपरक; रूपकें निष्क्रिय वस्तु नहि, प्रेमक व्यवहारमे सक्रिय उपस्थिति रूपेँ पढ़ल जाय।

पद ९४ | मूल पृ. १२० | ‘थिर नहि जीवन’क अनित्यबोध

विषयक निकट-पाठ। जीवन, देह आ समयक अस्थिरता पाठमे सीधे उद्घाटित होइत अछि। नश्वरताक प्रश्न प्रेमक अनुभवकें व्यापक मानव-दर्शनसँ जोड़ैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘थिर नहि’क आवृत्ति दर्शनकें स्मरणीय गीतिक वाक्यमे परिणत करैत अछि; संक्षिप्त नीतिक संग भावक व्याकुलता उपस्थित अछि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ११ आ ७३क अल्पजीवन-विवेचन आ पद १००क क्षणबोधसँ मिलि ई चयनमे नीतिपरक सूत्र बनैत अछि।

पद ९५ | मूल पृ. १२१ | उदयकालक दृश्य आ प्रिय-स्मरण

विषयक निकट-पाठ। दिवाकरक उदय, पक्षीक चाल आ दिनक प्रारम्भसँ वातावरणक नूतनता रचैत अछि। प्रकृति जागैत अछि, मुदा प्रिय-स्मृति मनकें अलग प्रकारक जागरणमे रखैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। उषाकाल दृश्यात्मक आ सांकेतिक दुनू; समय-परिवर्तनक संग भाव-परिवर्तनक सटीक मिलान पदक शिल्प।

पद ९६ | मूल पृ. १२२ | कृपा, करुण पुकार आ आश्रय

विषयक निकट-पाठ। दीन कथकक पुकारमे सहायता आ आश्रयक माँग व्यक्त अछि। प्रेम, भक्ति आ आत्मनिवेदनक स्वर परस्पर मिलि जाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘अब’ जेहन तात्कालिकता आ विनयात्मक क्रिया पाठककें कथकक संकटमे प्रवेश दैत अछि; एकर धार्मिक पहचान पाठसाक्ष्य अनुसार राखल जाय।

पद ९७ | मूल पृ. १२३ | हरिक प्रस्थान आ विरह

विषयक निकट-पाठ। हरिक विदा होयब दृश्य-सम्बन्धकें स्मृतिमे बदलि दैत अछि। पदमे रोध, संकोच, प्रतीक्षा आ आत्मविसर्जनक भावनिक क्रम देखाइत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। गति-सूचक क्रिया आ पुनःसम्बोधन विरहकें वर्तमान करैत अछि; मिथकीय नामक कारण लौकिक संवेदनाकें नजरअन्दाज नहि करब।

पद ९८ | मूल पृ. १२४ | दीनता, पृथिवी आ दैवी अभिमुखता

विषयक निकट-पाठ। देह-मनक असमर्थता, नाम-स्मरण आ दैवी आधारक संकेत रचनाकें आध्यात्मिक स्वीकारोक्ति बनबैत अछि। व्यक्ति अपन सीमाकें चिन्हि सहायता ताकैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। सांसारिक असहायता आ दैवी भरोसाक सम्बन्धमे भक्तिरसक सम्भावना बलवती; पदकें समस्त शृंगारक वर्गमे समेटनाइ कठिन।

पद ९९ | मूल पृ. १२६ | बाण, रूप आ प्रेमक आघात

विषयक निकट-पाठ। नयन वा रूपक बाणक बिम्बसँ आकर्षणकेँ घाव-जेकाँ मूर्त कएल गेल अछि। कवि प्रेमक सुख आ पीड़ा एकहि बिम्बमे रचैत छथि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। ‘बाण’ शृंगार-काव्यक प्रचलित रूपक होइतहुँ एहि पदक मनःस्थितिकेँ विशेष तीव्रता दैत अछि; प्रत्यक्ष शस्त्रक अर्थ उचित नहि।

पद १०० | मूल पृ. १२७ | अखनक समय आ जीवनक अनित्यता

विषयक निकट-पाठ। अन्तिम पदमे ‘अखन’क तात्कालिकता मनुष्यक अस्थिर जीवन आ समयक क्षणभंगुरताकेँ सामने रखैत अछि। मनक आसक्ति आ उचित बोधक बीच तनातनी संग्रहकेँ चिन्तनशील अन्त प्रदान करैत अछि।

शिल्प आ आलोचनात्मक निरीक्षण। अन्तिम स्थान सम्पादकीय रचना-कौशलक हिस्सा थिकः विरह-सौन्दर्यसँ चलि संग्रह जीवन-दर्शन दिस पहुँचैत अछि; एहि क्रमकेँ विद्यापतिक स्वयं रचल मूल अनुक्रम मानबाक प्रमाण नहि।

अन्तर्पाठीय सम्बन्ध। पद ७क स्त्री-जन्मक दुःख आ पद ९४क अनित्यबोध जोड़ि देखला पर संग्रहक आरम्भ आ उपसंहार बीच जीवन-दर्शनक संवाद सम्भव अछि।

६. नायिकाक अभिव्यक्ति : अधिकार, संकोच आ प्रतिरोध

६.१ ‘स्त्री-मोन’क एकरूपता नहि, अनेकता

प्रेमिकाक वाणी आ विद्यापतिक कवि-वाणी सदिखन एक नहि। पद १-३क अभिमान, पद ९-१८क परदेश-विरह, पद २०-२४क घनिष्ठ भेंट, पद ३५क गृह-निगरानी तथा पद ५७क निषेधक स्वर एकहि ‘स्त्री’क अपूर्ण विविध रूप नहि, बल्कि अनुभूतिक अनेक ठाम अछि। एहि चयनक आलोचनात्मक उपलब्धि स्त्रीक भाषा केन्द्रमे आनब अछि; सीमा ई जे खण्ड-नामक कारण पाठक स्त्रीकेँ मुख्यतः वेदना द्वारा परिभाषित करबाक जोखिम लऽ सकैत छथि।

६.२ सखी केवल श्रोता नहि

‘सखि’क सम्बोधन स्त्रीक एकल मनकेँ सामुदायिक संवादमे रूपान्तरित करैत अछि। सखी गोपनीयता, परामर्श, सन्देश, आत्मपरीक्षा आ मिलनक सहयोगक सम्भावित माध्यम अछि। पद १५,

२५, ३१, ३३, ३४ आ ८९क तुलनासँ सखी-सम्बोधनक भाषिक कार्यक भिन्नता देखाइत अछि। एहि पदसभकेँ केवल प्रेमिकाक विलाप कहनाइ सामाजिक संवादक सूक्ष्म संरचना उपेक्षित करब थिक।

६.३ लोकाचारक दाब

कुल-गौरव (१९), घरक अँगना (२३), सासु-पहरा (३५), परिवार-संकोच (५७) तथा शिव-गौरीक विवाहक व्यंग्य (५९-६३) प्रेमक निजी क्षेत्र पर लोकाचारक नियंत्रण देखबैत अछि। जे समाज 'मान' कहैत अछि, स्त्रीक आवाज ओकर भीतर अपन चाह पर विमर्श करैत अछि। तथापि पदक पात्रक स्वरक आधुनिक सिद्धान्तक सीधा घोषणापत्र बनाओल नहि जाय; वाणीमे संकोच, अनुरोध, अनुराग आ प्रतिरोध एकसंग चलैत अछि।

७. रस-संरचना, बिम्ब आ ध्वनि

७.१ विप्रलम्भ-शृंगार आ करुण

परदेशक दुःख (९, १८, ३४), विषम राति (५०), असफल प्रतीक्षा (४३, ५४), अग्निताप (४७) आ पवनक उद्दीपन (५५) विप्रलम्भक अनेक रूप उपस्थित करैत अछि। मुख्य बात ई जे विरह केवल अनुपस्थिति नहि, समय आ देहक अनुभूतिक पुनर्संरचना थिक: राति लम्बा, घर सून्न, प्रकृति प्रतिकूल आ आत्मसंवाद बेचैन भऽ जाइत अछि। करुण भाव शृंगारक भीतर सँ उत्पन्न होइत अछि, ताहि लेल प्रत्येक पदकेँ एक रसक खाँचामे बाँधनाइ उपयुक्त नहि।

७.२ संयोग, संकोच आ नायिकाक दृष्टि

पद २०, २३, ४१, ४२, ७७ आ ९३ प्रेमक दृष्टि, स्पर्शक संकेत, हाव-भाव, लज्जा आ लुकायल संवादक अनेक दृश्य बनबैत अछि। संयोगक रस एतय खुलेआम उद्घोषणा नहि, सामाजिक जोखिममे साधल सम्बन्धक पल-पल गतिमे प्रकट अछि। एहि पदसभक रचनामे कथात्मकता आ चित्रात्मकता एक-दोसरकेँ बल देइत अछि।

७.३ हास्य, व्यंग्य, स्तुति

शिव-गौरी सम्बन्धी पद ५९-६६ (विशेषतः ५९, ६२, ६३, ६६) प्रेमक गंभीरता बीच हास्यक अनूठ स्थान खोलैत अछि। देवताक विचित्र वेश, बरद आ वैवाहिक व्यवस्था लोक-स्त्रीक निगाहसँ नव अर्थ

ग्रहण करैत अछि। ई भक्ति-विरोधी विडम्बना नहि, लोकक धार्मिक निकटताक एक प्रतीक सेहो भऽ सकैत अछि।

७.४ ध्वन्यात्मकता आ गान

गीतक जीवन पदक अर्थसँ बढ़ि ओकर उच्चारणमे अछि। ‘ए हरि’क पुनरुक्ति (२९), ‘अहे सखि’क पुकार (२५), ‘नव’क क्रमिक उच्चारण (८०), नृत्यक ध्वन्यात्मक बोल (८१), ‘थिर नहि’क आवर्तन (९४) ध्वनिकेँ अर्थ-वहनक सक्रिय अंग बनबैत अछि। पाठ-अर्थक गद्य रूप एहन ताल, विराम, अनुरणन आ पुकारक प्रभाव सम्पूर्ण रूपेँ सँभालि नहि सकैत अछि।

७.५ बिम्बक अर्थ-परिवार

मधुकर-पिक (१०, १६), चन्द्र-अँधार (२१), सरोवर-कमल (१२, ५६, ७६), पवन-वर्षा (३०, ५५, ८५), चन्दन-ताप (७०), पुष्प-कुञ्ज-वृन्दावन (७२, ७९, ८०, ८२) पुनरावृत्त बिम्बसभ अछि। एकहि प्राकृतिक वस्तु कखनो आशाक, कखनो विरहक चिह्न बनैत अछि। संदर्भ बदलला पर बिम्बक रस बदलैत अछि—ई विद्यापतिक काव्य-शिल्पक विशेष ताकत रूपेँ एहि चयनमे चिन्हित होइत अछि।

८. भाषा, लोकबोध, संवाद आ गेयता

मूल मैथिली पदमे ध्वनि-संक्षेप, रूपान्तरण आ क्षेत्रीय प्रयोगक स्वतंत्र इतिहास होय सकैत अछि। ताहि लेल संकलनक किछु पाठकेँ आधुनिक मानक वर्तनीक आधार पर ‘सुधारि’ देबाक बदला तकर मौलिकता जोगेनाइ उपयुक्त। ‘शुद्ध मैथिली’मे समीक्षा लिखबाक अर्थ ई नहि जे उद्धृत पुरान पदक रूप जबरदस्ती बदलि देल जाय। पदक मौलिक वाक्यरूप स्रोत-रूपेँ सुरक्षित रहबाक चाही।

संवादक स्वर पदक काव्यगत अस्तित्व अछि: सखी, माए, प्रिय, हरि, माधव, शिव अथवा कवि स्वयं—सब सम्बोधनक अलग सामाजिक-भावात्मक प्रसंग अछि। पाठ-अर्थमे ‘ओ कहैत छथि’ जोड़ल जाए तऽ ई व्याख्याकारक प्रस्तावना होइत अछि, मूल पदक शाब्दिक पाठ नहि। समीक्षामे ताहि भेदक दृढ़ता राखल गेल अछि।

९. शैव, वैष्णव, लौकिक आ नीतिपरक स्वर

विद्यापतिक एहि संग्रहक भीतर विषयक बहुलता वास्तविक अछि। शैव-लोकपरम्पराक हास्यगीत पद ५९–६६, वृन्दावन आ राधा-माधवक काव्य पद ७९–८२, आध्यात्मिक आ प्रेमिक पुकारक मिलन

पद २९, ९०, ९७, रामसम्बन्धी संदर्भ पद ८८, आ अनित्यबोध पद ११, ७३, ९४, १०० एकही चयनमे स्थान पबैत अछि। एहि भिन्न स्वरकें पाठसाक्ष्य बिना एक संप्रदायक कठोर घोषणामे बाँधब विद्यापतिक कवि-संसारकें छोट करब होएत।

माधवक नामक संग प्रेम आ भक्ति एक-दोसरमे प्रवेश करैत अछि। एकठाम प्रियक विलम्बित आगमन (३२), दोसर ठाम ‘अहे माधव’क पुकार (९०) धार्मिक आसरे लगैत अछि। आलोचनात्मक पढ़ाइमे देव-सम्बोधन, कथकक स्थिति, प्रेमक देहात्मकता आ समर्पणक स्वरक अलग-अलग संकेतक आधार पर अर्थ केनाइ उचित।

कवि-छाप आ राजाश्रयक संकेत पद ६४ आ ८६मे ध्यान आकर्षित करैत अछि। मुदा एहि मुद्रासँ ऐतिहासिक तिथि, विशिष्ट राजदरबार अथवा कविक निजी जीवन निश्चित केनाइ सम्भव नहि। आधुनिक शोधमे आन्तरिक पाठसाक्ष्यकें पाण्डुलिपि, प्राचीन टीका, राजकीय लेख तथा अन्य सम्पादित पाठक साक्ष्यसँ मिलान करबाक आवश्यकता रहत।

१०. सम्पादकीय शब्दार्थक गुण-दोष आ पाठ-समस्या

१०.१ सम्पादकीय संरचनाक उपयोगिता

सम्पादक प्रायः पदक बाद स्रोत-संकेत आ कठिन शब्दक अर्थ, तकर बाद ‘पाठ-अर्थ’ देल छथि (उदाहरणः पद १, मूल पृ. ९-१०; पद १२, पृ. २३; पद ३६, पृ. ५२-५३; पद ८८, पृ. ११३-११४)। एहि त्रिस्तरीय व्यवस्था सँ पाठक शब्द, कथ्य आ संदर्भक बीच जा सकैत छथि। चयन, अनुक्रमणिका आ अन्तिम स्रोत-सूची (पृ. १२८) पुस्तककें सामान्य लोकप्रिय संग्रहसँ अधिक उपयोगी अध्ययन-सामग्री बनबैत अछि।

१०.२ शब्दार्थ आ अर्थ-निर्णय

एक शब्दक अनेक प्रसंगानुकूल अर्थ होइत अछि। मधुकर, हरि, बरद, गाम, मान, सखि, सर, थिर, अग्नि सरीख पदावलीमे केवल कोशार्थ पर्याप्त नहि। शोधार्थी लेल उपयोगी प्रक्रिया ई अछि—पहिने मूल पंक्तिक व्याकरण आ वक्ता बुझू; दोसर, शब्दार्थ पढ़ू; तेसर, पाठ-अर्थमे जुड़ल नब कथात्मक विवरणक पहिचान करू; चारिम, वैकल्पिक अर्थक सम्भावना दर्ज करू।

१०.३ मुद्रित स्रोत-संकेत आ आलोचनात्मक संस्करणक अन्तर

कतेको पदक नीचाँ संक्षेपमे अन्य पुस्तक/पदावलीक संदर्भ देल अछि। पृ. १२८ पर संकेतनामक सूची सेहो अछि। ई आभारयोग्य सन्दर्भ-दर्शन थिक; मुदा मात्र ई सूचना हर पदक हस्तलिपि-पाठ,

पाठान्तर, प्रामाणिकता आ हस्तक्षेपक विस्तृत आलोचनात्मक उपकरण नहि। विशेषतः पद ८८ जेहन लम्बा पाठ आ पद ८९ जेहन ध्वन्यात्मक पदक अक्षरानुक्रमक निर्धारण अन्य संस्करणसँ मिलान कएल बिना अन्तिम नहि मानल जा सकैत अछि।

१०.४ व्याख्याक सम्भावित विस्तार

‘पाठ-अर्थ’ कखनो मूल संक्षिप्त पदकेँ घटना, पात्रक कारण वा मनोवृत्तिक अधिक विस्तार देइत अछि। ई व्याख्याक एक परम्परागत पद्धति अछि, अनिवार्यतः त्रुटि नहि; मुदा पाठक लेल ई बोध आवश्यक जे ‘सखी ई सोचलक’ जेहन विस्तार मूल वचनसँ स्पष्ट अछि कि सम्पादकक अनुमान, से अलग प्रश्न थिक। ई शोध एहि भेदकेँ पुनःपुनः रेखांकित करैत अछि।

१०.५ स्त्री-स्वरक सम्पादकीय प्रस्तुति

संकलकक स्त्री-केंद्रित दृष्टि संग्रहक महत्त्वपूर्ण आलोचनात्मक हस्तक्षेप अछि। एकरा मूल्याङ्कित करैत एकसंग दू सावधानी चाही: (१) नायिकाक आवाजकेँ गौण नहि कएल जाय; (२) सभ पदकेँ स्त्री-सशक्तिकरण अथवा स्त्री-पीड़ाक एक रंगमे बदलि नहि देल जाय। शिव-गौरी हास्य, राधा-माधव प्रेम, कवि-नीति आ राज-सन्दर्भ एहि जटिलताक प्रमाण अछि।

११. समग्र निष्कर्ष आ आगाँक शोधकार्य

कुणाल-सम्पादित ई चयन विद्यापति-काव्यकेँ पाठक समक्ष स्त्री-अनुभवक तीव्रता सँ प्रस्तुत करैत अछि। संग्रहक प्रथम सत्तर पद प्रेमिका, सखी, गृहस्थी, नैतिक अपेक्षा, विरह आ देवीक मानवीय संसारें विस्तृत अछि; अन्तिम तीस पदमे कविक आत्मस्वर, सौन्दर्य, नृत्य, वृन्दावन, भक्ति आ अनित्यबोधक विवेचन प्रखर होइत अछि। किन्तु खण्डक सीमा पार करैत भावसभक आवाजाही एकर वास्तविक सौन्दर्य अछि।

एहि शोधक एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष ई अछि जे विद्यापतिक कथक-स्वर बहुवचनात्मक अछि: कखनो नायिका स्वयं बोलैत छथि, कखनो सखी माध्यम छथि, कखनो कवि स्वर बदलैत छथि, कखनो हरि-माधव वा शिव-गौरीक मिथकीय क्षेत्र खोलैत छथि। ताहि लेल ‘प्रेमगीत’ कहि सभ एकरूप बनाओल नहि जाय। प्रकृति परस्पर विरोधी रस वहन करैत अछि, लोकभाषा उच्च काव्यगत अर्थ रचैत अछि, आ गीतक उच्चारण स्वयं अर्थक हिस्सा अछि।

सम्पादकीय अवदानकेँ सराहैतहुँ आलोचनात्मक समस्या स्पष्ट अछि: पाठ-अर्थक व्याख्यात्मक विस्तार आ मूल पदक साक्ष्य बीच अन्तरक सजगता आवश्यक। ई पोथी महत्वपूर्ण पाठ-प्रवेशद्वार

अछि; अलग स्रोतक संग पाठान्तर-सूची बनलापर ई स्त्री-काव्य, रस-मीमांसा आ मध्यकालीन मैथिली भाषिक इतिहासक अधिक ठोस शोधक आधार भऽ सकत।

पाठभेदक विस्तृत अध्ययन लेल अलग-अलग सम्पादित पदावली आ पाण्डुलिपि-परम्पराक तुलनासँ नव प्रश्न उठैत अछि। छन्द, गायन-परम्परा, लोकप्रयोग आ स्त्री-वाणी पर केन्द्रित अध्ययन सेहो एहि चयनक अर्थकें विस्तार दए सकैत अछि।

१२. पदवार पृष्ठ-सूची आ आधार-सामग्री

एहि तालिकामे सभ १०० पदक मूल मुद्रित पृष्ठ-संख्या देल अछि, जाहिसँ पाठक मूल पोथी आ समीक्षा बीच तुरन्त मिलान कऽ सकथि। मुद्रित पृष्ठ ९-१२७मे कतेको पृष्ठ पर एके पदक शब्दार्थ/पाठ-अर्थ आगाँ बढैत अछि; तालिका पदक आरम्भ-पृष्ठ बतबैत अछि।

पद	पृष्ठ	पद	पृष्ठ	पद	पृष्ठ	पद	पृष्ठ
१	९	२६	४१	५१	६८	७६	९९
२	११	२७	४२	५२	६९	७७	१००
३	१२	२८	४३	५३	७०	७८	१०२
४	१४	२९	४४	५४	७२	७९	१०३
५	१६	३०	४५	५५	७३	८०	१०४
६	१७	३१	४६	५६	७४	८१	१०५
७	१८	३२	४७	५७	७६	८२	१०६
८	१९	३३	४८	५८	७८	८३	१०७
९	२०	३४	४९	५९	८०	८४	१०८
१०	२१	३५	५१	६०	८१	८५	११०
११	२२	३६	५२	६१	८२	८६	१११
१२	२३	३७	५४	६२	८४	८७	११२
१३	२४	३८	५५	६३	८५	८८	११३
१४	२५	३९	५६	६४	८६	८९	११५
१५	२७	४०	५७	६५	८७	९०	११६
१६	२८	४१	५८	६६	८८	९१	११७
१७	२९	४२	५९	६७	८९	९२	११८
१८	३०	४३	६०	६८	९०	९३	११९
१९	३२	४४	६१	६९	९१	९४	१२०
२०	३४	४५	६२	७०	९२	९५	१२१
२१	३५	४६	६३	७१	९३	९६	१२२
२२	३६	४७	६४	७२	९४	९७	१२३
२३	३८	४८	६५	७३	९६	९८	१२४
२४	३९	४९	६६	७४	९७	९९	१२६
२५	४०	५०	६७	७५	९८	१००	१२७

अध्याय १०

रंगायन : मैथिली रंगचेतनाक आलोचनात्मक अध्ययन

लोकनाट्य, प्रदर्शन, भाषिक अस्मिता आ रंग-इतिहास

रंगायन : कुणाल

मूल ग्रन्थ : रंगायन (नाट्य आलोचना) | लेखक : कुणाल | प्रथम संस्करण : २०२३ |

प्रकाशक : अंकिता प्रकाशन प्रा. लि. | ISBN : 978-93-91925-67-3

अध्ययनक प्रस्तावना

कुणालक ‘रंगायन’ मैथिली रंगमंचक बहुपक्षीय विमर्शकें एक ठाम अनबाक प्रयत्न अछि। पोथीमे नाच, लोकनाट्य, कीर्तनिया, सलेहेस, समकालीन भारतीय रंगचेतना, जननाट्य, लेखन, कथ्य, शिल्प, निर्देशक, दर्शक, संस्था, साहित्य आ रंगमंचक परस्पर सम्बन्ध विषयक आलेख संकलित अछि। अन्तिम भागमे बातचीत आ व्यक्ति-केन्द्रित लेख सेहो अछि। एहि संकलनक मूल महत्त्व ई अछि जे मैथिली रंगमंचकें केवल मुद्रित नाटकक इतिहासमे नहि, प्रदर्शन आ लोकजीवनक संगतिमे रखबाक प्रश्न बारम्बार सामने अबैत अछि।

ग्रन्थक भूमिका, लेख-शीर्षक आ विषय-विन्यास एकरे भीतर रंगपरम्परा, आधुनिकता, भाषा आ रंगकर्मक परस्पर सम्बन्धक प्रश्न उठबैत अछि। अनुक्रमणिकाक क्रमक अनुसार प्रत्येक आलेखक विषयगत पक्ष आ ताहिसँ उपजैत आलोचनात्मक जिज्ञासाकें समेटल गेल अछि।

ग्रन्थ-विन्यास आ अध्ययन-पद्धति

अनुक्रमणिकामे मुख्य चार खण्ड अछि—‘नाच आ लोक नाट्य’, ‘समकालीन मैथिल रंगमंच’, ‘रंगमंच’, ‘बातचीत’। एहि चारू खण्डक सभ सूचीबद्ध उपशीर्षककें नीचे स्वतंत्र प्रविष्टि देल गेल अछि। आरम्भमे लेखकक भूमिका (मुद्रित पृष्ठ VII–VIII) आ अन्तमे मैथिली रंगमंचक भविष्य विषयक प्रविष्टि अछि। शीर्षक-सूचीमे छोट-छोट कविता आ प्रश्नात्मक शीर्षक सेहो अछि; ताहि लेल सभ गद्यकें एके विधाक रूपमे नहि पढ़ल गेल अछि।

भूमिका : लेखकक रंगधारणा

भूमिकामे लेखक रंगकर्मक दीर्घ अनुभव आ रंगचिन्तनक अविच्छिन्न सम्बन्धक विषय उठबैत छथि। नाटककें मंच-प्रक्रिया, अभिनय, लोकभाषा, संगठन आ समाजक सन्दर्भमे देखबाक आग्रह भूमिका आ आरम्भिक आलेखक बीच तन्तु बनबैत अछि। लेखक अपन अनुभवजनित प्रतिबद्धता स्वीकारैत छथि; आलोचकक दृष्टिसँ एहि आत्मस्थितिक शक्ति आ सीमा दुनू देखबाक चाही। अनुभव लेखनकें जीवन्त करैत अछि, मुदा इतिहास-संबन्धी सर्वसाधारण दावाक प्रमाण अलगसँ चाही।

चारू खण्डक सभ विषयक आलोचनात्मक विवेचन

नाच आ लोक नाट्य

01. मिथिलाक संस्कृति आ लोक नाट्य [मुद्रित पृ. 13]

विषय : लोक नाट्यकें सामुदायिक जीवन, भाषा, संस्कार आ उत्सवक अन्तर्सम्बन्धमे देखबाक आग्रह एहि आलेखक केन्द्र अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : लोकविधाक अध्ययनमे प्रदर्शनस्थल, सामाजिक सहभागिता आ मौखिक परम्पराकें पाठसँ पृथक् नहि कएल जा सकैत अछि।

02. नाच आ किरतनिया : स्वरूप आ संभावना [मुद्रित पृ. 21]

विषय : नाच आ कीर्तनिया परम्पराक सौन्दर्य आ रंगमंचीय सम्भावना विषय बनैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : कथा, गायन, अभिनय, संवाद आ सामूहिक अनुष्ठानक परस्परता एहि विधाक रूपक परीक्षणक प्रमुख आधार अछि।

03. लोक गाथाक नाट्य रूप [मुद्रित पृ. 25]

विषय : लोकगाथाक कथा-शिल्प आ नाट्यरूपान्तरणक प्रश्न उठाओल गेल अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : लोकगाथाकें नाटकमे फेरबा समय कथावाचक, गायक, पात्र, समय-परिवर्तन आ दर्शकीय सहभागिताक पुनर्संयोजन आवश्यक बनैत अछि।

04. संक्रमणक क्रम मे एक टा लोक नाट्य : सलेहेस नाच [मुद्रित पृ. 31]

विषय : सलेहेस नाचक रूपान्तरणकें सामाजिक-सांस्कृतिक संक्रमणक उदाहरण बनाओल गेल अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : लोकनायक कथा, जातीय-सामाजिक स्मृति आ प्रदर्शनक बदलैत परिस्थिति बीच सम्बन्ध देखल जा सकैत अछि।

05. किरतनिया नाट्य [मुद्रित पृ. 36]

विषय : कीर्तनिया नाट्यक ऐतिहासिक परम्परा आ रंगात्मक स्वरूपक विवेचना अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : गीत, अभिनय, काव्य आ भक्तिक संगमक संग ऐतिहासिक दावाक स्रोत-परीक्षण आवश्यक अछि।

06. किरतनियाक अवयव [मुद्रित पृ. 40]

विषय : कीर्तनिया रूपक घटकक नामकरण, दल-संरचना, भाषा, प्रवेश आ प्रस्तुति आदि आधार पर वर्गीकृत कएल गेल अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : ई अंश अन्य सामान्य निबन्धसँ भिन्न; रंगप्रयोगक विशिष्ट अंग बुझबाक उपयोगी विश्लेषणात्मक ढाँचा दैत अछि।

समकालीन मैथिल रंगमंच

07. समकालीन भारतीय रंगमंच आ मैथिली [मुद्रित पृ. 47]

विषय : भारतीय रंगमंचक विविध आन्दोलनसँ मैथिली रंगमंचक सम्बन्ध आ अन्तर पर चर्चा अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : मुख्यधारा आ क्षेत्रीयताक सरल विरोधक स्थान पर प्रयोग, संस्थान, भाषा आ दर्शकक सम्बन्ध देखब उपयोगी अछि।

08. समकालीन मैथिली रंगमंच : स्थिति आ अपेक्षा (निर्देशक दृष्टि मे) [मुद्रित पृ. 50]

विषय : समकालीन रंगकर्मक अवस्था आ निर्देशकक अपेक्षासम्बन्धी प्रश्न अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : निर्देशकक कलात्मक स्वायत्तता, समूह-अनुशासन, अभ्यास आ संसाधनक सम्बन्ध आलोचनाक आधार अछि।

09. निजत्व आ मैथिली रंगमंच [मुद्रित पृ. 54]

विषय : मैथिली रंगमंचक निजत्व, अस्मिता आ अन्य रंगपरम्परासँ सम्बन्ध पर विमर्श अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : निजत्वकें केवल वेशभूषा अथवा उच्चारणमे नहि, सामाजिक अनुभव आ रंगभाषाक निर्माणमे देखबाक जरूरत अछि।

10. मैथिली रंगमंचक स्वरूप निर्धारण : संदर्भ जननाट्य [मुद्रित पृ. 59]

विषय : जननाट्यक परिप्रेक्ष्यमे रंगमंचक रूप आ सार्वजनिक उत्तरदायित्वक प्रश्न प्रस्तुत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : जन-संवाद आ जनपक्षधरता संग कलाकारक स्वतन्त्रता आ नाट्यशिल्पक समन्वय महत्वपूर्ण अछि।

11. रंगमंच : साध्य, साधन आ धर्म [मुद्रित पृ. 64]

विषय : रंगमंचक कला, संप्रेषण आ सामाजिक दायित्वक अनेक स्तर पर राखि विचार कएल गेल अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : साधन आ साध्यक भेदक रंगप्रयोग, दर्शकक प्रत्युत्तर आ कलात्मक अनुशासनसँ जोड़ि देखब उचित अछि।

12. मैथिलीक नाटकक मैथिल प्रदर्शन हेबाक चाही [मुद्रित पृ. 73]

विषय : भाषायी रंगसत्ता आ स्थानीय अनुभवक प्रतिनिधित्वक प्रश्न उठैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : मैथिल प्रदर्शनक अर्थ रूढ़ संस्कृतिक चिह्नक प्रदर्शन नहि; जीवन-संवेदना आ भिन्न सामाजिक स्तरक सर्जनात्मक उपस्थिति होएबाक चाही।

13. नाट्य-प्रवृत्ति आ भाषाक रंगमंच [मुद्रित पृ. 77]

विषय : भाषायी रंगमंच आ नाट्यप्रवृत्तिक अन्तर्सम्बन्ध प्रमुख विषय अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : उच्चारित भाषा, देहभाषा, मंचीय लय आ स्थानीय बोलीक बहुलता पर ध्यान देब आवश्यक अछि।

14. रंगमंच : सत्य आ शिल्प [मुद्रित पृ. 80]

विषय : सत्यक रंगप्रतिनिधित्व आ शिल्पक स्वायत्तता बीच सम्बन्ध विषय बनैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : मंचक सत्य यथार्थक सीधा नकल नहि; नाट्यविन्यास आ अभिनयक माध्यमसँ निर्मित अनुभव अछि।

15. मैथिली नाट्यलेखन मे समाज-चेतना : 1960-1990 [मुद्रित पृ. 85]

विषय : निर्दिष्ट कालखण्डक नाट्यलेखन आ समाज-चेतनाक ऐतिहासिक सम्बन्धक अध्ययन अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : ऐतिहासिक निष्कर्ष लेल नाटक, प्रकाशन-वर्ष, प्रस्तुति आ आलोचनात्मक प्रतिक्रियाक अलग प्रमाण अपेक्षित अछि।

16. लेखन अभाव [मुद्रित पृ. 91]

विषय : नाट्यलेखनक अभाव अथवा अपर्याप्तताक समस्या पर प्रश्न अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : रचनाक संख्या, प्रस्तुतियोग्यता, प्रशिक्षण आ प्रकाशन-अवसरक अन्तर स्पष्ट केने बिना अभावक कारण तय नहि होइत अछि।

17. मैथिली रंगमंच पर कथ्यक प्रस्तुति [मुद्रित पृ. 96]

विषय : कथ्यक मंचानुकूल रचना आ प्रस्तुति विषय अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : पाठमे कथ्यक उपस्थितिसँ प्रदर्शनक प्रभाव सिद्ध नहि होइत; दृश्यगत क्रिया, समय, लय आ दर्शकक ग्रहणशीलता सेहो देखबाक चाही।

18. आधुनिक मिथिला मे रंगमंचक दशा-दिशा [मुद्रित पृ. 100]

विषय : आधुनिक मिथिलाक रंगपरिस्थिति आ भविष्यक दिशासम्बन्धी विमर्श अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : अभ्यास-स्थल, प्रशिक्षण, आर्थिक संरचना, दर्शक-निर्माण आ स्थानीय संस्था सभक प्रश्नकें कलात्मक बहससँ जोड़ब आवश्यक अछि।

19. कला आ मिथिला के कथा : विमर्श-भूमिका [मुद्रित पृ. 112]

विषय : मिथिलाक सांस्कृतिक स्थितिसँ कलाक सम्बन्ध पर विमर्शक भूमिका प्रस्तुत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : कलाक सामाजिक जीवनसँ सम्बन्धकें केवल गौरवक भाषणक रूपमे नहि, आलोचनात्मक अनुसन्धानक विषय बनाओल जाय।

20. संदर्भ कथा : संस्कृति, अपसंस्कृति आ प्रबुद्ध लोक [मुद्रित पृ. 118]

विषय : संस्कृति आ अपसंस्कृतिक नैतिक विभाजन तथा प्रबुद्ध लोकक भूमिकापर तर्क अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : संस्कृतिक मूल्यांकनमे वर्ग, लोकसम्बन्ध, कलाक स्वतन्त्रता आ नैतिक अधिकारक दावाक आलोचनात्मक परीक्षण जरूरी अछि।

रंगमंच

21. मैथिली नाटक मे जन-जीवनक अभिव्यक्ति [मुद्रित पृ. 127]

विषय : जनजीवनक रंगमंचीय प्रतिनिधित्वक प्रश्न अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : लोकजीवनक मंचनकें लोकसामग्रीक संग्रह मात्र नहि; सामाजिक संघर्ष आ स्वरक जीवन्त पुनर्रचना बुझबाक चाही।

22. मैथिली पत्रकारिता, साहित्य आ रंगमंच [मुद्रित पृ. 133]

विषय : साहित्य, पत्रकारिता आ प्रस्तुति बीच बौद्धिक संवादक सम्बन्ध अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : नाट्यसमालोचना आ समाचार-लेखनक भिन्न भूमिका रंगआन्दोलनक अभिलेखीकरणमे कतेक महत्वपूर्ण अछि, से प्रश्न उठैत अछि।

23. रंगमंच आ साहित्य : एक [मुद्रित पृ. 135]

विषय : नाट्यपाठ आ मंचीय कृतिक भिन्नता-साम्यक प्रश्न उठैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : नाटक साहित्यिक विधा सेहो अछि, मुदा रंगप्रयोगमे दृश्य, ध्वनि आ अभिनेता स्वतंत्र अर्थनिर्माण करैत छथि।

24. रंगमंच आ साहित्य : दू [मुद्रित पृ. 138]

विषय : पूर्ववर्ती बहसक दोसर पक्ष रंगविधा आ साहित्यक सम्बन्धकें विस्तारित करैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : दूनू लेखकें संयुक्त बहसक रूपमे पढ़बा संग अलग-अलग तर्कक परीक्षण अपेक्षित अछि।

25. रंगमंच आ साहित्य : रंगमंच [मुद्रित पृ. 140]

विषय : रंगमंचक स्वतन्त्र कलात्मक अस्तित्वकें केन्द्रमे रखैत चर्चा अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : मंचीय अर्थ-उत्पादनक सामूहिकता—लेखक, निर्देशक, अभिनेता, तकनीकी सहयोगी आ दर्शक—विशेष ध्यान माँगैत अछि।

26. नाट्य-प्रतियोगिता [मुद्रित पृ. 142]

विषय : प्रतियोगिताक भूमिका आ सम्भावित सीमा रंगसंगठनसँ जोड़ि देखल जा सकैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : पुरस्कारकें गुणात्मक मूल्यांकनक एकमात्र कसौटी नहि मानि दीर्घकालीन अभ्यास आ प्रयोगक मूल्य देखबाक जरूरत अछि।

27. पहिचानक प्रक्रिया [मुद्रित पृ. 145]

विषय : कलात्मक पहिचानक निर्माण एक दीर्घ प्रक्रिया होएबाक प्रश्न विषय अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : अस्मिता आ प्रयोगक बीच सहयोग अथवा तनावक सूक्ष्म परीक्षण आवश्यक अछि।

28. के? [मुद्रित पृ. 148]

विषय : लघु प्रश्नात्मक शीर्षक रंगसमीक्षामे कर्ता, पहचान वा उत्तरदायित्वक सम्भावित बहस खोलैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : शीर्षक मात्रसँ विशिष्ट कथ्य निश्चित नहि कएल जा सकैत; पूर्ण पाठक पंक्ति-स्तरीय मिलान एहि अंश लेल विशेष आवश्यक अछि।

29. नाट्य-स्वप्न आ विकल्प [मुद्रित पृ. 151]

विषय : रंगभविष्य, आकांक्षा आ व्यवहार्य विकल्पक सम्बन्ध विषय अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : आदर्शवादी संकल्पक सँग ओकर कार्यान्वयनक सामाजिक एवं संस्थागत शर्त देखल जाय।

30. नाटकक बहाने किछु 'नाटक' [मुद्रित पृ. 154]

विषय : नाट्यप्रयोग आ रंगसंस्कृतिक अंतर्विरोध पर विडम्बनात्मक आलोचनाक सम्भावना अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : शीर्षकक व्यंग्यार्थकें लेखकीय तर्कक विकल्प बनबैत निष्कर्ष नहि देबाक चाही।

31. मैथिली रंगमंच सँ अपेक्षा [मुद्रित पृ. 158]

विषय : रंगकर्मसँ अपेक्षा आ आवश्यक परिवर्तन विषय बनैत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : अपेक्षाकें स्पष्ट कसौटी—लेखन, प्रस्तुति, दर्शक, संस्थान, प्रशिक्षण—मे बाँटि देखब फलदायी अछि।

32. रंगमंच-रंगत्व, मैथिली रंगमंच [मुद्रित पृ. 161]

विषय : रंगत्वक सौन्दर्यात्मक आ मैथिली रंगमंचक विशिष्ट प्रश्न आमने-सामने अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : रंगत्वक अर्थ अभिनय, मंच-समय, दृश्य-सम्बन्ध आ सामूहिक अनुभवक जटिल संयोजनसँ व्याख्यायित होइत अछि।

33. अपना रंग कथा [मुद्रित पृ. 166]

विषय : आत्मपरक रंगअनुभव आ रंगकर्मक कथा शीर्षकसँ संकेतित अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : अनुभवक व्यक्तिगत साक्ष्यकेँ सामान्य इतिहासक प्रत्यक्ष पर्याय नहि मानल जाय।

34. पमार : प्रत्येक समुदाय पारम्परिक नाट्य [मुद्रित पृ. 169]

विषय : समुदायविशेषक पारम्परिक रंगविधा विषयसूचीमे उल्लिखित अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : नाम आ पाठक सटीक वाचनक बादे सामाजिक उत्पत्ति अथवा विधागत विशेषतापर निश्चित दावा देब उचित होयत।

35. बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-१ [मुद्रित पृ. 171]

विषय : रंगविषयक रचनात्मक काव्यात्मक उच्चारणक प्रथम शृंखला अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : एहि सामग्रीकेँ नाट्यनिबन्धक रूपमे नहि, कविता/लघु रचनाक अलंकार, स्वर आ रंगबिम्बक दृष्टिसँ देखबाक चाही।

36. बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-२ [मुद्रित पृ. 176]

विषय : रंगविषयक काव्यात्मक शृंखलाक दोसर अंश अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : पूर्ववर्ती कवितासँ विषयगत सम्बन्धक संग स्वतंत्र पाठरूपक सावधानी जरूरी अछि।

37. बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-३ [मुद्रित पृ. 185]

विषय : रंगकविताक तेसर अंश अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : प्रस्तुतिक सांकेतिक भाषा आ कविता बीच विधागत सीमा ध्यानमे राखल जाय।

38. बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-४ [मुद्रित पृ. 193]

विषय : रंगकविताक चारिम अंश अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : हर अंशक अलग पाठ-अध्ययनसँ आवृत्ति, बदलाव आ अभिव्यक्तिक लय पकड़ल जा सकैत अछि।

39. बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-५ [मुद्रित पृ. 202]

विषय : शृंखलाक पाँचम अंश अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : पाँचो रचनाकेँ गिना कऽ अध्ययनमे स्थान देब जरूरी; शृंखलाक अन्तिम संरचनाक निष्कर्ष लेल मूल पाठ मिलान अपेक्षित अछि।

बातचीत

40. सुधांशु शेखर चौधरीक नाटक [मुद्रित पृ. 213]

विषय : नाटक आ रंगकर्मसँ सम्बद्ध व्यक्तित्वपर केन्द्रित बातचीत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : बातचीतक मत आ जीवनीगत तथ्यक बीच भेद रखैत वक्ता, प्रसंग आ प्रश्नोत्तरक रूपक परीक्षण उचित अछि।

41. जीवन-रंगमंच अपना : प्रकाश नाटकक जिनगी [मुद्रित पृ. 219]

विषय : जीवन-अनुभव आ रंगअनुभवक आपसी सम्बन्धक बातचीत अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : जीवनवृत्तात्मक कथनक ऐतिहासिक सत्यापनक लेल बाहरी अभिलेख स्वतंत्र देखबाक आवश्यकता अछि।

42. ओहो! श्रीकान्त जी! [मुद्रित पृ. 226]

विषय : श्रीकान्तजी विषयक स्मरण अथवा संवादात्मक सामग्री अनुक्रमणिकामे अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : संवादक आत्मीय स्वरकेँ सूचना, मूल्यांकन आ स्मृतिक अन्तरक संग पढ़बाक चाही।

43. पं. गोविन्द झाक नाटक मे लोक तत्व [मुद्रित पृ. 230]

विषय : पं. गोविन्द झाक नाटकमे लोक तत्त्वक उपस्थिति विचाराधीन अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : लोकतत्त्वक मूल्यांकन लेल कथानक, गीत, भाषा, पात्र आ रंगगत प्रयोगमे ओकर भूमिका अलग-अलग देखबाक चाही।

44. खेल आ नाच : रंगमंचक नाट्य [मुद्रित पृ. 234]

विषय : खेल, नाच आ रंगमंचक सम्बन्धक प्रश्न पर अन्तर्विमर्श अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : खेलक स्वतःस्फूर्तता आ नाट्यरचनाक अनुशासन बीच पारस्परिकता उपयोगी आलोचनात्मक प्रश्न अछि।

45. मैथिली रंगमंचक भविष्य [मुद्रित पृ. 251]

विषय : ग्रन्थक अन्तिम विषय मैथिली रंगमंचक भावी सम्भावनासँ जुड़ल अछि।

आलोचनात्मक विवेचन : अन्तिम अंशकेँ समग्र पोथीक रंगदृष्टिसँ जोड़ि संस्थागत तथा सर्जनात्मक सम्भावनाक कसौटीपर देखल जाय।

समेकित मूल्यांकन : कृति जे प्रश्न उठबैत अछि

लोकनाट्य आ आधुनिक नाट्यरूप

ग्रन्थक पहिल खण्ड लोकाभिनयकेँ किनारक मनोरंजन नहि मानि मैथिली रंगपरम्पराक मूल स्रोतक रूपमे बुझबाक अवसर दैत अछि। कीर्तनिया आ सलेहेस जकाँ रूपमाध्यमक सम्बन्ध मौखिक स्मृति, संगीत, भूमिका-निर्माण, सामाजिक संरचना आ दर्शकक सामूहिक सहभागितासँ अछि। ई सामग्री रंगइतिहासक एकरेखीय, केवल मुद्रित साहित्य-आधारित आख्यानकेँ प्रश्नांकित करैत अछि।

भाषिक अस्मिता आ रंगकर्म

मैथिली रंगमंचक विशिष्टताक खोजमे भाषिक अस्मिता केन्द्रीय विषय अछि। तथापि रंगमंचक भाषा केवल संवाद-भाषा नहि; मंचीय गति, ध्वनि, गीत, विराम, उच्चारण आ दर्शक-सम्बन्ध सेहो अछि। ‘निजत्व’क आग्रहकेँ सामाजिक विविधतासँ जोड़ल नहि गेल तँ अस्मिताक धारणा संकीर्ण भऽ सकैत अछि।

नाट्यपाठ आ प्रस्तुति

लेखकीय पाठ एकटा सम्भावना अछि; अभिनेता, निर्देशक, मंच-सज्जा, प्रकाश, ध्वनि, रिहर्सल आ दर्शकक समक्ष ओकर सम्पूर्ण रंगरूप बनैत अछि। साहित्यिक मापदण्डकें मंच-प्रक्रियाक स्वतन्त्र कसौटीक संग राखि देखब एहि संग्रहक बहसकें अधिक सुसंगत करैत अछि।

इतिहासक प्रमाण आ अनुभवक स्थान

ग्रन्थमे विभिन्न समयमे लिखल आलेख संकलित होएबाक कारण तत्कालीन सांस्कृतिक प्रश्नक परत उपस्थित अछि। अनुभवक प्राथमिक साक्ष्य मूल्यवान होइत अछि, मुदा पात्र, संस्था, तिथि आ प्रस्तुतिक दावाक निष्पक्ष इतिहास लिखबा लेल प्रदर्शन-सूची, पत्रिका, समीक्षा, नाट्यपाठ आ साक्षात्कारक मिलान आवश्यक अछि।

रंगसंस्था, प्रशिक्षण आ दर्शक

कला-संस्थाक अभाव वा सामर्थ्यक प्रश्नकें केवल कलाकारक इच्छाशक्तिसँ नहि समझल जा सकैत। अभ्यास-स्थल, आर्थिक संसाधन, दर्शक-संवाद, महिला आ नवोदित कलाकारक सहभागिता, नाट्यलेखनक प्रसार आ आलोचनात्मक अभिलेखसम्पदा सेहो ध्यानक विषय छथि।

आलोचनात्मक स्वर आ शैली

पुस्तकक आरम्भिक आलेख सभमे विचारप्रधान, प्रतिप्रश्नमूलक आ रंगकर्मक पक्षधर भाषिक स्वर देखाइत अछि। लोक आ शास्त्र, परम्परा आ आधुनिकता, कलाक सत्य आ प्रदर्शनक शिल्पक द्वन्द्वसँ आलोचनाक ऊर्जा बनैत अछि। मुदा मूल्यनिर्णयक प्रामाणिकताक लेल स्पष्ट उदाहरण आ विमर्शक प्रतिपक्षकें समान गंभीरतासँ राखब उपयोगी होयत।

संकलन-विधाक सीमा

विभिन्न समय आ प्रसंगक लेखकें एक जिल्दमे आनब सामग्रीक बहुलता दैत अछि, मुदा आवृत्ति, स्वरभेद आ अवधारणात्मक असंगति सम्भव अछि। एहि बिन्दुपर लेख सभक पूर्व-प्रकाशन-विवरण, रचनाक कालक्रम आ पाठभेदक तालिका तैयार कएने भविष्यक संस्करणक अकादमिक उपयोगिता बढ़त।

ग्रन्थक आलेख-सूची

मूल पोथीमे संकलित सभ ४५ आलेख आ विषयक नाम तथा हुनकर आरम्भिक मुद्रित पृष्ठाङ्क एहि सूचीमे देल गेल अछि।

क्रम	आलेख/विषय	पृष्ठ
1	मिथिलाक संस्कृति आ लोक नाट्य	13
2	नाच आ किरतनिया : स्वरूप आ संभावना	21
3	लोक गाथाक नाट्य रूप	25
4	संक्रमणक क्रम मे एक टा लोक नाट्य : सलेहेस नाच	31
5	किरतनिया नाट्य	36
6	किरतनियाक अवयव	40
7	समकालीन भारतीय रंगमंच आ मैथिली	47
8	समकालीन मैथिली रंगमंच : स्थिति आ अपेक्षा (निर्देशक दृष्टि मे)	50
9	निजत्व आ मैथिली रंगमंच	54
10	मैथिली रंगमंचक स्वरूप निर्धारण : संदर्भ जननाट्य	59
11	रंगमंच : साध्य, साधन आ धर्म	64
12	मैथिलीक नाटकक मैथिल प्रदर्शन हेबाक चाही	73
13	नाट्य-प्रवृत्ति आ भाषाक रंगमंच	77
14	रंगमंच : सत्य आ शिल्प	80
15	मैथिली नाट्यलेखन मे समाज-चेतना : 1960-1990	85
16	लेखन अभाव	91
17	मैथिली रंगमंच पर कथ्यक प्रस्तुति	96
18	आधुनिक मिथिला मे रंगमंचक दशा-दिशा	100
19	कला आ मिथिला के कथा : विमर्श-भूमिका	112
20	संदर्भ कथा : संस्कृति, अपसंस्कृति आ प्रबुद्ध लोक	118
21	मैथिली नाटक मे जन-जीवनक अभिव्यक्ति	127
22	मैथिली पत्रकारिता, साहित्य आ रंगमंच	133
23	रंगमंच आ साहित्य : एक	135
24	रंगमंच आ साहित्य : दू	138
25	रंगमंच आ साहित्य : रंगमंच	140
26	नाट्य-प्रतियोगिता	142
27	पहिचानक प्रक्रिया	145
28	के?	148
29	नाट्य-स्वप्न आ विकल्प	151
30	नाटकक बहाने किछु 'नाटक'	154

क्रम	आलेख/विषय	पृष्ठ
31	मैथिली रंगमंच सँ अपेक्षा	158
32	रंगमंच-रंगत्व, मैथिली रंगमंच	161
33	अपना रंग कथा	166
34	पमार : प्रत्येक समुदाय पारम्परिक नाट्य	169
35	बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-१	171
36	बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-२	176
37	बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-३	185
38	बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-४	193
39	बुलेटिन भेट : रंगमंचक कविता-५	202
40	सुधांशु शेखर चौधरीक नाटक	213
41	जीवन-रंगमंच अपना : प्रकाश नाटकक जिनगी	219
42	ओहो! श्रीकान्त जी!	226
43	पं. गोविन्द झाक नाटक मे लोक तत्व	230
44	खेल आ नाच : रंगमंचिक नाट्य	234
45	मैथिली रंगमंचक भविष्य	251

उपसंहार

‘रंगायन’क आलोचनात्मक महत्त्व ओकर विविध सामग्री आ प्रश्नोन्मुख रंगदृष्टिमे निहित अछि। लोकनाट्यक स्रोतसँ आधुनिक रंगमंचक अपेक्षा धरि, ई संग्रह मैथिली रंगकर्मकेँ कला, भाषा, समुदाय आ सार्वजनिक चिन्तनक संयुक्त क्षेत्रमे राखैत अछि। पाठक लेल ई विमर्श-मानचित्रक समान उपयोगी अछि; शोधकर्ता लेल ई प्राथमिक सामग्रीक मार्गदर्शक सेहो।

विस्तृत ग्रन्थसूची

आलोच्य मैथिली पोथीसभ तथा अध्ययनमे उल्लिखित साहित्यशास्त्रीय, रंगसिद्धान्तात्मक आ तुलनात्मक अवधारणासँ सम्बद्ध मुद्रित ग्रन्थ। प्रकाशन-विवरण उपलब्ध निर्दिष्ट संस्करणक अछि; अवधारणात्मक तुलना स्वतंत्र प्रत्यक्ष प्रभावक प्रमाण नहि मानल जाय।

क. मूल आलोच्य ग्रन्थ

१. कुणाल। कुसमा-सलहेस आ अन्य छओ गोठ नाटक। पहिल संस्करण (सजिल्द), २०२१। गाजियाबाद : अंतिका प्रकाशन प्रा. लि. ISBN 978-93-88799-77-5।
२. कुणाल (सम्पा.)। विद्यापतिक १०० पद : जुवती भए जनमए जनु कोइ। प्रथम संस्करण, २०२३। गाजियाबाद : अंतिका प्रकाशन प्रा. लि. ISBN 978-81-962063-0-7।
३. कुणाल। रंगायन (नाट्य आलोचना)। प्रथम संस्करण, २०२३। अंतिका प्रकाशन प्रा. लि. ISBN 978-93-91925-67-3।

ख. भारतीय काव्यशास्त्र आ पाठसमीक्षा

१. भरतमुनि। The Nāṭyaśāstra। अनुवाद : Manomohan Ghosh। कलकत्ता : Asiatic Society of Bengal, १९५१।
२. आनन्दवर्धन। Dhvanyāloka of Ānandavardhana। सम्पादन एवं अनुवाद : K. Krishnamoorthy। दिल्ली : Motilal Banarsidass, द्वितीय संस्करण, १९८२।
३. कुन्तक। The Vakrokti-jīvita of Kuntaka। सम्पादन एवं अनुवाद : K. Krishnamoorthy। प्रथम संस्करण, १९७७। धारवाड़ : Karnatak University।

ग. रंगसिद्धान्त, रंगशिल्प आ सांस्कृतिक अध्ययन

१. Aristotle. Poetics. Translated by Malcolm Heath. Penguin Classics, 1997.

२. Bertolt Brecht. *Brecht on Theatre: The Development of an Aesthetic*. Edited and translated by John Willett. New York: Hill and Wang, first American edition, 1964.
३. Lionel Abel. *Metatheatre: A New View of Dramatic Form*. New York: Hill and Wang, first edition, 1963.
४. Mikhail Bakhtin. *Rabelais and His World*. Translated by Hélène Iswolsky. Bloomington: Indiana University Press, Midland Book edition, 1984.
५. Konstantin Stanislavsky. *An Actor Prepares*. Translated by Elizabeth Reynolds Hapgood. New York: Theatre Arts, Inc., 1936.
६. Richard Schechner. *Performance Theory*. Revised and expanded edition. New York: Routledge, 1988.
७. Erika Fischer-Lichte. *The Transformative Power of Performance: A New Aesthetics*. Translated by Saskya Iris Jain. London and New York: Routledge, 2008.
८. Hans-Thies Lehmann. *Postdramatic Theatre*. Translated by Karen Jürs-Munby. London and New York: Routledge, 2006.
९. Eli Rozik. *The Roots of Theatre: Rethinking Ritual and Other Theories of Origin*. First edition. Iowa City: University of Iowa Press, 2002.
१०. Eli Rozik. *Generating Theatre Meaning: A Theory and Methodology of Performance Analysis*. Brighton: Sussex Academic Press, 2008.

घ. तुलनात्मक दर्शन आ अन्य रंगपरम्परा

१. Martin Buber. *I and Thou*. Translated by Walter Kaufmann. New York: Charles Scribner's Sons, 1970.
२. Hannah Arendt. *The Human Condition*. Second edition; introduction by Margaret Canovan. Chicago: University of Chicago Press, 1998.
३. Shimon Levy. *The Bible as Theatre*. Brighton: Sussex Academic Press, illustrated edition, 2000.
४. Elizabeth Wichmann. *Listening to Theatre: The Aural Dimension of Beijing Opera*. Honolulu: University of Hawaii Press, 1991.
५. Catherine C. Swatek. *Peony Pavilion Onstage: Four Centuries in the Career of a Chinese Drama*. Ann Arbor: Center for Chinese Studies, University of Michigan, first edition, 2002.

नित नवल कुणाल

लोकनाट्य आ शास्त्रीय रंग-परम्पराक संधि-स्थल पर ठाढ़ कुणालक मैथिली नाट्य-संसारपर गजेन्द्र ठाकुरक साहित्यिक समीक्षा — विदेहक सम्पादनमे।



समीक्षित कृति

- ०१ चालिस चोर आ गोनू झा उर्फ ज्ञान झाक खिस्सा
- ०२ बिदापत [लोकनाट्य शिल्प-आधारित नाटिका]
- ०३ कुसमा-सलहेस
- ०४ प्रेम-प्रतिज्ञा उर्फ श्रुवावतीक जय!
- ०५ विश्वासक शक्ति उर्फ सुकन्याक विवाह
- ०६ प्रेमक विस्तार उर्फ श्वेताक आविष्कार
- ०७ प्रेमक परीक्षा उर्फ सुप्रभा आ अष्टावक्र
- ०८ विद्यापतिक १०० पद
- ०९ रंगायन : कुणाल



विदेह वेबसाइट

<https://www.videha.co.in/>



विदेह ई-जर्नल (GitHub)

<https://videha-ejournal.github.io/videha/>

विदेह • प्रथम मैथिली पाक्षिक ई-पत्रिका • ISSN 2229-547X

© गजेन्द्र ठाकुर / प्रीति ठाकुर, २०२६ • सर्वाधिकार सुरक्षित